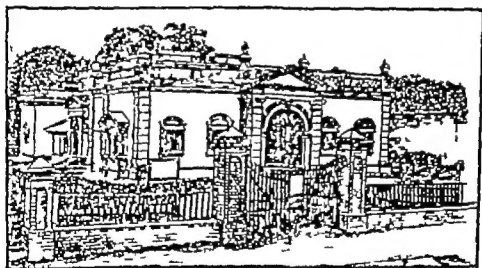


महात्मा जगन्नाथ लिखित

Dr Chhannulal Memorial Series No 3

छूत वाले रोग और उनसे बचने का उपाय।

श्रीमती जगरानी देवी लिखित ।



काशी नागरीप्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित ।

मेडिकल् हाथ् मेष में बाबू यशोपीमशद द्वारा मुद्रित हुआ ।

भूमिका ।

इस "छूतवाले रोग और उनसे बचने के उपाय" नामक पुस्तक को काशी की नागरीप्रचारिणी सभा ने पारितोषिक देकर निर्माप्य कराया है । इसमें सन्देह नहीं कि सभा ने ऐसी प्रयोजनीय पुस्तक की रचना करवाकर ग्रहस्पमात्र का बड़ा ही उपकार किया । नागरी प्रचार के साथ ही साव स्वास्थ्यप्रचार यही कहावत चरितार्थ करता है, कि—

चलो सखी तहँ जाइए, जहाँ बसै प्रवरान ।

गोरस बँचत हरि मिलैं, एक पन्थ दुइ काल ॥

सच तो यह है कि छूतवाले स्यामक रोगों से बचने की आवश्यकता प्रत्येक प्राणिमात्र को है ऐसी आवश्यकता की पूर्ति काशी की नागरीप्रचारिणी सभा ने की है, अतः सभा तथा सभा के सभासदों को कोटिश धन्यवाद है ।

इस पुस्तक की रचना एक सद् कुल की आर्य महिला द्वारा हुई है । लेखिका महाशया का वैद्यक विद्या से घनिष्ठ सम्बन्ध है । चौदह वर्ष से वे इस विद्या में अनुभव प्राप्त कर रही हैं । यह उनका द्वितीय ग्रन्थ है । प्रथम ग्रन्थ उन्होंने १९०७ में "सीरी छुपार" लिखा था जिसे नागरीप्रचारिणी सभा ने उपयोगी न मानकर लौटा दिया । किन्तु लेखिका महाशया का उत्साह सभा की अस्वीकृति से भग्न नहीं हुआ । वे पुनः नवोत्साह से उत्साहित होकर इस पुस्तक की रचना में तत्पर हुईं ।

प्रचन तो इस विद्या के अनुसन्धियों को रोगियों से ही अवकाश मिलना कठिन है । द्वितीय सरकारी सेवा आज दिन

आगरा रॉड औरोडान सेटिया

इतनी कठोर हो रही है कि ग्रन्थादि लिखने पढ़ने की कौन कहे, रोगियों के विषय में भी भ्रमन करने का समय नहीं मिलता। इस पुस्तक की लेखिका महाशया ने भी उपर्युक्त कारणों के धर्मागत होने से इस पुस्तक के लिखने का भार मेरे ऊपर रक्खा। साथ ही गुप्तेन्द्रिय विषयक (विनि रिक्षल द्विजीक्षण) छूतवाले रोगों के लिखने का भी अनु-रोध मुझ ही से किया।

लेखिका महाशया की इच्छानुसार गुप्तेन्द्रिय विषयक छूतवाले रोगों पर मैंने स्वयं लिखा, शेष लेख लेखिका महाशया ने स्वयं लिखवाया है।

लेखिका महाशया ने निजनिर्मित लेख में कुछ तो निज अनुभव की, और कुछ अँगरेजी हिन्दुस्तानी पुस्तकों में से चुनी हुई, बातें ही लिखवाई हैं। कहीं कहीं पर अँगरेजी तथा हिन्दुस्तानी समाचारपत्रों में निकले हुए हाकूरी विषयक लेखों का भी सारांश लिया है।

छूतवाले रोगों के विषय में अब तक जो कुछ अनुभव प्राप्त हुआ है, तथा अधिक दिवस के बादविवाद के उपरान्त जो सिद्धान्त हुए तथा पुराने हाकूरी ने स्थिर किया है उसी सिद्धान्त के आधार पर इस पुस्तक की रचना हुई है। रोगों के कारणों, लक्षणों तथा निदानों में जो कुछ परिवर्तन अब तक हुआ है, और चिकित्साओं तथा औपचर्यों में जो भी सर्व सम्मति अब तक पाई गई है, उन पर पूर्ण ध्यान रक्खा गया है।

जो औपचर्या प्रत्येक रोग के साथ लिखी गई हैं उनमें से कुछ तो एक बहुत ही अनुभवी हाकूरी की पुस्तक से भी

गई हैं, और कुछ लेखिका ने निज अनुभव द्वारा, जिन रोगों में निम्हें उक्त पाया है, लिखी हैं। इस पुस्तक में लिखी हुई औषधियों का व्यवहार करते समय इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि रोग की क्या दशा है, रोगी की क्या दशा है, औषधियों का उस पर क्या प्रभाव पड़ रहा है।

ध्यान रहे कि रोगों की दशा प्रत्येक रोगी में एक सी नहीं पाई जाती, अर्थात्—बल, काल, स्वभाव तथा अवस्था के अनुसार रोगों के लक्षणों में विविध परिवर्तन हुआ करते हैं। अस्तु निश्चित तथा अनुभूत औषधियाँ भी लक्षणों के परिवर्तन के कारण लाभकारी नहीं होतीं, ऐसे समय योग्य डाक्टर की सम्मति की आवश्यकता होती है, अतः किसी अनुभवशील डाक्टर की सम्मति से औषधियों का प्रयोग विशेष लाभकारी होगा।

प्रत्येक रोग की चिकित्सा में कुछ ऐसे अनुभवसिद्ध मुखे लिखे गए हैं जो उस रोग में प्रायः उपपन्न होते हैं। यदि उन मुखों को—उन उन रोगों में जिन में उनका व्यवहार उपयोगी बतलाया गया है—बानार में, समझ कर व्यवहार करें तो कोई हानि नहीं, प्रत्युत साठ की सदी लाभ ही लाभ है।

औषधियों के तौल नाप का विमल भी इस पुस्तक में दे दिया गया है जिस से डाक्टरों तौल नाप जानने में सुविधा होगी। मुखों का वजन ठीक तुरण रोगी के लिए है। बृद्ध तथा बालकों को उनकी अवस्थानुसार मात्रा कम करके देना उचित है।

कल्पना कीजिए कि—एक तुरण पुरुष के लिये किसी

औषधि का प्रमाण हाकटरी तौल के अनुसार एक ग्राम है तो
 १ वर्ष के बालक के लिये $\frac{1}{2}$ वां भाग, अर्थात् ५ घेन होगा ।
 इसी प्रकार दो वर्ष के बालक के लिये $\frac{2}{3}$ वां भाग, ७ $\frac{1}{2}$ घेन
 तीन वर्ष के बालक के लिये $\frac{3}{4}$ वां भाग, १० घेन
 चार " " " " " $\frac{4}{5}$ वां भाग, १५ घेन
 सात " " " " " $\frac{1}{2}$ घरा भाग, २० घेन
 चौदह " " " " " $\frac{2}{3}$ भाग ३० घेन
 बीस " " " " " $\frac{3}{4}$ घरा भाग, ४० घेन
 इक्कीस " " " " " पूरा प्रमाण ६० घेन
 (१ ग्राम) जानना चाहिए ।

यह ठयौरा समझ लेने से अवस्थानुसार औषधियों का
 प्रयोग सभी कर सकते हैं ।

छूतवाले रोगों के क्रम को जानने के लिये एक क्रमा-
 नुसार रोगों की सूची दी गई है, उससे प्रत्येक रोगों का
 स्वभाव सूचित होता है, अर्थात् कौन रोग किस तथा किस
 स्वभाव का है और उसे हिन्दुस्तानी तथा अंगरेजी में किस
 किस नाम से सम्बोधन करते हैं । छूतवाले रोग इस पुस्तक
 में प्रायः वेही लिये गये हैं जो वास्तव में छूत से उत्पन्न
 होते और जो बड़े भयङ्कर तथा स्वतन्त्र प्रकृति के हैं ।

अन्यान्व रोग—जो छूत वाले रोगों के फल से उत्पन्न होते
 हैं,—उनका केवल नाम मात्र उल्लेख किया गया है, फिर
 भी यदि खन तथा कोई रोग छूट गया हो और उसे कोई
 महाशय अनुपह करके इसे सूचित करेंगे तो आगे धन्यवाद
 पूर्वक उसे सम्मिलित करके त्रुटि निवारण कर देने की चेष्टा
 की जायगी ।

लेखिका महाशया का एक अपूर्व तथा विचारणीय सिद्धान्त अन्त में दिया गया है, वह "मक्खियो द्वारा फैलने वाले छूत वाले रोग" है। यद्यपि अभी हाल में डाकूरी महासभा बम्बई ने अपना यह विचार प्रकट किया है कि मक्खियों द्वारा उत्पन्न होने वाले रोग केवल हैजा, संप्रहणी, और अतिसार हैं तथापि लेखिका महाशया का मत डाकूरी महासभा से निराला है। डाकूरी महासभा के मत से दोही चार रोगों की उत्पादक मक्खियाँ होती हैं किन्तु लेखिका के मत से सम्पूर्ण छूतवाले रोगों की उत्पादक मक्खियाँ ठहरती हैं।

अनुभव किसी के घाट में नहीं पड़ा है, और न यही कह सकते हैं कि अनुभव अनुभव कर सकता है अनुभव नहीं। इतिहासों से सिद्ध है कि साधारण से भी साधारण अनुभवों ने बड़े बड़े आश्चर्यदायक अनुभव सहजही प्राप्त किये हैं, अस्तु लेखिका महाशया का दर्जा कम होने पर भी उनका महत्त्व तथा नव सिद्धान्त विचारने योग्य है।

हम यह नहीं कह सकते हैं कि उनका सिद्धान्त सत्य वा मिथ्या है। हमारा तो यही कहना है कि इस पुस्तक के पाठकनाम उनके नवसिद्धान्त को खूब सूक्ष्म दृष्टि से देखें, और विचारें कि कहा तक सत्य तथा कहा तक मिथ्या है। यदि विचारवानों के सम्मुख लेखिका जी का नव सिद्धान्त सत्य ठहरा, तब तो उन की विलक्षण बुद्धि तथा अपूर्व अनुभव की जितनी प्रशंसा की जाय वोही है।

लेखिका महाशया इस स्थान पर कई महापुरुषों की कवचता प्रकाश करना चाहती हैं।

मध्य से प्रथम वे पूज्यपाद राय बहादुर श्रीयुक्त गुरु
वर हाकूर एन्० सी० चक्रवर्ती तथा गुरुवर राय बहादुर
हाकूर, अमृतसरतल वैसाक महोदयों की कृतज्ञ हैं; जिनकी
कृपा तथा प्रसाद से वे इस ग्रन्थ को लिख सकीं। लेखिका
महाशया ने इस विद्या का अध्ययन सपर्युक्त महोदयों से
किया है। अस्तु चन्हीं के लेखक नोटो तथा पुस्तकों आदि
का अधिक आश्रय लिया है।

इनके अतिरिक्त श्रीयुक्त हाकूर नमनमयनाथ ब्रह्म
रिदोयर्ह-असिस्टेंट सरजन तथा हाकूर अक्षयकुमार मजूम-
दार मेडिकल प्रेक्टिशनर की भी वे पूर्ण कृतज्ञ हैं। सपर्युक्त
महोदयों के भी नोट जहाँ तहाँ इस पुस्तक में, सम्मिलित
किये गये हैं।

लेखिका महाशया आशा करती हैं कि, इस पुस्तक के
पठनपाठन से पाठक तथा पाठिकाओं को अवश्य कुछ लाभ
होगा। यदि ऐसा हुआ तो वे अपना अम सफल समझेंगी

मिर्जापुर }
३१ मार्च १९०९ ई० }

जी० एल्० वपाध्याय
(श्रीलाळ कवि)

श्री हरि ।

छूतवाले रोग और उनसे बचने का उपाय ।

यह शरीर मन्दिर एक अनेक कारीगर के हाथ का मनुष्य है । इसकी अद्भुत कारीगरी पर सत्तर सुग्घ है । आधा क्याही भनूठा जहाऊ मन्दिर है । इस मन्दिर में निवास करने की इच्छा देवताओं की भी रहती है । देवता गण भी सुरमुलोक में जन्म ले कर इस जहाऊ मन्दिर का सुख अनुभव करना चाहते हैं । इन सुन्दर सुझावने जहाऊ मन्दिर को देख कर रोग रूपी यात्री मोहित हो जाते हैं । इन यात्रियों की कथा बड़ी विचित्रण है । कोई २ ऐसे यात्री इसमें आ टिकते हैं जो निकलने से भी नहीं निकलते । चाहे जितना कुमलाइये, घनकाइये वा औषधियो द्वारा सेंट पूजा कीजिये, उन्हें समाइए, किन्तु वे कभी नहीं सामने के । वे तो यही चाहते हैं कि आलम्नइन मन्दिर में हमारा ही निवास रहे और अन्य कोई इसके चयनरे पर भी न बैठे । कोई २ यात्री जो कई बार बरों आ कर इन में ठहरे हैं, वे फिर तक में बैठे रहते हैं, जहा देखा कि मन्दिर खाली हुआ चट फिर घूरा पड़े । कभी कभी सले मानुओं का भी इन मन्दिर में हारा पड़ना है । जो एक दो अथवा तीन रात से अधिक्त नहीं टिकते । किमी २ का तो रात ही भर का जागा रहना है । प्रातः होते ही वे अपनी राह घरते हैं । कोई २ छाही यात्री भी होते हैं, जो जयतक चाहते हैं तबतक गिहर निवास करते हैं किन्तु जब निकलने लगते हैं तो कहीं घूक, कहीं खलार, कहीं मल, कहीं मूत्र आदि कर, मन्दिर को अपवित्र कर देते हैं । कोई

२ खिडकिपा, दरवाजे, कहीं और तख्ता को तोड़ फीट कर तब पिछ छोड़ते हैं । कोई २ महात्मा तो इसका मूछ खट करने में ही प्रसन्न होते हैं ।

इन उपर्युक्त यात्रियों के अतिरिक्त और भी बहुत सी बछाए इस मन्दिर के मस्तक पर चीलसी मेंहराती हैं । यथा शरदी रूपी मूसे, गरमी रूपी चूसें वायु रूपी मोमा और विषरूपी चुन आदि लिनकी करतूनी से इस मन्दिर की नीच पोली दीवारें ज़र २ तथा कहीं क़िवाड़े चुन सह कर बरबाद हो जाते हैं ।

इन सन्तो में भयकर "छूत" रूपी भूबोल है । जिस प्रकार भयकर भूकम्प आन कर बड़े २ दूढ़ दुर्गों को आन की आन में धरती पर झुला देता है । उसी प्रकार छूत भूकम्प से भी बड़े २ मज़बूत शरीर मंदिर देखते २ छूमन्तर होजाते हैं । सब पूछो तो सच्चा जादू छूनही है । इस जादू का कोई भेद नहीं पाता और न इसके निवारण का कोई सम्प्र ही है । जैसे हरे मरे वा फूले फले वृक्ष तथा कोनल २ पौधो का सत्यानाश पाळा किया करता है उसी प्रकार कोनल २ बच्चे तथा जवानो का सत्यानाश छूत करती है । माना रोगो की भांति छूत को कहना चाहिए क्योंकि एक छूनवाले रोगसे सैकड़ों अन्य प्रकार के रोग उत्पन्न होते हैं जो शरीर में फैल कर जीवन के लाले हाथ देते हैं ।

छूत की परिभाषा ।

"छूत" एक प्रकार का अलस धाण है । जिस का विष शरीर की बनावटों में घुसकर भांति २ के "छूतवाले रोग" पैदा करता है । इसके आक्रमण (हमला) करने के तीन मार्ग

हैं । पहिला वायु द्वारा, दूसरा स्पर्श द्वारा, तीसरा भोजन और पानी द्वारा । पहिले को “इन्फेक्शस्” Infectious दूसरे को “कन्टेजस्” Contagious और तीसरे को “फोनाइटिस” Fomites जगरेजी में कहते हैं । जब छूत का असर एक माघ यक्षुत से मनुष्यो पर और यक्षुत से देशो में प्रगट हो तो “एपिडेमिक्” Epidemic, जब एकही स्थान में स्थिर रहे तो “एन्डेमिक्” Endemic, और जब एक ही माघ रोगी हो तो “स्पोरेडिक्” Sporadic कहते हैं ।

१ वायु द्वारा छूत का आक्रमण ।

जब छूत का विष वायु के बोझ पर सवार हो कर जन संहार के लिए निकलता है उस समय एक ही दो पर नहीं बरन हजारों लाखों प्राणियो पर इसका प्रभाव पड़ता है । जनपूर्ण वस्तिवा जनशून्य हो कर खनखन जाती हैं । जिस प्रकार वन में अचानक अग्नि प्रगट हो कर सम्पूर्ण वन के वृक्ष तथा घनस्पतियो को भस्म कर देती है उसी प्रकार नगरो में छूतवाले (इन्फेक्शस् तथा कन्टेजस्) रोग फैल कर छाथों की ढेर लगा देते हैं । ऐसे समय बडे २ दिग्गज वैद्यों की बुद्धि चकरा जाती है और बडे २ साहसियो संधा सद्योगियो के साहस और सद्योग निष्फल हो जाते हैं । प्राणियो में हाहाकार !!! मच जाता है ।

वायु द्वारा आक्रमण करनेवाले छूतदार रोग दो प्रकार के होते हैं । पहिले प्रकार में ये रोग जो एपिडेमिक् कटेजस्

१ वैद्यक में लिखने रोग लिखे गये हैं उनमें से अधिकांश रोग छूत ही से उत्पन्न होते हैं । जैसा कि छूत वाले रोगों के साथ बर्नन किया गया है ।

३३८ छूतवाले रोग और उनसे बचने का उपाय ।

एन्ड इन्फेक्शस् Epidemic, contagious and infectious के नाम से मशहूर हैं अर्थात् इस प्रकार के छूतवाले रोग वायु और स्पर्श दोनों के द्वारा उत्पन्न होते हैं । दूसरे प्रकार में वे रोग हैं जो केवल एपिडेमिक् Epidemic कन्टेजस् contagious and इन्फेक्शस् infectious कहलाते हैं । ऐसे रोग केवल वायु द्वारा ही उत्पन्न होते हैं ।

२ स्पर्श द्वारा छूत का आक्रमण ।

रोगी अथवा उनके पहिरने ओढ़ने आदि वस्तुओं द्वारा इस प्रकार की छूत निरोगी मनुष्यों को लग जाती है । घेरा, टहलुए, इष्टमित्र और सब घर के निवासियों को जिस में ऐसा रोगी हो इसका अवश्य फल मिलता है । इस प्रकार के छूतवाले रोग भी कभी २ एपिडेमिक् (मरी) इन्डेमिक् (स्थानीय) और प्रायः “स्पोरेडिक्” होते हैं । एक से दूसरे को और दूसरे से तीसरे को इस प्रकार की छूत का बराबर असर होता चला जाता है । यदि सचित उपाय न की जावे तो ऐसी छूत से पैदा छूतवाले रोग हजारों जीव का धावा एक दिन में पाँच विमादेही मार सकते और सेकड़ों प्राणियों का सहार कर सकते हैं । हवाई घुड़सवारों से (एपिडेमिक् इन्फेक्शस् से) ये ताकत में कुछ कम नहीं हैं केवल अन्तर में तो हमनाही कि वे पलक मारते २ प्रलय कर सकते हैं और ये भीरे २ अवना प्रभाव दिखाते हैं ।

ध्यान रहे कि जो “इन्फेक्शस्” हैं वह “कन्टेजस्” भी हो सकते हैं और जो कन्टेजस् हैं इन्फेक्शस् हो जाते हैं अथवा जो समस्त जीवों को कि कन्टेजस् से इन्फेक्शस् और इन्फेक्शस् से कन्टेजस् बनाने में सक्षम हैं एपिडेमिक्

किसी २ में दोनो प्रकार विद्यमान हैं जिसे आगे लिखेंगे ।

३ भोजन और जल द्वारा छूत का आक्रमण ।

जब छूत का विष किसी झूठा, भावही, तालाब या पोखरे आदि में मिल जाये और ऐसे जलाशयों का जल मनुष्य पीये या खानेवाले पदार्थों में मिलाये और उसे निरोगी मनुष्य खाये तो ऐसी छूत का असर सुरतमनुष्यों में फैल जाता है और एक साथ बहुत से मनुष्य यमलोका की यात्रा को चल पड़ते हैं, जैसे, हिजा और "टाइफाइड फीवर" आदि में देखा जाता है । जिस प्रकार वायु मनुष्य के जीवन में उपयोगी पदार्थ है उसी प्रकार भोजन तथा जल भी उपयोगी है । अस्तु जिस प्रकार वायु द्वारा छूत आक्रमण करती है उसी प्रकार खाद्य पदार्थों द्वारा भी कर सकती है । असर दोनो में एकसा ही है केवल आक्रमण का मार्ग भिन्न है ।

वायु द्वारा छूत का असर प्रथम स्वासेन्द्रियों पर हो कर पश्चात् स्नायुमण्डल (नर्वस सिस्टम) पर होता है और विष रुधिर में मिलते ही हृदय, फेफड़ा, गुर्दा, जिगर आदि के कार्य में बाधा उपस्थित होती है । शरीर की घनावर्त धिगड़ जाती हैं । पेट, नस, चर्म और नास पुलने और निबल होने लगते हैं । आमाशय आतों के कार्य सिपिल पड़ जाते हैं । शरीर को नियमित रिसाव^१ बंद हो जाते हैं । अतः रुधिर विकार बढ़ कर भेजे, (दिमाग) का हृदय (दिह)

३४० छूत वाले रोग और उनसे बचने का उपाय

में असर पहुँच कर रोगी मूर्छा (कोमा) या हृदय की गति के निर्यालतादि से बंद हो कर मर जाता है ।

स्पर्श द्वारा छूत को असर प्रथम त्वचा पर हो कर रुधिर में पहुँचता है और खाने पीनेवाली वस्तुओं द्वारा छूत का असर प्रथम आमाशय में हो कर तब रुधिर में मिलता है । पशुओं फल वन दोनों का प्रथम के समान ही होता है । छूतवाले रोगों में अधिकांश ऐसे रोग हैं जिनमें “ज्वर” अवश्य है । शेष कुछ स्वासेन्द्रियों पर और कुछ त्वचा पर होते हैं ।

छूत वाले रोग तीन प्रकार के हैं ।

१ मनुष्यों से मनुष्यों में उत्पन्न होनेवाले । इसमें स्त्री पुरुष दोनों समित होते हैं ।

२ जो केवल स्त्रियों ही में देखे जाते हैं । जैसे प्रसूत स्त्रियों “सेप्टीमीया” आदि ।

३ पशुओं से मनुष्यों में उत्पन्न होनेवाले । जैसे “रेड्स” “फार्स” “इन्फ्लूएन्ज़ा माइटिक्स” “सारस” “हेम्मोफीया” आदि ।

(च)

छूतवाले रोगों का द्योरा ।

नं०	नाम छूतवाले रोगों का	वायु द्वारा	स्पर्श द्वारा	खाद्यपदार्थों द्वारा	आक्रमण
१	रमास पावस-शोथला	हवाके प्रश्व	कण्टेख	कोमाइटिस	एपिडेमिक इन्फे
२	चिकित्त पावस=भोतिवा शोथला	"	"	"	मिक स्पाइडिक
३	सोजिरव=एवरा	"	"	"	"
४	रमाटलेट् फीवर=सास बुखार	"	"	"	"
५	जर्मन मीज़िरव	"	"	"	"
६	चिकपीरिया (कंठ में सूं हो निरसी)	"	"	"	"
७	ब्रुपिककाफ फूकर खाकी	"	"	"	"
८	टाइफस् फीवर (काला बुखार)	"	"	"	"
९	टाइफाइड् फीवर (साम्प्रतिक खर)	"	"	"	"
१०	मनव=अर्पसूला=गकसूला	"	"	"	"
११	इमरसुवन्ला=घवाईं जुकान खरदी	"	"	"	"
१२	चरिचिपेसव=मुण्वाया	"	"	"	"
१३	पलोफीवर-पीसअपर	"	"	"	"

नं०	छत्रवाले रोग का नाम	वायु द्वारा	स्पृश द्वारा	भोजन और पानी द्वारा	कैफियत
१०	चेरीत्रोपरादनल कीबर	"		—	"
११	के म कीवर-सगडा बुखार	"		—	"
१२	रिसेपुसिग कीबर-सकासठवर	"	"	—	"
१३	शुद्धूय-देठनो खाँसी	"	"	—	"
१४	प्लेग-सरो-माऊन-त (सामारी)	"	"	—	"
१५	कासरा-दुँका = विपुषिका	"	—	"	"
१६	बाह्रिब-हरी-तपेदिक् मिस	—	"	—	—
१७	लेपूखी = कुट्ट = सुकास = कोह	—	"	—	—
१८	बसेवीज = ईष खजुरी = खाज	—	"	—	—
१९	रिगवर्स = दाद	—	"	—	—
२०	टिनिना केवीषा = गंज	—	"	—	—
२१	टिनिदावर्न कोबर-दीप	—	"	—	—
२२	सौखलम कोटिनिपोषम	—	"	—	—
२३	प्लेस कीविया-याज्ज	—	"	—	—
२४	सेरासिटिक् रहे-मेटाइटिक्-पुष	—	"	—	—

४५
४६
४७
४८
४९
५०
५१
५२
५३
५४
५५
५६
५७
५८
५९
६०
६१
६२
६३
६४
६५
६६
६७
६८
६९
७०
७१
७२
७३
७४
७५
७६
७७
७८
७९
८०
८१
८२
८३
८४
८५
८६
८७
८८
८९
९०
९१
९२
९३
९४
९५
९६
९७
९८
९९
१००

३४४ छूतवाले रोग और उनसे बचने का उपाय ।

इनके सिवाय और भी बहुत से ऐसे रोग हैं जो छूत-वाले रोगों के सम्बन्ध से उत्पन्न होते हैं । जैसे आतसक से आतसकी गठिया, सुजाक से ग्रान्युलर अफयलमिया आदि । लेकिन हमने ऐसे रोगों को छोड़ दिया कारण कि ये रोग छूतवाले रोगों के फल स्वरूप हैं जिनका वर्णन प्रत्येक छूतवाले रोग के साथ आगे लिखा जायेगा ।

छूत का असर ।

छूत का असर सब समय में सब पर एकसा नहीं होता । इसका कारण विष का म्यूनाक्षिप्त तथा निर्मल होना है । किसी रोग को छोड़े ही में शीघ्र असर हो जाता है और किसी रोग में अधिक मात्रा होने पर भी विष असर नहीं करता । इसका कारण यह है । अर्थात् शरीर बलवान होने से विष निर्जीव तथा निर्मल हो कर असर नहीं फैलाने पाता । इसके विरुद्ध निर्मल मनुष्यो तथा रोगियों में शीघ्र असर दुगुना तिगुना बढ़ जाता है । कल्पना करो कि पाच मनुष्य वर्षों में भीगते हुये बसे लेकिन पाचों पर शरीर का असर नहीं हुआ । एक को तो गठिया हो गई, दूसरे को ज्वर आ गया, तीसरे को खांसी का रोग हुआ, और चौथे पाचवें को किसी प्रकार का कष्ट नहीं हुआ । इनसे सिद्ध हुआ कि जिसका बल जैसा रहा उसे वैसाही फल मिला । साथ बहुत से रोग स्वभाव और प्रवृत्ति से होते हैं अर्थात् जिसका जैसा स्वभाव और प्रवृत्ति होगी उसको वैसा उसी प्रकार के रोग की ओर प्रवृत्ति होगी । जैसे निम्न एक बार देखा हो चुका है उनकी प्रवृत्ति दुपारा उसी ओर रहती है जहाँ जहाँ भी उसके विष की धारा

छाती कि चट ये उसके खंगुन में फस जाते हैं । छत का
अमर बघो और जवानो पर अधिक होता है । बघों में
भगमक और जवानो में कठिन परिणाम प्रगट होते हैं ।
स्त्रियो को सर्दों द्वारा प्राय छूतवाले रोग होते हैं ।
क्योंकि भारतवर्ष की स्त्रिया घर के बाहर कम निकलती
हैं । अस्तु; "कन्टेजस" रोग उन्हें कम होते हैं । यदि हो
तो उसके दाता उनके पुरुष ही कहे जायेंगे । इसके सिवाय
वे ही पुरुष और बघे अधिक ग्रसित होते हैं जो नैले,
दरिद्र, मिथिल और जो हृदय, गुर्दे, जिगर, और केशके के
रोगी हो । अथवा वे जो पेट भर भोजन नहीं पाते ।
जिन्हें स्वास्थ्य रक्षण के नियमों पर चलना कठिन है
या जिन्हें एकवार छूतवाला कोई रोग हो चुका है, जो
किसी कल कारखाने या मिल और पियेटरी आदि में
शौकरी करते हैं । जिन्हें रोगियों की सेवा आदि करनी
पड़ती हो और वे लोग जो किसी तग कोठरी में बहुत से
मनुष्यों के साथ बैठ कर झुका आदि पीते हों । जिनको
आचार विचार की परवाह नहीं होती और वे लोग जो
खुरी या बिगड़ी हुई वायु में रहते हैं । रोग फैलने पर भी
जो स्थान नहीं त्यागते । जो नगे पाय और नगे बदन घूमते
हैं । रोगी के कमरे में जो घुस कर बैठते हैं या उसके हाथ
का पान आदि खाते हैं । ऐसे को महज ही छूतदार रोग
हो जाता है ।

जब छूत के विषय प्रवेश शरीर में होता है तब उसकी
मात्रा बहुत ही स्वल्प (थोड़ी) होती है किन्तु शरीर
में वा रुचिर में पहुच कर दुगुनी त्रिगुनी चौगुनी हो जाती

३४३ छूतवाले रोग और सगसे ग्रहने का उपाय ।

हे । छूतवाले रोग प्राय एक घार और कभी २ दुधारा भी होते हैं ।

छूतवाले रोगों के लक्षणों का चार भागों में विभाग कर हालिये तो चार दर्जे हो जावेंगे । अस्तु—

१ दर्जा जिसे पीरिअड आफ लेटेंसी या इगमाक्युनेशन स्टेज अर्थात् विष प्रवेश काल कहते हैं । इसमें विष रुधिर में प्रवेश कर के अपना असर प्रगट करता है । इसकी भयपि २४ घंटे से लेकर २४ दिन तक है । इसके बीच केवल रोगी सुस्त, सिधिल, आलसी हो जाता है । शारीरिक और मानसिक निर्बलता आदि होती है ।

२ दर्जा जिसे आक्रमण का दर्जा कहते हैं । इसमें ज्वर आदि लक्षण प्रगट होते हैं ।

३ दर्जा ऐरोटिक स्टेज है । अर्थात् फुसी आदि शरीर में प्रगट होती हैं ।

४ दर्जा क्लाइसिस या लाइसिस है । इसमें ज्वर के एक साथ वा घीरे २ उतर जाने से अशुभ लक्षण दूर हो जाते हैं ।

परिणाम—छूतवाले रोगों का यदि उचित उपाय किया जाय तो परिणाम प्राय भयानक होता है । यदि “मरी” हो तो सघातक होता है । बुढ़ों और बच्चों में तथा निर्बलों में अशुभ है ।

ग्रहने का उपाय—प्रत्येक रोगों के साथ लिख जाये हैं ।

चिकित्सा—ज्वरों के लिये प्राय फीवर मिक्चर की आवश्यकता होती है । अस्तु; उसका नुस्खा नीचे लिखते हैं ।

फीवर मिक्चर = ज्वरघ्न नाशक नुस्खा ।

छाइकर एमोनिया एसीटेटिस

२ ग्राम

पुटासी माइट्रास (शोरा) ५ घेन

स्पिरिट इथर माइट्रोसाई २० घूँद

एक्का (पानी) कैम्फर १ औंस

यह एक मात्रा है । ऐसी मात्रा प्रत्येक २ या ३ घण्टे पीछे छ्दर की प्रवृत्तता में देवे । यदि कङ्ग हो तो मेगनी-सिया सलकास २ ग्राम प्रत्येक मात्रा में मिला कर पिछावे । छूतवाले रोगों में निर्बलता अधिक होती है । अस्तु-निर्बलता दूर करने को नीचे लिखा नुसखा दे-

स्टिम्युलेंट मिक्चर, शक्ति सञ्चारक नुसखा ।

ब्राडी २ ग्राम

कार्बोनेट आफ एमोनिया ५ घेन

स्पिरिट क्लोरोफार्म २० घूँद

टिकचर सिन्कोना कम्पौ ड २० घूँद

डिकाक्शन सिन्कोना १ औंस

या

स्पिरिट एमोनिया एरोमेटिक २० घूँद

„ क्लोरोफार्म २० घूँद

„ इथर कम्पौ ड २० घूँद

कैम्फर घाटर १ औंस

दोनों एक मात्रा की हैं ऐसी मात्रा तीन २ या चार २ घण्टे पीछे पिछावे । प्रतिम दशा में भी यह नुसखा लाभदायक है ।

३४८ छूतवाले रोग और उनसे बचने का उपाय ।

“ एपिडेमिक कन्टेजस एन्ड इन्फेक्शस डिजीजेज ”

Epidemic, contagious and infectious diseases

वायु द्वारा और स्पर्श^१स्पर्श^२ द्वारा होनेवाले
छूतवाले रोग ।

स्मालपाक्स^३ Small-Pox भीतला ।

रोग की परिभाषा—यह एक कठिन सघातक छूत
दार रोग है जो “कन्टेजन”^४ और “इन्फेक्शस”^५ प्रकार
का है । “फोसाइटिस” के द्वारा भी इसका अन्तर होता है ।
यह कभी “इन्डेमिक” और कभी “एपिडेमिक”^६ कभी
“स्पोरेडिक” होता है । इस रोग में कठिन ज्वर होता है ।
शरीर पर एक प्रकार के दाने निकलते हैं । इसे हिन्दूस्थानी
“भीतला नासा” मुसलमान “चेचक” और बंगाली “बसत
रोग” कहते हैं । सस्लत में इसका नाम विस्कोटक है ।

कारण—इस रोग का मुख्य कारण “छूत” ही जो रोगी
के पसीने स्वास और फु सी के पीप तथा खुरद (खुप्पी दिठली)

१ कूया छूत ।

२ घड़की नासा ।

३ निरुका अन्तर स्पर्श द्वारा हो ।

४ वायु द्वारा निरुका अन्तर हो ।

५ बवाइ मरी

द्वारा जघना रोगी के समीप रहनेवाली वस्तुओं द्वारा निरोगी मनुष्यों को लग जाती है । हवा में फैल कर इस रोग की छूत दूर तक घावा मारती है । घरी के कहीं कियेहे और द्वार दीवारों में यह छूत विद्यमान रहती है । दाने निकलने के समय से ले कर दिङ्गली उतरने के समय तक छूत लगने का अधिक धर रहता है । विशेष कर जब दाने में पीप पड़ गई हो तो बहुत ही शीघ्र छूत लग सकती है ।

यह रोग एक ही मनुष्य को कई बार होते देखा है । कभी एक ही बार हो कर फिर नहीं होता है । इस रोग के लिये कोई निश्चित समय और वय की आवश्यकता नहीं है । हर एक मनुष्य को हर एक अवस्था में हो सकता है । जो नैले, दरिद्र, हृष्यी हैं और जिन्हें “टीका” नहीं लगा है वे इस रोग के घसे में शीघ्र पड़ जाते हैं । ऐसे में इस रोग का अधिक जोर होता है ।

लक्षण—सुगन्ध से समझने के लिये लक्षण को चार वर्गों में वर्णन करेंगे ।

१ दर्जा—अचानक विष जब शरीर में प्रवेश करे वा किया जावे तो ९ दिन और जब वायु द्वारा रुधिर में प्रवेश करे तो १२ दिन तक इस रोग की छूत अपना गुप्त प्रभाव (असर) शरीर के भीतर ही प्रगट करती है । प्रत्यक्ष में केवल रोगी मछीन, मुस्त और आलसी सा दिखाई देता है । इसको आरम्भिक दर्जा वा विषप्रवेश काल कह सकते हैं ।

२ दर्जा—इस दर्जे में प्रथम एक साध जाड़ा दे कर खर चढ़ता है । जो १०४ से १०५ दर्जे, कभी १०६ से भी अधिक बढ़ जाता है । खर के साथ नाड़ी भी स्वाभाविक

३५० खूतवाले रोग और उनसे बचने का उपाय ।

गति से अधिक बढ़ जाती है । आखे लाल मुख तन तनाया हुआ और गले की रुधिर की माली^१ तहपने लगती है । मस्तक में पीड़ा होती है, शरीर के रंग और पट्टे फटकने लगते हैं । कोई २ आरम्भ हो से अचेत होने वा बकने आकने लगते हैं । बच्चों में एक प्रकार की ऐठन जिसे डाक़री में "कनवलशन"^२ (Convulsion) कहते हैं होती है । पीठ की रीढ़ में बहुत दर्द, जो गर्दन से झूतह तक फैलती है, रोगी को दिक्कत कोलने नहीं देती । निर्बलता बढ़ जाती है । आमाशय^३ पर धोका वा दर्द जान पड़ता है । उबकाइया आती है । कभी बमन हो जाता है । इस उबरे में किसी २ को शुकाम तथा "सोरथ्रोत" Sore throat (कंठ में घाव) हो जाता है । ऐसे उबरे को प्रारम्भिक उबरे Primary fever कहते हैं^४ ।

३ दुर्जा-उबरे से ३ दिन कभी ४ दिन के बाद कु सियां निकलनी आरम्भ होती हैं । जो पहिले मुख और मस्तक या हथेली के पीछे, उपरान्त एक दो दिन के घब, हाथ और पैरों में निकल जाती हैं । कु सियों की संख्या^५ नियत नहीं है, कभी दूर २ कभी पास २ कभी चोटी और कभी हशारे से ले कर अनगिनती निकलती हैं । बहुत निकट २ होने से आपस में मिल जाती हैं । कु सियां मुख पर अधिक निकलती हैं ।

१ कामन फ़ाटिङ् जर्ब ।

२ गढ़ सेंटन कोटेर बच्चों को उबरे के मकोप से होती है ।

३ वेदा-शिशुमें भोजन पकता है ।

४ निम्नलिखित-

फुंसियो की दशा और उनमें परिवर्तन ।

आदि में स्वधा (चमड़े) पर एक लाल चमकदार स्वधा से कुछ ऊँचा बिंदु प्रगट होता है । दूसरे या तीसरे दिन यह बिंदु चपटा कठोर सजरा हुआ और खूने से राई या सरसों (कभी २ छोटे छर्चे) की भाँति सज़ा जान पड़ता है । इसके उपरान्त इनमें (फुंसियों में) साफ जल भर जाता है । पाँचवें दिन दाने के केन्द्र पर एक दवाव (गद्दा) पड़ जाता है । इस दशा में फुंसी को “अम्बुली-केटिड पाक्स” (नाभी की भाँति दाने) कहते हैं । इसके उपरान्त दाने के किनारे साफ और उनमें का जल गदला होने लगता है । दाने के चारों ओर लाल घेरा (वृत्त) जान पड़ता है । छेयों २ पीप पड़ती है दाने का दबाव भी कम होता जाता है और दाना नोकरदार हो जाता है । दाने जालदार होते हैं अर्थात् जैसे नारंगी में खाने होते हैं वही भाँति इन दानों में भी खाने होते हैं । यदि सूई से दाने को छेद दें तो कुछ जल एक साँप कमी भी नहीं निकलने का । आठवें दिन दाने सूख भर जाते हैं और उनके सिर पर एक काला बिन्दु दिखाई देता है । इसके उपरान्त दाना फूट कर कुछ पीप बह जाती है या सूख कर दिवली^१ बन जाती है । दिवली का रंग भूरा होता है । कोई २ दाने फूटते नहीं बरन मुरझा जाते हैं ।

४ दर्जा—इसमें फुंसिया मुरझाने लगती हैं और दिवली बचने लगती है । ११ से १४ दिन के भीतर दिवली अलग होने लगती है । दिवली के अलग होने पर एक

३५२ छूत घाले रोग और उनसे बचने का उपाय ।

लाल भूरे रंग का निशान रह जाता है। यदि कुसियां गठ जावें तो आरोग्य होने पर गढ़े पड़ जाते हैं ।

कठिन लक्षण—इसमें दाने अधिक निकलते हैं और पास २ होने के कारण आपस में मिल जाते हैं । मिलने की जगह सूख जाती है और उस स्थान में तड़प और तनाव बढ़ जाता है । कठ से ऊपर का कुल भाग सूख जाता है अर्थात् चिर, मस्तक, पपीटे सूख जाते और आखें बंद हो जाती हैं । दानों में खुजली, जलन और उनके चमड़े में छाली बढ़ जाती है । रोगी खुजला २ कर घायल कर हाडता है । घायल होने से मुख बुरा हो जाता है । इस रोग में कुछ क्लिष्टिया रोगग्रस्त होती हैं जिनके लक्षण अलग २ वर्णन करेंगे ।

(क) मुख की छयावी^१ किन्नी । जब इस रोग से मुख के भीतर की छयावी किन्नी ग्रस्त होती है तो गला दुखता है, कोई पदार्थ निगला नहीं जाता । भूंह से छार टपकती है । रोगी से बोला नहीं जाता । यह छार बड़ी छूतदार है ।

(ख) नाक की छयावी किन्नी । जब इस रोग का असर नाक की छयावी किन्नी पर पहुँचता है तो नाक सूख कर बंद हो जाती है । रोगी मुख से स्वास लेता है ।

(ग) आँख की छयावी किन्नी । इसके ग्रस्त होने से कीचड़ अधिक निकलता है और प्रकाश नहीं सह्य जाता । पलक के भीतर दाने निकल आते हैं । आँख का प्रवेश भाग सूख जाता या उसमें घायल हो जाता है ।

— १ एक प्रकार की दुर्गन्ध वाली है ।

२ Mucous Membrane—म्यूकस मेम्ब्रेन ।

(घ) आमाशय^१ और आंतों की लघावी क्रिया । इन क्रियाओं के प्रसिध होने से पाचन शक्ति (हाजमा) खिगड़ जाती है । दस्त आने लगते हैं ।

(रु) मृत्रेद्रिय (पेशाब) की सुभावी क्रिया । इनके प्रसिध होने से मूत्र करते समय जलन और चिनग जान पड़ती है । कभी २ मूत्र में रुधिर भी आता है । सूजन के कारण कभी बूँद २ और कभी २ घिलकुल मूत्र बह धी जाता है ।

भेद । यह रोग कारण के अनुसार दो प्रकार का देखा गया है ।

१ सरल—इसमें दाने दूर २ और गिनती में कम निकलते हैं । लक्षण भी सरल होते हैं और हानि भी कम होती है । इनको “डिस्टिक्ट स्नालपाक्स” और “घेरीओला डिस्क्रोटा” भी कहते हैं ।

२ कठिन—इसमें सब लक्षण कठिन और तयामक होते हैं । इसमें दाने बहुत ही समीप २ और गिनती में अधिक होते हैं । दाने आपस में मिल जाते हैं और शीघ्र निकल जाते हैं । पहिले छोटी २ कुंसिया जो गिनती में अधिक होती हैं सारे शरीर पर निकल कर फैल जाती हैं । कुंसिया गुच्छेदार और चमड़े से कुछ ऊँची होती हैं । इनमें शीघ्र पीप पड़ जाती है । मुख^२ पर अधिक दाने निकलते हैं । दानों की शक्त चपटी, फैली और मिल जाने से कफोले की भांति होती है । जल पानी सा या रुधिर मिला हुआ दुर्गन्धित होता है । दानों के चारों ओर लाल घेरा नहीं होता । चारों

१ मेदा—भोजन को ठहरने की चेती ।

२ मुख सेवा जान पड़ता है मानो मकली सेहरा लगा है ।

३५४ छूतवाले रोग और उनसे बचने का उपाय ।

और की त्वचा (चमड़ा) लाल काछापन लिये होती है । जब दाने सुखने लगते हैं तब बड़े २ काले रंग के नर्म सुरङ (दिचली) निकलते हैं । चमड़ा गल जाता और गाढ़े पद जाते हैं । आराम देर में होता है । मुख की सुन्दरता नष्ट हो जाती है । यदि इसके साथ किसी स्थान की लम्बायी क्रिया mucous membranes भी रोगी हो जायें तो लम्बा कठिन और कभी २ जयानक ग्रन्थ होते हैं । यह शीतला बड़ी जयानक है । बहुत दिन में आराम होती है । इसके भी दो प्रकार और हैं ।

(क) इस प्रकार की शीतला में दाना न तो अधिक दूर २ और न बहुत ही निकट २ होता है । इसको "सिमी-कोमप्लुएन्ट" ^१ कहते हैं ।

(ख) इस प्रकार की शीतला में दाने पास २ और मिले होते हैं । अंगूर के गुच्छे की भांति के होते हैं । यह बहुत ही जयानक है । इसके भी दो भेद हैं ।

(१) जिसे हाकुरी में "मेलिगनेन्ट स्नालपाक्च" कहते हैं । इसमें शीतला का असर हृदय पर होता है । फुंसियों के निकलने के पहिले ही रोगी मर जाता है । यह महा कठिन तथा असाध्य है । इसके लक्षणानुसार कई भेद हैं ।

(२) इस प्रकार की शीतला में शरीर के नाना स्थानों से रुधिर निकलता है, यहा तक कि दानों में भी जल के स्थान में रुधिर पाया जाता है । इस में रोगी बहुत ही निर्बल हो जाता है । दाने बहुत देर में और अठबह निकलते हैं । कभी २ दाने दिखाई देकर समा जाते हैं । दानों

की रक्त काली होती है। इसीसे इसे “काली शीतला” Black Pox कहते हैं। रुधिर निकलने के कारण इसे हेमो-रेजिक Haemorrhagic भी कहते हैं।

(इ) इसमें दाने फूट २ कर घाव बन जाते हैं। जिससे घुरी सुरत हो जाती है। कभी २ गहरे घाव हो जाते देखे गये हैं। इसे “अल्सरेटिव स्मालपाक्स” कहते हैं।

(उ) इसमें दाने गल सह कर घाव पड़ जाते हैं। घाव भी सहे होते हैं। दुर्गंध अधिक होती है। इसे हाकटरी में “गैंग्रीनस स्मालपाक्स” अर्थात् सड़ी शीतला कहते हैं।

(२) पहिले से सरल है। इसमें न तो दाने सहते हैं न घाव ही पड़ते हैं, बरन दाने सुरक्षा कर सूख जाते हैं। इसको “एक्टिव पाक्स” कहते हैं। टीका लगाने के पीछे पड़ होता है। इसके भी दो भेद हैं।

(अ) “क्रिस्टेलाइन पाक्स”। इसमें आदि से लेकर अंत तक दाने साफ और एक से होते हैं।

(इ) “माडीकाइड स्मालपाक्स”। एक बार हो कर फिर उसी अनुष को दुबारा यह रोग हो तो “माडीकाइड” के नाम से पुकारते हैं। कभी २ टीका लगाने के बाद यह होता है। इसमें दिठली उत्तरमे पर न तो निशान रहता है और न इसमें कठिन के समान दुर्गंध होती है। लक्षण बहुत ही अल्प तथा साधारण होते हैं।

संयुक्त रोग-इस रोग की बहुत से रोगों से मिश्रता है। इसके मिश्र शरीर पर सिर से पैर तक अधिकार जमा लेते हैं। एक ही रोगी पर सब रोग एक साथ प्रायः कम देखे गये हैं।

३५६ छूतवाले गेग और उनसे बचने का उपाय ।

(१) मस्तक और मुख-इन पर छूत का भतीजा "एरी सिपेलस", और "इक्जीमा" (छाजन) "एकथाइमा" होता देखा गया है ।

(२) आंख-आंख में सूजन, और आंख के श्वेत भाग (Cornea कार्निया) में घाव हो जाता है ।

(३) कान-ओटाइटिस otitis (कान की सूजन), ओटोरिया otorrhoea कान बहना, कभी केरीन caries कान की बड़की में सुदोरी, आदि कर्ण रोग हो जाते हैं ।

(४) नाक-घासा सह कर बैठ जाता है या गल कर गिर पड़ता है ।

(५) श्वासेन्द्रिय के रोग-"एहीमा आफ दी रीना स्लाटिड्स" (हलक की सूजन) "ब्राकाइटिस" (साधारण खासी) "न्युमोनिया" (फेफड़े की सूजन = लंग्जुलरिया) "प्ल्यूरीसी" (फेफड़े की झिल्ली की सूजन) आदि ।

(६) "एलिमेन्टरी किनाल" के रोग । इसमें जीभ की सूजन, आमाशय में और अंतर्द्वियों में सूजन, "इरिट्रिया" (पेट चलना) आदि रोग होते हैं ।

(७) "कलेक्शन आफ दी किहनी" (गुर्दे में खून जमना, या "अलसर आफ दी किहनी" (गुर्दे में घाव होना), "ब्राइट्स डिज़ीज़" (ब्राइट्स साह्य द्वारा परीक्षित गुर्दे के रोग) आदि ।

(८) मूत्राशय (पेशाबदान) के रोग-सिस्टाइटिस मूत्राशय (मसने) की सूजन, "रिटेंशन" व "इमकान्टिनेन्स आफ यूरिन" (मूत्र का थुंदा या कड़क के साथ निकलना) आदि रोग हो जाते हैं ।

१ भोजन की पाथी को मुख से लेकर गुदा तक लपी है ।

९ जनरेटिव आर्गेस के रोग—भग, लिङ्ग वा अन्य गुप्त विभागों में सूजन, स्त्रियो में लेखिया (भग का बाहरी भाग) और पुरुषों में अर्ध कोश का सहना आदि प्रथम हैं ।

इनके विषाय निम्न स्थानों में द्वाव पड़ै उन स्थानों में सूजन, घाव, अदृश्य कोछे, और ऐसे कीड़ों का, निम्नमें छोड़ू मिली हुई दुर्गंधित पीव भरी होती है, निकलना ।

(१०) सहन—इस रोग में सारा शरीर सड़ जाता है, इसको “सेप्टीसीमिया” कहते हैं ।

(११) रक्त स्राव—Hæmorrhage शरीर के विविध भागों से स्राव बढ़ता है, यथा भग, गर्भाशय, मुख, नाक, और गुदा आदि से रक्तस्राव (सैलामेन्सून) होता है ।

(१२) पेट के अस्तर करने वाली क्लिष्टी (प्रिटोनियम) में सूजन होना ।

परिणाम—परिणाम कठिन है। यदि तीन रोगी हों तो एक अवश्य मर जावेगा । पाच वर्ष से कम उम्र वाले लड़के और अचेष्ट मनुष्य अधिक मरते हैं । दाने कम और दूर दूरी हो, उम्र कम हो, निर्बलता अधिक न बढ़े, कुंविया अफली तरह मर जावे, दाने एक दम निकल कर बैठ न जायें और न लाले पड़ें और न सड़ें, तो परिणाम शुभ है । इसके विपरीत अशुभ है । कभी द शीतला गर्भ के बालक को भी निकल जाती है । ऐसी अवस्था में गर्भ गिर पड़ता है ।

चिकित्सा—चिकित्सा दो प्रकार की है । (१) रोग न होने पाये इसका उपाय (२) होने पर इस रोग से रक्षा पाने का उपाय ।

(१) दाने का उपाय । भारतवासियों का विश्वास है

कि यह रोग रोग नहीं हैं किन्तु माता (देवी) की कृपा है । अस्तु वे इसकी शान्ति के लिये पाठ, होम, पूजा, द्रव्य, आहूतों की किया करते हैं । तब एक बात इनमें बहुत ही उत्तम पाई जाती है । वह यह कि शीतला के रोगी के पास ये किसी को आने जाने नहीं देते, और न शीतला का मुँदा ही ये जलाने की उठाते हैं । घर न मुँदा को जल प्रवाह कर देते हैं । यह प्रथा (रीति) इस रोग से बचने के लिये बहुत अच्छी है । क्योंकि यह बड़ा भयकर रोग है, मरी काल में यह न सूँटा देखे न जवान, लड़का देखे न सयान, न स्त्री देखे न पुरुष, जिसे पकड़ा उसकी कुछ न कुछ हानि अवश्य करके छोड़ता है । घर में एक को होते ही सब के सब कभी २ प्रभित हो जाते हैं । देखते २ यह अस्तित्व को अनशून्य कर डालता है । नगर का नगर सजह जाता है । बच्चे के लिये यह वैसा ही है जैसा जवानों के लिए भेग । अस्तु इससे बचने के लिये निम्न लिखित बातों पर ध्यान रखना उचित है ।

(१) जहाँ अधिक समुदाय इकट्ठे हों वहाँ, जैसे मेले, लमारे वा तीर्थों और चियेटरी में, न जायें, किसी लगे कोठरी में बहुत समुदायों के साथ न बैठें, और न किसी की दी हुई कोई वस्तु व्यवहार में लायें ।

(२) किसी रोगी इष्ट मित्र को देखने जायें तो दूर से देखें और बातचीत करें । उसके कमरे की कुर्सी, दरी, पलंग आदि पर न बैठें । जितना समय वहाँ लगे उतने समय तक कमरे के किंवाड़ और छिड़कियाँ खुली रखें ।

(३) जब इस रोग की मरी (बच्चा) फैली हो, तब बाह्य बच्चे को किसी दूसरे स्थान में जहाँ इस रोग की मरी न हो भेग दें ।

(४) मरी काल में अपने कपड़े साफ रखें और जब बाहर से घर आने लगे तो कुल कपड़े किसी बाहर की फोठरी में सतार कर, हाथ पैर धो कर और दूसरे साफ कपड़े बदल कर, सब धाल बर्तों को छुए ।

(५) यदि कोई घर में रोगी हो तो बच्चों को दूर रखें । कोई स्त्री यदि गर्भवती हो तो उसे अवश्य दूसरे स्थान में भेज दें । जिस कमरे में रोगी हो वहा कोई चीज न रखें । अस्वास्थ्य, भेड़ा, कुर्सी, दरी, बिछौने आदि सब अलग उठा कर धोए ।

(६) रोगी के आरोग्य होने पर, मकान की सफाई करें । कच्चे मकान को गोबर और मिट्टी से और पक्के मकान को चूने से लिपवायें पुतवायें । कच्ची किवाड़ों में अलकतरा लगायें । पक्के मकानों की गल आदि छूतनाशक जल (डिस इनफेक्टिङ्ग लोशन) द्वारा शुद्ध करें । और कच्चे मकानों की पृथ्वी एक फुट खोद कर यस्ती से दूर फिकवायें, उपरान्त छूतनाशक जल द्वारा खोदे हुए स्थानों को शुद्ध करें । रोगी के बिछौने ओढने तथा पहिरने के कपड़े यदि सूती हो तो जला दें और ऊनी हों तो घाम में सुखायें या उन्हें डिस इनफेक्ट करें ।

(७) मरी काल में स्वास्थ्यरक्षण के नियमों का पालन करते रहें ।

आरोग्य होने पर बलकारक औषधि की आवश्यकता होती है । अस्तु, नीचे का नुसखा उस समय देना उचित है ।

टानिक मिक्श्चर—बलकारक नुसखा ।

क्लिनाइम सलकास

२ घंटे

एसिड माइट्रो-बैक्टीरिऑलिक, हाइड्रूट	१० बूंद
लाइकर स्ट्रेक्मिया	५ बूंद
टिक्चर मिजर	१० बूंद
पानी या इनफ्यूजन क्लासिया	१ औंस
यह एक मात्रा है । ऐसी ३ मात्रा दिन में तीन बार देवे । या -	

टिक्चर स्टील	१० बूंद
लाइकर स्ट्रेक्मिया	५ बूंद
इनफ्यूजन क्लासिया या पानी	१ औंस

यह एक मात्रा है । ऐसी दो मात्रा भोजन के पश्चात् दे । मछली का तेल आदि भी दे सकते हैं । "इंस्टन" साइड का सिरप पिछा सकते हैं ।

नींद लाने का नुसख़ा ।

क्लोरोल ड्रिड्ट	२० घेन
ब्रोमाइड आफ पोटासियम	२० घेन
शरबत	१ औंस
पानी -	१ औंस

रातको सोते वक्त दे । या

लाइकर मारफिया ^१	२० बूंद
पानी	१ औंस

मिलाकर रात में दे । (जिसमें अफीम मना की गई हो उसमें यह नुसख़ा न दे । ऊपर का नुसख़ा दे ।)

मलफोनल २० घेन या डोवर्स पीडर १० घेन नींद लाने की दे ।

^१ यह औषध पीछा करने की भी दे सकती है ।

एन्टी-सेप्टिक लोशन । (खून नाशक अर्क ।)

सरकारी लोशन (पारे का पानी)

हैजार्न परफ्लोराइड

८^१/_४ घेन

गिलसरीन

जितना लगे ।

देनों को खरछ में खूब घोंटे । पीछे एक पाइ ट गर्म जल मिलावे तो १००० भागवाला लोशन होगा । हाथों और घावों या अन्य वस्तुओं को शुद्ध करने के लिये काम आता है ।

काढीज लोशन ।

परमैंगनेट आफ पोटाश

१ ग्राम

पानी

१ पाइ ट

यह भी छूत दूर करने के काम आता है ।

कार्बोसिलिक लोशन ।

एसिड कार्बोसिलिक

६^१/_४ ग्राम

गरम जल

१ पाइन्ट

मिलाने से १००० भागवाला लोशन होगा । इसे भी

छूत का नाश करने को हाथ आदि के घोंने के लिये काम में लाते हैं ।

फ़ोटल लोशन ।

फ़ोटल

१ ग्राम

पानी

१ पाइन्ट

मिला कर पाझाना, भेरी, शीद आदि साफ करते हैं ।

कार्बोसिलिक आयल ।

एसिड कार्बोसिलिक

४० घेन

मीठा तेल

१ बींस

३६२ छूत वाले रोग और तनसे घबने का सपाय ।

मिला कर घना ले । यह देह या हाथों में लगाने के लिये अच्छा है । घावों पर भी लगा सकते हैं ।

मुख की दुर्गंध दूर करने का
भाफ लेने का नुस्खा

आइस आफ यूक्लेप्टस

१ या २ बूंद

खीलता हुआ जल

१० औंस

रूम में हाल कर मुख में भाफ ले । यह तबी और ठिफ पीरिया में अच्छा है ।

या

कार्बोसिक एसिड

१ या २ बूंद

खीलता हुआ जल

१० औंस

या

क्रियोजोट

२ बूंद

खीलता हुआ पानी

१० औंस

मिलाकर "रूम" द्वारा कंठ में साफ ले ।

या

सारपील का तेल

५ बूंद

पानी खीलता हुआ

१० औंस

मिलाकर कंठ या नाक में भाफ ले । यह खासी, कंठ की सूजन, मुख की दुर्गंध आदि में लाभकारी है ।

नोट—भाफ लेने की विधि को "इनहेलेशन" Inhalation कहते हैं ।

नाय का नकशा

निमन, घोल, औंस आदि समझने के लिखते हैं जिससे औषधियों का नाय समझ में आ जावे ।

अंग्रेजी बड़े घांटो का नक्शा ।



क्र. पाँठ	क्र. अंश	ग्र (Gram) मैन
१	१६	७०००
	८	३५००
	४	१७५०
	२	८७५
	१	४३७ ५ या ४३७ $\frac{१}{२}$
	$\frac{१}{२}$	२१८७५
	$\frac{१}{४}$	१०९ ३७५

हिन्दुस्तानी तेल से अंग्रेजी तेल की बराबरी ।

सेर	छटांक	लोहा	माशा	रसी	पौंड	औंस	एपार्थिकरीज तेल			
							पौंड	औंस	ड्राम	ग्रेन
१	१४	८०	११०	७६८०	२ पौंड ४०० ग्रेन	३२ औंस ४०० ग्रेन	२½	२०	२४०	१४४००
१	५	६०		४८०	.	२ औंस २५ ग्रेन			१५	९००
१	१२	१		९६					३	१८० = एक चहरदार रुपया
			१	८					१½	१५
				१					१८७५	

पनीली चीजो की नाप का नक्शा ।

गु मैलन	oz. पाइन्ट	oz. = 2 औंस	Dr = 2 ड्राम	m मिनम	
१	८	१६०	१२८०	७६८००	
	१	२०	१६०	९६००	
		१	८	४८०	
			१	६०	

नोट—मिनम को डू द समझना बड़ी मूल है क्योंकि एक डू द एक मिनम के तीसरे हिस्से से डेढ़ मिनम तक होता है । हमने इस लेख के मुख्यों में मिनम के स्थान में डू द लिखा है, किन्तु उसे मिनम ही समझना चाहिये ।

इस से बचने का सहज उपाय “इनभाक्क्यूलेशन” है । यह विधि प्राचीनकाल में प्रचलित थी । इसमें शीतला का विष जीरेग मनुष्य के शरीर में पहुँचाते थे जिससे इस रोग की आशका दूर हो जाती थी । प्राचीन काल में शीतला नामी एक स्त्री ने इस विधि को प्रचलित किया था । इससे वह बड़ी पूजनीया हो गई थी । उसी की पूजा आज दिन भी भारतवर्षी, विशेष कर सिन्धुवा, करती हैं । इस विधि से साधारण शीतला के लक्षण प्रगट होते थे । किन्तु इस विधि में यह दोष था कि कभी २ शीतला मरी की भाँति फैल जाती थी जिस से बड़ी हानि होती थी ।

एक यूरोपीय डाक्टर ने १७८७ ई० में एक नई तरीका निकाली जिस को “वेक्सीनेशन” कहते हैं । डाक्टर का नाम जेनर साहेब था । जेनर साहेब एक दिन शिकार को गये । वहाँ एक चरवाहा बहुत सी गायों को जंगल में चराता था । डाक्टर जेनर जब चरवाहे के पास पहुँचे तो देखा कि उसके सारे शरीर में शीतला निकली है । साथही उनकी दृष्टि एक गाय पर पड़ी जिस के भी शरीर में दाँगे थे । डाक्टर साहेब शिकार की चिन्ता छोड़कर इस रोग की परीक्षा में लग गये । गाय की परीक्षा करते समय उन्हें विश्वास हो गया कि यह रोग गाय बैल आदि से ही उत्पन्न होता है । अस्तु डाक्टर ने एक गाय के दाने से कुछ अंश लिया और शहर में आकर एक तन्दुरुस्त मनुष्य की बाँह में जोद कर वही पहुँचाया । दो एक दिन में वहाँ छाठी सूजन (जैसा शीतला में प्रथम २ लक्षण उदय होते हैं) उदय हुई । फिर उस मनुष्य के दाने से कुछ अंश लेकर और एक दूसरे मिर्दानी

मनुष्य की भुजा में दाखिल किया तो उसे भी वैसे ही लक्षण प्रगट हुए जैसे कि पहिले मनुष्य को हुए थे । फिर क्या था, फिर तो हजारों पर सम्झेने इस कार्य को किया और पूरी सफलता लाभ की । जिन पर यह कार्य किया गया वे शीतला रोग से बच गये । सुनते हैं कि इस नवीन रीति से प्रसन्न हो सरकार ने एक लाख रुपये डाक्टर साहब को पारितोषिक स्वरूप प्रदान किया । अब से यह टीका प्रचलित हुआ है तब से शीतला रोग भारत वर्ष में बहुत घट गया । टीका लगे हुए मनुष्यों को प्रथम तो यह रोग होता नहीं और यदि होता भी तो सरल (मोटीफाइड) प्रकार का होता है । पहिले की भांति सघातक नहीं होता ।

टीका लगाने पर हलका ज्वर होता है जो तीन चार दिन तक रहता है, और किसी प्रकार का श्लेश नहीं होता । तीन चार दिन के पीछे जहाँ टीका लगा हो वहाँ एक कुत्ती निकलती है । इसी दशा में यदि शीतला निकल आवे तो दाँते बहुत कमजोर और बहुत जल्द सूख जाने वाले होते हैं । पीप पड़ जावे तो छे या सात दिन में आरोग्य हो जाता है ।

कौन सी दशाओं में टीका नहीं लगाना चाहिये ? जय बच्चे जो दाँत निकलते हो या दाँतों के कारण पतले दस्त देते हों, ज्वर आता हो, घसा बहुतही निर्वल हो, वा चर्म रोग आदि से पीड़ित हो, तो टीका अजले होने पर लगार्वे ।

टीका लगाने से हानि—जय एक बच्चे की पीप दूसरे बच्चे में पहुँचाई जावे तो सम्भव है कि पहिले बच्चे के पैतृक रोग दूसरे में भी प्रवेश कर जायें । अर्थात् एक लहके के बाप को गर्मी, कौढ़, कठमाला, वा जय आदि रोग हुए थे और सन

रोगों का असर वीर्य द्वारा उस बच्चे के रुधिर में विद्यमान था । अब उस बच्चे का लिम्फ (टीके की पीप) जब दूसरे निरोगी बच्चे की मुजा में पहुँचायेंगे तब ऊपर कहे हुए पहिले बच्चे के पैतृक रोग अवश्य दूसरे बच्चे के रुधिर में प्रवेश कर जायेंगे । इस दोष को अब सभी विद्वानों ने स्वीकार कर लिया है । इसी से सरकार ने अब शहरो के लहकों के लिये गोधन की शीतला का अश प्रचार किया है । कारण कि शहरो के लहके गाँवों के लहके की अपेक्षा छूत तथा पैतृक रोगों के अधिक भागी होते हैं । सरकार यदि गाँवों में भी गोधन के टीके (Cowpox) का प्रचार कर दे तो इस विषय हानि से बहुत ही रक्षा हो ।

२. रोगी होने पर इस रोग से रक्षा पाना ।

रोगी को सब से अलग साफ कमरे में साफ बिस्तर पर लिटावें । हकीम, वैद्य, और टण्डुए इस रोग की छूत से अपने को बचाकर रोगी की सेवा करें । फुंसियों के निकलने से पहिले उधर की साधारण चिकित्सा करें । चिकित्सा में मुख्य नियम ये हैं—

पहिला—खुजली को कम करें और रोगी को खुजलाने न दें । इस कार्य के लिए गुनगुने पानी में “स्पर्श” या सीलिया मिगो कर शरीर को पोछें । या कोई सूखा चूर्ण जैसे आटा, या आटे का गूदा, (स्टार्च) हेयर पाउडर, छनी हुई कही की राख आदि छिड़कें । यच्चों के हाथों में चैली धी कर पहिरावें जिससे ये खुजलाने न पावें ।

दूसरा—दाग न पड़ने पावे इस कार्य के लिए प्रथम मुख के दागों को सुई से छेद कर पीप निकाल दें । इस विधि

के करने से दाग नहीं पड़ने पाते । जुसखे जो इस काम के लिये बर्ते जाते हैं नीचे लिखे जाते हैं ।

माइट्रेट आफ सिलवर—१० ग्रैन

गुलाब जल—१ औंस

मिलाकर फुरेरी के द्वारा फुंसियो पर लगावें । या

पारे का सरहम—२५ भाग

मोन—१० भाग

अलकतरा—६ भाग

मिलाकर फुंसियो पर लगावें ।

कार्बोसिक एसिड ४० बूँद एक औंस जैतून के तेल में मिला कर लगावें । कार्बोसिक सोशन या कार्बोसिक सोशन, सलफ्यूरस एसिड, कार्बोसिक एसिड और क्लोरिन वाटर आदि गुमगुने घानी में मिलाकर शरीर को पोंछें ।

गंधक एक ड्राम, मक्खन एक औंस, मिलाकर लगावें । इन दवाओं के लगाने से फुंसियां वायु से बची रहती हैं, और उनमें अलन आदि नहीं होती । बद्बू और सुकसाहट दूर करने को नीचे लिखा जुसझा बहुत लाभदायक है ।

आयडोकार्म—२० ग्रैन

कैम्फर (कपूर)—६० ग्रैन

बेसलीम—६०० ग्रैन

मिलाकर घानी पर लगावें । या

कपूर—२ ड्राम

तिझी वा जैतून का तेल—२ औंस

मिलाकर चारे शरीर पर लगावें । या जैतून के तेल में कैलोमिल मिलाकर लगावें । जब निर्वलता अधिक हो तो

३७० छूतवाले रोग और उनसे बचने का उपाय ।

लोहा मिश्रित औषधियाँ, मदिरा, एमोनिया मिक्चर, आदि दें । गले में दर्द हो तो—

टिक्चर सुर-१ औंस-

मधु (शहद)-१ औंस

गुलाब जल-८ औंस

मिलाकर कुली करावें ।

आँखों को ठंडे जल से साफ करते रहें । पानी में राख कपूर या फिटकरी मिलाकर भाँख में-हालें या कपड़ा भिनी कर ऊपर रखें । दानों में किल्ली निकलने के बाद घाव हो तो आक्साइड आफ जिंक की में मिलाकर लगावें । आराम होने पर कार्बोलिक सोप लगाकर स्नान करावें । कीटा तैल या सुक्खन लगावें । कोमेन, नाइट्रो-ग्लूटिन एसिड, जिंका यता, या क्वासिया, के पानी में मिलाकर पिलावें । घा नछली का तैल पिलावें । इलका पथ्य, जैसे दूध, शोरवा, यज्ञनी सेनो, आदि खाने को दें । भाँख में घाव हो तो कास्टिक सोशन हालें । स्वास्थ्य रक्षण पर पूरा ध्यान रखें ।

— 0 —

२ चिकिन पाक्स-CHICKEN POX-वेरीसिला ।

यह भी एक प्रकार का छूतदार रोग है । इसमें भी साफ दाने शरीर पर निकल आते हैं । इसे भारतवासी मोलिया भीतला या 'हुलारी माता' कहते हैं । यह चारह वर्ष से कम उम्र वालों को होता है । कभी एक बार और कभी दुबारा भी होता है । जवान मनुष्य और स्त्रियों को भी कभी २ सताता है ।

कारण—पुराने लोगो का क्यान था कि यह भी एक प्रकार की शीतला है, किन्तु परीक्षा ने इस पुराने विचार को असिद्ध ठहराया और यह सिद्ध किया कि शीतला से इस रोग का कुछ भी सम्बन्ध नहीं। यद्यपि यह रोग भी शीतला की भांति वायु द्वारा और स्पर्शास्पर्श द्वारा, दोनों प्रकारों से, आक्रमण करता है और वैसा ही छूत दार भी है, तथापि इसको शीतला नहीं कह सकते। क्योंकि इसके विष में और शीतला के विष में बहुत ही भिन्नता है।

लक्षण—लक्षणों को दो वर्गों में वर्णन करेंगे।

१ सरल—तीन चार दिन तक कोई मुख्य लक्षण नहीं प्रगट होता, पीछे सरल ज्वर होता है। ज्वर के २४ घण्टे या ३६ घण्टे पीछे पहिले छाती और कंधों पर, फिर हाथ और पैरों में, एक के पीछे एक, साफ दाने या छाल चमकदार कुसियाँ निकलती हैं। कभी २ सिर पर भी निकलती हैं। इन दानों में कठोरता नहीं होती, और न मुख पर इनकी अधिकता होती है। कुसियों को यदि उगली से दबावें तो छाली दूर हो जाती है किन्तु दबाने से फिर ज्यों की त्यों हो जाती है। कुछ २ मत्सक में पीड़ा और खासी के सिवाय और कोई शारीरिक क्लेश नहीं होता। दाने गोल छंटे की भांति के होते हैं। और इनके चारों ओर शीतला की भांति छाल घेरा नहीं होता। जब जल गढ़ला होता है तब कुछ छाली दिखाई देती है। शीतला की भांति न तो इसके दाने छामेदार होते हैं, और न इनमें गढ़ा पड़ता है। छेद करते ही कुल जल निकल जाता है। तीसरे दिन से पाँचवें दिन के भीतर दाने फूट कर पतली दिवली, पूरी या टुकड़े

३३० छूतवाले रोग और उनसे बचने का उपाय ।

लोहा मिश्रित औषधियां, मदिरा, एमोनिया मिक्चर, आदि दें । गले में दर्द हो तो—

टिक्चर सुर-१ औंस-

मधु (शब्द)-१ औंस

गुलाब जल-८ औंस

मिलाकर कुन्नी करावें ।

आंखों को ठंडे जल से साफ करते रहें । पानी में रब कपूर या फिटकरी मिलाकर आंख में डालें या कपड़ा भिने कर ऊपर रखें । दांतों में दिवली निकलने के बाद घाव हो तो आक्सालाइड आफ जिंक ची में मिलाकर लगावें । आरोग्य होने पर कार्बोलिक सोप लगाकर स्नान करावें । कीटा त्तल या मक्खन लगावें । कोमेन, नाइट्रो-फ्युरएटिक एसिड, बिरा-यता, या क्वासिया, के पानी में मिलाकर पिलावें । या मछली का तेल पिलावें । हलका पथ्य, जैसे दूध, शेरवा, यज्ञनी सेवो, आदि खाने को दें । आंख में घाव हो तो कास्टिक सोडम डालें । स्वास्थ्य रक्षण पर पूरा ध्यान रखें ।

— ० —

२ चिकित्सा पाक्स-CHICKEN POX-वेरीसिला ।

यह भी एक प्रकार का छूत दार रोग है । इसमें भी-साफ दांते शरीर पर निकल आते हैं । इसे भारतवासी मोतिया शीतला या 'दुलारे माता' कहते हैं । यह बारह वर्ष से कम उम्र वाले को होता है । कभी एक बार और कभी दुबारा भी होता है । जवान मनुष्य और स्त्रियों को भी कभी २ सताता है ।

कारण—पुराने लोगो का ध्यान था कि यह भी एक प्रकार की शीतला है, किन्तु परीक्षा ने इस पुराने विचार को असिद्ध ठहराया और यह सिद्ध किया कि शीतला से इस रोग का कुछ भी सम्बन्ध नहीं। यद्यपि यह रोग भी शीतला की भांति वायु द्वारा और स्पर्शस्पर्श द्वारा, दोनों प्रकारों से, प्रसृत होता है और वैसा ही छूत दार भी है, तथापि इसको शीतला नहीं कह सकते। क्योंकि इसके विष में और शीतला के विष में बहुत ही भिन्नता है।

लक्षण—लक्षणों को दो वर्गों में वर्णन करेंगे।

१ सरल—तीन चार दिन तक कोई मुख्य लक्षण नहीं प्रगट होता, पीछे सरल उभर होता है। उभर के २४ घण्टे या ३६ घण्टे पीछे पहिले छाती और कंधों पर, फिर हाथ और पैरों में, एक के पीछे एक, साफ दाने या छाल बनकर कुसियां निकलती हैं। कभी २ सिर पर भी निकलती हैं। इन दानों में कठोरता नहीं होती, और न मुख पर इनकी अधिकता होती है। कुसियों को यदि सगली से दबावें तो लाली दूर हो जाती है किन्तु हटाने से फिर ज्यों की त्यों हो जाती है। कुछ २ मस्तक में पीडा और खासी के सिवाय और कोई शारीरिक क्लेश नहीं होता। दाने गोठ झंडे की भांति के होते हैं। और इनके चारों ओर शीतला की भांति छाल घेरा नहीं होता। जब लठ गढ़ा होता है तब कुछ छाली दिखाई देती है। शीतला की भांति न तो इसके दाने घानेदार होते हैं, और न इनमें गंदा पड़ता है। छेद करते ही कुछ लठ निकल जाता है। तीसरे दिन से पाँचवें दिन के भीतर दाने फूट कर पतली दिखी, पूरी या टुकड़े-२

४९२ छूतवाले रोग और उनसे बचने का उपाय ।

हो कर, निकल जाती है । और चमकदार छेदों की भाँति का दाग शेष रहता है । इसमें भी खुजली, बहुत होती है और खुजलाने से घाव भी हो जाता है । कभी-कभी कुबिया कई किस्म की निकलती देखी गई हैं ।

२ कठिन—जब यह रोग कठिन प्रकार का होता है तो दाने अधिक और पास-पास निकलते हैं । दानों की रगत जले हुए फफोले की भाँति की होती है । दाने दस बारह दिन तक निकलते और गायब होते रहते हैं । खाँसी उबर कुछ अधिक हो जाती है । कुशल इतना ही है कि इस के फल से अन्य रोग नहीं होते ।

परिणाम—अच्छा है ।

चिकित्सा—दोनों प्रकारों की चिकित्सा, जैसा शीतला में बताया जा चुका है, इसमें भी करें । खाँसी में लिसेड की माजून चटाया करें । नियंत्रित की यथोचित चिकित्सा करें । हलका पच्य दें । कुबिया टूटने न पावे इसका ध्यान रखें ।

मीज़िल्स MEASLES—खसरा ।

यह बहुत ही छूतदार रोग है । इसमें लाल कुबिया सारे शरीर में निकलती हैं । इसे पूरब में 'कजिया पलिया माता' कहते हैं और लाटिन में 'कधीओला' या 'मार्सोला' कहते हैं । इस रोग में लुकान होता है और श्वासेन्द्रिय की छुआची क्रिया घुन जाती है । यह रोग लड़कों को, जिनकी उम्र दो वर्ष से पाँच या सात वर्ष की है, अधिक होता है । कभी-कभी यह हर एक को हर उम्र में होता देखा गया है ।

कारण—छूत लगने से यह रोग होता है । यह छूत रोगी के शरीर से साफ की भाँति उड़ती है, कभी-कभी यह

मरी की भाति फैलती है । घर में यदि एक बच्चे को हो तो और बच्चे भी इस रोग में ग्रसित हो जाते हैं । यदि सावधानी से की जावे तो अहोस पहोस के बच्चे भी रोगी हो सकते हैं । यही अवस्था बाले मनुष्य भी ग्रसित हो जाते हैं ।

भेद—इसके दो भेद हैं (१) सरल (२) कठिन ।

लक्षण—(१) सरल—जब इस रोग की छूत लगती है तो दस बारह दिन तक कोई लक्षण नहीं प्रगट होता । केवल कुछ खासी आया करती है, उपरान्त जाड़ा देकर साधारण स्वर बढ़ता है जो १०१ या १०२ १०३ दर्ज तक का होता है । साया भारी होता और दर्द करता है । जुकाम के चिह्न प्रगट होते हैं । आंखों के पोंछे लाल सूजे हुए और नाक आंखों से से पानी बहता है । छींकें आती हैं । कभी २ नाक से सोहू भी निकलता है । गले में सरसराहट और दर्द होता है । कंठ से आवाज़ भारी निकलती है । देखने से कंठ लाल और छोटा लटका दिखाई देता है । खासी ठहर २ कर बराबर होती रहती है । रोगी चिह्नचिह्न हो जाता है । बच्चों में रात को कनवलशन Convulsion (एक मुख्य प्रकार की फूँठन) होती है । किसी २ के पेट में भारीपन या दर्द होता है । घमन भी होता है ।

स्वर से चार दिन या छ दिन, कभी इससे भी अधिक समय में, प्रथम मस्तक पर, उपरान्त छाती और हाथ पैरों में, छोटे २ नामा भाति के कब्बे और लाल बिंदु निकलते हैं । दाने कोई लाल कोई गुलाबी या लाल काले या लाल पीले रंग के होते हैं । रगत दधाने से दूर और दधाव हटाने से ज्यों की त्यों हो जाती है । बारह घंटे तक ये दाने बराबर

निकलते और बढ़ते रहते हैं, एक दूसरे से ये दाने यों मिलते हैं कि दूज के चन्द्रमा की शक्ल बन जाती है । लेकिन जब अधिक दाने निकलें तो कोई शक्त नहीं जान पहचानती । कभी २ टीके के समान या चक्के की भांति के दिखाई देते हैं । किन्तु यह उसी समय जब कि दाने बहुत ही अधिक निकलें हैं । जब यह सुरक्षाने लगते हैं तो लिफ्ट की रगत तब के सदृश हो जाती है । और भूरी रहने लगती है । किसी २ के चमड़े में जलन और दर्द होता है । हाथ और कान के भीतर सूजन फैल जाती है । किसी २ को इसके फल से बहुत समय तक दस्त आने लगते हैं । मुद्दत इसकी १२ घंटे से लेकर ४ दिन तक है ।

सम्मिलित रोग—“कूप” (एक प्रकार की खांसी) “डिफ्थीरिया” (कंठ में कूटी किल्ली उत्पन्न होने का रोग) “ब्रोंकाइटिस” (खांसी) “केपलरी ब्रोंकाइटिस” (केफड़े की-पतली २ लोहू की रंगों की सूजन) “ब्रोंकोप्युमोनिया” “लाङ्ग्यूलर प्युमोनिया” (केफड़े के लोचड़ों की सूजन) “कोलेप्स” (ठंडा पड़ जाना) “पाइसिस” (क्षयी) आदि रोग इस रोग से आ-मिलते हैं ।

परिणाम—परिणाम उस दशा में जब कि ऊपरकहे सम्मिलित रोग न आ-मिले हों तो अच्छा है ।

२ कठिन (मेलिंगनेन्ट^१)-लक्षण-भादि से ही इसमें अशुभ लक्षण उदय होते हैं । सब लक्षण सज्जियातिक (टाईफाइड) होते हैं । इस रोग में केफड़े में लोहू जन जासा है या केफड़ा

^१ इसकी आर्बीलाई ब्रोपीयोसिस-डेमोरेलिक-और डिस्त्रिपक भी कहते हैं ।

मनुष्य की सुना में दामिला किया तो उसे भी वैसे ही लक्षण प्रगट हुए जैसे कि पहिले मनुष्य को हुए थे । फिर क्या था, फिर तो हजारों पर उन्हेंने इस कार्य को किया और पूरी सफलता प्राप्त की । जिन पर यह कार्य किया गया वे भीतला रोग से बच गये । सुनते हैं कि इस नवीन रीति से प्रथम हो सरकार ने एक लाख रुपये हायटर साह्य को पारितोषिक स्वरूप प्रदान किया । जब से यह टीका प्रचलित हुआ है तब से भीतला रोग भारत वर्ष में बहुत घट गया । टीका लगे हुए मनुष्यों को प्रथम तो यह रोग होता नहीं और यदि हो भी तो सरल (मोहीकाइह) प्रकार का होता है । पहिले की भांति भयात्तिक नहीं होता ।

टीका लगाने पर हलका ज्वर होता है जो तीन चार दिन तक रहता है, और किसी प्रकार का श्लेश नहीं होता । तीन चार दिन के पीछे जहां टीका लगा हो वहां एक फुसी निकलती है । इसी दशा में यदि भीतला निकल आवे तो दाने बहुत कमजोर और बहुत जल्य सूख जाने वाले होते हैं । पीप पड़ आवे तो छे या सात दिन में आरोग्य हो जाता है ।

कौन सी दशाओं में टीका नहीं लगाना चाहिये ? जब बच्चे को दात निकलते हो या दांतों के कारण पसले दस्त होते हों, ज्वर आता हो, बच्चा बहुत ही निर्यल हो, या चर्म रोग आदि से पीडित हो, तो टीका अच्छे होने पर लगार्थे ।

टीका लगाने से हानि—जब एक बच्चे की पीप दूसरे बच्चे में पहुंचाई आवे तो सम्भव है कि पहिले बच्चे के चैतक रोग दूसरे में भी प्रवेश कर जायें । अर्थात् एक लहके के घाव को गर्मी, कोइ, कठनाला, या ज्वर आदि रोग हुए थे और उन

रोगों का असर वीर्य द्वारा उस बच्चे के रुधिर में विद्यमान था । अब उस बच्चे का लिम्फ (टीके की पीप) जब दूसरे निरोगी बच्चे की भुजा में पहुँचायेंगे तब ऊपर कहे हुए पहिले बच्चे के पैतृक रोग अवश्य दूसरे बच्चे के रुधिर में प्रवेश कर जायेंगे । इस दोष को अब सभी विद्वानों ने स्वीकार कर लिया है । इसी से सरकार ने अब शहरो के लहको के लिये गोयन की शीतला का अंश प्रचार किया है । कारण कि शहरो के लहके गाँवों के लहको की अपेक्षा छूत तथा वैदक रोगों के अधिक भागी होते हैं । सरकार यदि गाँवों में भी गोयन के टीके (Cowpox) का प्रचार कर दे तो इस विषय हानि से बहुत ही रक्षा हो ।

रोगी होने पर इस रोग से रक्षा पाना ।

रोगी को सब से अलग साफ कमरे में साफ बिस्तर पर लिटावें । इकीम, वैद्य, और टहलुए इस रोग की छूत से अपने को बचाकर रोगी की सेवा करें । फुसियों के निकलने से पहिले ज्वर की साधारण चिकित्सा करें । चिकित्सा में मुख्य नियम ये हैं—

पहिला—खुजली को कम करें और रोगी को खुजलाने न दें । इस कार्य के लिए गुनगुने पानी में "स्पन" या "सौलिया सिंगो" कर शरीर को पोछें । या कोई सूखा घूर्ण जैसे आटा, या आटे का गूदा, (स्टार्च) हेयर पौडर, छनी हुई कही की राख आदि छिड़कें । बच्चों के हाथों में धौली सी कर पहिरावें जिससे वे खुजलाने न पावें ।

दूसरा—दाग न पड़ने पावे इस कार्य के लिए प्रथम मुख के दागों को सई से छेद कर पीप निकाल दें । इस विधि

के करने से दाग नहीं पड़ने पाते । नुसखे जो इस काम के लिये बर्तते जाते हैं नीचे लिखे जाते हैं ।

नाइट्रेट आफ सिल्वर—१० ग्राम

गुलाब जल—१ औंस

मिलाकर फुरेरी के द्वारा कुसियो पर लगावें । या पारे का भरहम—२५ भाग

ओम—१० भाग

अलकतरा—६ भाग

मिलाकर कुसियो पर लगावें ।

कार्बोलिक एसिड ४० ग्राम एक औंस जैतून के तेल में मिला कर लगावें । कार्बोलिक सोडन या कार्बोप्र सोडन, सलफ्यूरस एसिड, कार्बोनिक एसिड और क्लोरिन वाटर आदि गुनगुने पानी में मिलाकर शरीर को पोंछें ।

गंधक एक ड्राम, नक्सन एक औंस, मिलाकर लगावें । इन दवाओं के लगाने से कुसियां वायु से बची रहती हैं, और उनमें जलन आदि नहीं होती । बसु और सुमलाहट दूर करने को नीचे लिखा नुसखा बहुत लाभदायक है ।

आयडोफार्म—३० ग्राम

कैल्शियम (कपूर)—६० ग्राम

वेसलीन—६०० ग्राम

मिलाकर दामों पर लगावें । या

कपूर—२ ड्राम

तिक्ष्ण वा जैतून का तेल—२ औंस

मिलाकर सारे शरीर पर लगावें । या जैतून के तेल में कैलेमिड मिलाकर लगावें । जब निर्यलता अधिक हो तो

३७० छूतवाले रोग और उनसे बचने का उपाय ।

लोहा मिश्रित औषधियाँ, सविरा, एमोनिया निक्सत्र, आदि दें । गले में दर्द हो तो—

टिक्चर मुर-१ औंस

मधु (शहद)-१ औंस

गुलाब जल-८ औंस

मिलाकर कुन्नी करावें ।

आँखों को ठंडे जल से साफ करते रहें । पानी में रस कपूर या फिटकरी मिलाकर आँख में डालें या कपड़ा भिगे कर ऊपर रखें । दानों में दिक्कती निकलने के बाद घाव हो तो आक्साइड आफ जिंक पी में मिलाकर लगावें । आरोग्य होने पर कार्बोलिक सोप लगाकर स्नान करावें । सीढ़ा तेल या मक्खन लगावें । कोमेन, नाइट्रो-ग्लूट्रिण एसिड, बिरा, यस्ता, या क्वासिया, के पानी में मिलाकर पिलावें । या मछली का तेल पिलावें । हल्का पप्य, जैसे दूध, शोरबा, घखनी सेगो, आदि खाने को दें । आँख में घाव हो तो कास्टिक सोडम डालें । स्वास्थ्य रक्षण पर पूरा ध्यान रखें ।

—०—

२ चिकिन पाक्स-CHICKEN POX-वेरीसिला ।

यह भी एक प्रकार का छूतदार रोग है । इसमें भी साफ दाने शरीर पर निकल आते हैं । इसे भारतवासी मोतिया शीतला या 'हुलारी माता' कहते हैं । यह बारह वर्ष से कम उम्र वालों को होता है । कभी एक बार और कभी दुबारा भी होता है । जवान मनुष्य और स्त्रियों को भी कभी २ सताता है ।

कारण—पुराने लोगो का क्यान था कि यह भी एक प्रकार की शीतला है, किन्तु परीक्षा ने इस पुराने विचार को असिद्ध ठहराया और यह सिद्ध किया कि शीतला से इस रोग का कुछ भी सम्बन्ध नहीं। यद्यपि यह रोग भी शीतला की भाँति वायु द्वारा और स्पर्शास्पर्श द्वारा, दोनों प्रकारों से, आक्रमण करता है और वैसा ही छूत दार भी है, तथापि इसको शीतला नहीं कह सकते । क्योंकि इसके विष में और शीतला के विष में बहुत ही अन्तर है ।

लक्षण—लक्षणों को दो वर्गों में वर्णन करेंगे ।

१ सरल—तीन चार दिन तक कोई मुख्य लक्षण नहीं प्रगट होता, पीछे सरल ऊपर होता है । ऊपर के २४ घण्टे या ३६ घण्टे पीछे पहिले छाती और कंधे पर, फिर हाथ और पैरों में, एक के पीछे एक, साफ दाने या छाल चमकदार फुसियाँ निकलती हैं । कभी २ सिर पर भी निकलती हैं । इन दानों में कठोरता नहीं होती, और न मुख पर इनकी अधिकता होती है । फुसियों को यदि स गली से दबावें तो गाली दूर हो जाती है किन्तु हटाने से फिर ज्यों की त्यों हो जाती है । कुछ २ मस्तक में पीडा और खाँसी के सिवाय और कोई शारीरिक क्लेश नहीं होता । दाने गोल अंडे की भाँति के होते हैं । और इनके चारों ओर शीतला की भाँति छाल घेरा नहीं होता । जब जल गढ़ा होता है तब कुछ छाली दिखाई देती है । शीतला की भाँति न तो इसके दाने खानेदार होते हैं, और न इनमें गन्धा पड़ता है । छेद करती ही कुछ जल निकल जाता है । तीसरे दिन से पाँचवें दिन के भीतर दाने फूट कर पतली दिखली, पूरी या टुकड़े

३७४ सूतवाले रोग और समसे बचने का उपाय ।

निकलते और बढ़ते रहते हैं, एक दूसरे से ये दाने यों मिलते हैं कि दूध के चन्द्रमा की शक्ल बन जाती है । लेकिन जब अधिक दाने निकलें तो कोई शक्त नहीं जान पड़ती । कभी-कभी टीके के समान या चकते की भांति के दिखाने देते हैं । किन्तु यह उसी समय जब कि दाने बहुत ही अधिक निकलें हैं । जब यह सुरक्षाने लगते हैं तो, निरुद्ध की रगत तब के सहृण हो जाती है । और मूरी रुकने लगती है । किसी-किसी के थमड़े में जलन और दर्द होता है । हाथ और कान के भीतर सूजन फैल जाती है । किसी-किसी को इसके फल से बहुत समय तक दस्त आने लगते हैं । सुदृढ़ इसकी १२ घंटे से लेकर ७ दिन तक है ।

सम्मिलित रोग—“क्रूप” (एक प्रकार की खांसी) “डिफ्थीरिया” (कंठ में झूठी झिल्ली, उत्पन्न होने का रोग) “ब्रोंकाइटिस” (खांसी) “केपलरी ब्रोंकाइटिस” (केकड़े की पतली २ सोड़ की रंगी की सूजन) “ब्रोंको न्यूमोनिया” “लाङ्ग्यूलर न्यूमोनिया” (केकड़े के सोड़ की सूजन) “कोलेप्स” (ठंडा पड़ जाना) “पाइथिस” (कयी) आदि रोग इस रोग से आ मिलते हैं । -

परिणाम—परिणाम उस दशा में जब कि ऊपरकहे सम्मिलित रोग न आ मिले हों तो -

२. फठिन (मेलिगनेन्ट)-लक्षण-मादि

लक्षण उदय होते हैं ।

होते हैं। इस रोग में

१. इसकी मायसिद्धी

भी कहते हैं ।

सूज जाता है। दाने काले या नीले रंग के निकलते हैं। पैरों में छाल पड़ने पड़ जाते हैं। सुभायी क्रिप्पियों से लोहू बढ़ता है। पेशाब में अलक्यूमिन^२ मिलता है। अंत में बेहोशी होकर रोगी परलोक गमन करता है। यह खसरे का सघातिक भेद है। इसमें आंख, नाक, और कान में मृज्ज हो जाती है। किसी २ को दस्त आने लगते हैं जिससे रोगी का अंत हो जाता है।

परिणाम—यह रोग असाध्य है।

चिकित्सा—(१) रोग से बचने का उपाय—प्रायः वही है जो शीतला में लिख आये हैं। बच्चों को इसके रोगी से दूर रखें।

(२) रोगी की रक्षा दो प्रकार से होती है।

(क) औषधी द्वारा सरल प्रकार की चिकित्सा। रोगी को उस समय तक, जब तक कि खांसी आदि दूर न हो, वायु में न निकालें। छाती के कोड़े रोग, जैसा ऊपर कह आये हैं, हो। तो किसी अच्छे वैद्य द्वारा परीक्षा कराकर चिकित्सा करावें। रोगी को सब से अलग अंधेरे कमरे में, जिसकी गर्मी ६५ दर्ज की हो, रखें। यदि शरदऋतु हो तो गर्म लुआदि से कमरे की गर्मी ६५ दर्ज की कर लें। कमरे की यह गर्मी आरोग्य होने तक रहनी चाहिए। साफ बिस्तर और साफ कपड़े रोगी को पहिरावें ओढावें। सफाई का ख़ास ध्यान रखें। पतली और हलकी पथ्य जैसे गर्म २ दूध, (यदि निबलता हो तो ब्रांडी मिला कर) पिलावें। शोरवा, सेगो आदि भी दे सकते हैं। इस बात का ध्यान रखें कि

२ एक दर्ज की भांति लघुदाय भूषांय है।

निकलते और बढ़ते रहते हैं, एक दूसरे से ये दाने यों मिलते हैं कि दूग के चन्द्रमा की शकल बन जाती है । लेकिन जब अधिक दाने निकलें तो कोई शक्त नहीं जान पड़ती । मर्जी १ टीके के समाप्त या चकते की भांति के दिखाई देते हैं । किन्तु यह उसी समय जब कि दाने बहुत ही अधिक निकलते हैं । जब यह सुरक्षित लगते हैं तो निरुद्ध की रगत तब के सङ्ग हो जाती है । और मर्जी चढ़ने लगती है । किसी १ के चमड़े में अलन और दर्द होता है । हाथ और कान के भीतर सूजन फैल जाती है । किसी २ को इसके फल से बहुत समय तक दस्त आने लगते हैं । मुद्ग इसकी १२ घंटे से लेकर ७ दिन तक है ।

सम्मिलित रोग—“कूप” (एक प्रकार की खांसी) “डिफ्थीरिया” (कंठ में झूठी झिल्ली उत्पन्न होने का रोग) “ब्रोंकाइटिस” (खांसी) “केपलरी ब्रोंकाइटिस” (फेफड़े की पतली २ लोहू की रंगी की सूजन) “ब्रोंको न्यूमोनिया” “लाङ्ग्यूलर न्यूमोनिया” (फेफड़े के लोचड़ों की सूजन) “कोलेप्स” (ठंडा पड़ जाना) “पाइसिस” (क्षयी) आदि रोग इस रोग से आ मिलते हैं ।

परिणाम—परिणाम उस दशा में जब कि ऊपरकहे सम्मिलित रोग न आ मिले हो तो अच्छा है ।

२. कठिन (मेलिगेनेन्ट)—लक्षण—आदि से ही इसमें अग्रिम लक्षण उदय होते हैं । सब लक्षण सणिपातिक (टार्फाइट) होते हैं । इस रोग में फेफड़े में लोहू जन जाता है वा फेफड़ा

१ हजकी मार्चोलाई मेवीयोसिस-हेमोरेजिक--यौट मिलियन भी कहते हैं ।

सृज जाता है । दाने कासे या नीले रंग के निकलते हैं । पैरों में छाल पड़ने पड़ जाते हैं । छुनायी फ्रिक्चियों से लोहू बहता है । पेशाब में अलब्यूमिन^२ मिलता है । अतः में देखीयी होकर रोगी परलोक गमन करता है । यह लसरे का सपातिक मेव है । इसमें आख, नाक, और कान में सूजन हो जाती है । किसी २ को दस्त आने लगते हैं जिससे रोगी का अत हो जाता है ।

परिणाम—यह रोग असाध्य है ।

चिकित्सा—(१) रोग से बचने का उपाय—प्रायः वही है जो शीतला में छिछ जाये हैं । बच्चों को इसके रोगी से दूर रखें ।

(२) रोगी की रक्षा दो प्रकार से होती है ।

(क) औषधी द्वारा सरल प्रकार की चिकित्सा । रोगी को उस समय तक, जब तक कि खाँसी आदि दूर न हो, वायु में न निकालें । छाती के कोई रोग, जैसा ऊपर कह आये हैं, हों। तो किसी अच्छे वैद्य द्वारा परीक्षा कराकर चिकित्सा करावें । रोगी को कम से अलग अंधेरे कमरे में, जिसकी गर्मी ६५ दर्ज की हो, रखें । यदि शरदः ऋतु हो तो गर्म लाल आदि से कमरे की गर्मी ६५ दर्ज की कर लें । कमरे की यह गर्मी आरोग्य होने तक रहनी चाहिए । साफ बिस्तर और साफ कपड़े रोगी को पहिरावें ओढावें । सफाई का ख़ास ध्यान रखें । पतली और हलकी पथ्य जैसे गर्म २ दूध, (यदि निर्बलता हो तो घाही मिला कर) पिलावें । शीरवा, सेगो आदि भी दे सकते हैं । इस बात का ध्यान रखें कि

३७६ खून वाली रोग और उनसे बचने का उपाय ।

क़ख़ न होने पावे । यदि हो तो रेशी का तेल वा "मेगनेसिया सल्फ़ास" (साइट) आदि देकर घेठ साफ़ करें । रोगी के समीप अधिक भीड़ न जमा हो, इस पर ध्यान रखें । यदि खांसी और ज्वर दोनों अधिक हों तो यह नुसखा--

लाइकर एमोनिया एसीटेटिस १ ग्राम

वाइनम्, इपीका केवाना १५ ग्राम

टिक्चर कैम्फर कम्पौण्ड १५ ग्राम

कैम्फर वाटर १ औंस

मिलाकर ऐसी एक मात्रा एक सप्ताह पुरुष को हर २ या ३ घण्टे पीछे पिछावें । खांसी का ठसका दूर करने को लिसेबे की माजून बच्चों को चटावें ।

यदि लेरिक्स (वायु की जाली) में सूजन हो जाये तो गले पर "टिक्चर आयडीन" लगा कर सेंक करें । गर्म खीले हुए जल की भाप कंठ में पहुँचावें । प्यास की अधिकता में ठंडी चीज़ें, जैसे बर्फ़, सोडा, वा क्लोरेट आफ़ पुटासियम आदि दें । यदि छाती में दर्द हो तो, गर्म जल में पोर्ले की होठी डाल कर सेंकें । या कड़ु पत्ते में तारपीन मिलाकर मलें । अलसी की लिहरी बना कर बाँधें । या राई का हास्टर लगावें । यदि निर्यालता अधिक हो और खांसी भी जोर करती हो तो यह नुसखा--

एरोमेटिक स्पिरिट आफ़ एमोनिया १ ग्राम

स्पिरिट क्लोरोफ़ार्म ९० मिल्ल

ग्रांली ९० मिल्ल

सिरप आफ़ इसकुबल १ ग्राम

वाइनम् इपीका १५ ग्राम

कैम्फर वाटर ३ औंस

मिठाकर इसमें से एक से तीन घाल तक के बालक को एक-
या दो द्राम की मात्रा हर ३ या ४ घण्टे पीले दें । छाती को
गर्म रखें, सर्दी से बचावें ।

(ख) औपची द्वारा कठिन प्रकार की चिकित्सा । यह
रोग असाम्य है तो भी रोग आरम्भ होते ही बलकारक
औपचि देना उचित है । फुसिया घैठ गई हो तो गर्म जल
से स्नान करावें । और गर्म जल पीने को भी दें । श्वाभ को
गर्म जल से फुटवाय (घुटने तक पैर धोया) करें । आदि
ही से स्टिम्पुलेंट मिक्चर देना आरम्भ करें । पतली,
हलकी, और शीघ्र पचने वाली पच्य दें । हो सके तो जल
वायु का परिवर्तन करावें । इस रोग में शरीर के आचे
नीचे के चर्ब को लकवा मार जाता है । ऐसी दशा में लोहा-
निमित्त औपचियां दें । नीठा लेडिया आदि लेड में मिला-
कर मालिश करें ।

स्कार्लेटिना—वा-स्कारलेट् फीवर-शालज्वर ।

SCARLETINA OR SCARLET FEVER.

यह एक तेज छूतदार ज्वर है जो शहरों के गरीबों
को अधिक होता है । इसमें ज्वर के साथ लाल रंग की
फुसिया शरीर पर निकलती हैं । कंठ के भीतर की लुमायी
फ्लिक्सी (म्युकस मेंब्रेन) सूज जाती है । घरघात के बाद
यह इपीडेमिक (मरी) होता देखा गया है ।

कारण-मुख्य कारण छूत है जो दोनों प्रकारों से,
अर्थात् वायु द्वारा और रोगी द्वारा भी, लग सकती है ।
नितनी ही कम अवस्था में यह रोग हो उठना ही अत्यन्त
समझा जाता है ।

३१८ छूत वाले रोग और उनसे बचने का उपाय ।

यह रोग तीन प्रकार का होता है । पहिला "लेटिना सिप्लिषमा" (सरल), दूसरा "स्कारलेटिना इजिनेस (कठिन), तीसरा "स्कारलेटिना मेलिगना" (घातक) ।

(१) स्कारलेटिना सिप्लिषमा (सरल)

इसमें छूत लगने के चार छे दिन बाद कंठ में इन्फ्लेमेशन होती है । गले में दर्द होने से कोई वस्तु निगल नहीं जाती । उपरान्त जाड़ा देकर १०४ १०५ दर्जों का उबर आता है । नाड़ी उछलने लगती है । प्यास अधिक होने लगती है । भूख कम हो जाती है । जीभ मैली, दो एक दिन बाद छाल रंग की हो जाती है । उबर के एक दो दिन बाद साफ और छाल रंग की फुनिया, पहिले कंठ, फिर छाती, हाथ, पैर और अंत की पैर पर निकलती हैं । अर्थात् ऊपर से नीचे की क्रमशः फुंसिया उतरती और बढ़ती जाती है । उपरान्त फुंसिया आपस में एक दूसरे से मिलकर एक एक छाल और छाल धब्बे की शकल में बदल जाती हैं । धब्बे की रचना (चमड़ा) खरदूरी और ऊँची नीची होती है । धब्बे की धवि उगली से दबावें तो छाली दूर होकर धब्बे की रंग के हो जाती हैं । परन्तु दबाव हटाने से फिर उर्ध्व के त्र्यो दिशाई देते हैं । जोड़ों की मोड़ पर अधिक छाली होती है । चमड़े में जलन, खुजली, कहीं २ पर सनाव और पीड़ा, होती है । फुंसियां तीन चार दिन तक बराबर निकलती रहती हैं । उपरान्त मुरझाने लगती हैं । फुंसियों के निकल जाने पर उबर और अधिक, अर्थात् किसी २ में १०८-११० दर्जों तक का, हो जाता है । उबर की आवाज नाड़ी की गति में बढ़ जाती है । पाँच छे दिन में आरोग्यवाचस्प

जा जाती है । कंठ की गिलटिया घटकर छाल हो जाती,
और छूने से तनमें दर्द होता है । इसीके साथ २ कौठवा
और कंठ साष्ट की कुल गिलटिया सूज जाती हैं । मूत्र कम,
छाल रग का, निकलता है । रोगी निर्बल तथा चिह्नचिह्ना
हो जाता है । दुर्बलता के कारण हाथ पाव काँपते हैं ।
किसी २ का ज्वर (यकृत छिन्न) और सिन्नी (पिल्ली-
रुझीन) बढ़ जाते हैं । तीन चार सप्ताह तक यही दशा रहती
है । पीछे चमड़ा सूख कर घड़े २ छिलके, जो आरम्भ में
हथेली से दस्तानों की भाँति के निकलते हैं, उहने लगते
हैं । इसी समय मूत्र की परीक्षा करने से "एल्ब्यूमिन"^१
मूत्र में पाया जाता है । और कंठ की सूजन में भी कमी
हो जाती है । थोड़े २ क्रेश कम होने लगते हैं । इसी समय
सम्मिलित रोगों के निलने का बड़ा भय रहता है ।
कभी २ सरल से कठिन और कठिन से घातक प्रकार में
बदल जाता है ।

(२) स्कारलेटिना इजिनोसा-कठिन-इसमें ज्वर
की तेज़ी के सिवाय चमन और दस्त भी लग जाते हैं । कंठ
और कौठवे में सूजन के सिवाय घाव पड़ जाते हैं । कूँठी^२
किन्नी कंठ में उत्पन्न होती है । कंठ की नसें तन जाती हैं
और तनमें दर्द होता है । कभी जाती और कभी हाथ पर
अभियमित घड़े निकलते और शायब होते रहते हैं । घड़ों
की मौजूदगी में ज्वर तेज़ होता है । कंठ की पीड़ा अधिक
दिन तक चमी रहती है ।

१ एक लघुदार घड़े की लफेदी या फटे मूष की भाँति की
वस्तु को मूत्र परीक्षा करने से मूत्र में मिलती है ।

२ देखी डिफ्थीरिया रोग ।

३८० रूत वाले रोग और समसे बचने का सपाय ।

(३) स्कारलेटिना मेलिगना-घातक-इसमें रोगी २४ घण्टे ही का मेहमान होता है । इसमें कठिन प्रकार के लक्षण के सिवाय, रोगी ठंढा पड़ जाता है ।

माही सूज सी चलती है । सन्निपातिक लक्षण आरम्भ ही से बढ़ते होते हैं । मूत्र में एल्ब्यूमिन मिलता है । कंठ में सड़े घाव हो जाते हैं । मुँह से दुर्गंध आने लगती है । जीभ की रंगत भूरी हो जाती है । उबर यदि हो तो रोगी अकम्पक बचता है । दात पर मेल, ओठ फाटे, और सन पर पपड़ी जम जाती हैं । छाल कांछी कुसिया निकल कर समा जाती हैं । मूत्र बद हो जाता है । कंठ के सड़े घाव से लोपड़ा निकलने पर छोड़ बहने लगता है । यूरीकोमा^१, या हृदय आदि के कारण रोगी सदैव के लिए इस दुनिया से कूब कर जाता है ।

सम्मिश्रित रोग और फल-गुर्द^२ में सूजन होना, गठिया, एंडो में पीप पड़ना । किसी २ में हृदय की सूजन, “पैरीकाडीइटिस” (हृदय को ढांकने वाली झिल्ली की सूजन) आदि, और किसी २ को “सूरसी” (फेफड़े की सूजन) “म्यूनोनिया” (फेफड़े की सूजन) “पाइलिस”, तबी, “ओटोरिया”, (कान बहना) “ओटरइटिस” (कान की सूजन) “एलफ्टिवाइटिस” (आंख की झिल्ली की सूजन) “स्क्राफ्युला” (कंठमाला), “अलसर्स” (घाव), “डिफ्थीरिया” (भूठी कंठ की झिल्ली), “पेरालेसिस” (लकड़ा), “आरग्रा-

^१ मूत्र बद होकर इधर में मिल जाने की दशा को “यूरीकोमा” कहते हैं ।

^२ यही अधिक होता है ।

दृष्टि" (जोड़ों में पीप पड़ना), आदि रोग होते हैं। किसी २ के केफह में पीप पड़ जाती है। जोड़ २ बहरे हो जाते हैं।

चिकित्सा । दो प्रकार की है (क) रोग से बचने का उपाय । (ख) रोगी होने पर रक्षा ।

(क) पहले प्रकार की चिकित्सा और उपाय उसी प्रकार करें जैसे 'शीतला' में वर्णन कर आए हैं। इसकी छूत खसरे की भांति रोगी के शरीर से भाप की भांति निकलती है। रोगी से दूर रहना ही उचित उपाय है। इनके सिवाय इस रोग की छूत रोगी के असबाब, सामान में भी विद्यमान रहती है। दूध आदि खाद्य पदार्थों में भी मिल जाती है। वैद्यों और परिचारकों के द्वारा भी छूत लग सकती है। अस्तु इन कारणों से बचके रहना चाहिए।

(ख) रोगी की रक्षा सरल में जब छिलका सतारने लगे तो सुबह शाम एक छटांक तिछी, चमेछी, या जैतून के तेल में ४० घूँद कार्बोलिक एसिड मिला कर सारे शरीर में लगावें। अलग साफ कमरे में साफ वस्त्रों को ओढ़ा बिछा कर रोगी को लिटावें। हलकी पायक और ठही पथ्य लिखावें। ठही चीजों को पिखाना भी उचित है। कठ पर गर्म जल में पोस्त की होही या अफीम डाल कर सेंक करें। या "कांहीज़ लोशन" "सलफ्यूरस एसिड" की भाप कठ में पहुँचावें। कठिन में ठहे पानी में तौलिया या स्पंज सिंगो कर शरीर को पोछें। कठ में गर्म जल की भाप, जैसा सरल में वर्णन किया है, पहुँचावें। "क्लोरेट आफ पुटाश" पानी में मिलाकर फुझी करावें। और इसी दवा को २० सेन

३८२ छूत वाली रोग और उनसे बचने का उपाय ।

की मात्रा में २ या ३ घन्टे पीछे खाने को दें । या इसकी टिकिया १ मुह में रखकर रस चूसें ।

क्लोरेट आफ पुटाश २० ग्राम

टिकचर सिन्कोना कम्पीयेड २० ग्राम

पानी १ औंस

यह जुसखा मिला कर ऐसी एक मात्रा तरुण पुरुष को प्रत्येक ३-३ या ४ घन्टे पीछे पिलावें । या

कुइनाइन ५ ग्राम

टिकचर स्टील २० या ३० ग्राम

स्पिरिट क्लोरोफार्म १० ग्राम

पानी १ औंस

हायल्यूट एसिड नाइट्रोडिड्रोक्लोरिक १० ग्राम

मिला कर ऐसी एक मात्रा तरुण रोगी को २ या ४ घन्टे पीछे दें ।

मेसिजनेट अर्षात् चायक में स्टिम्गुलेंट जैसे—

एरोमेटिक स्पिरिट आफ एनोलिया २० ग्राम

क्लोरिक ईथर २० ग्राम

स्पिरिट ईथर २० ग्राम

ब्राडी २ ग्राम

डिक्वाक्शन सिनकोना १ औंस

मिला कर ऐसी एक मात्रा एक तरुण रोगी को प्रत्येक दो या तीन घन्टे पीछे पिलावें । शुर्दे में सूजन हो तो खाली सींगी, या अलसी की छिपड़ी, अथवा राई का मास्टर, लगावें । गर्म पानी का नफारा दें । सरसों का तूर्य

गर्भ जल में भिठा कर स्नान करावें । अचेतता के समय गर्दन के पीछे डिस्टर (छाछा डालने वाली औषधि) लगावें । कृष्ण हो तो जेलप, मेगनेशिया -आदि शक्ति देव कर दें । गर्भ २ दूध, शोरधा, सैगो आदि खाने को दें । साफ कपड़े बदल २ कर पहिरावें औढ़ावें । आरोग्य होने पर फलकारक औषधि (टानिक दवायें) दें ।

जर्मन मीजिल्स*—कृत्रिम खसरा

GERMAN MEASLES.

यह भी छूतदार रोग है, इसमें लाल ज्वर और खसरा दोनों के लक्षण मिले जुले पाए जाते हैं ।

कारण—छूत जगमे से होता है । यह प्रत्येक अवस्था में प्रत्येक समुदाय को हो सकता है ।

लक्षण—ज्वर, बुकास सब खसरे की भांति के होते हैं, किन्तु लक्षण उससे हलके प्रगट होते हैं । कंठ में घूलन भी होती है । खसरे की भांति सारे शरीर में फु सिया तो निकलती हैं, किन्तु शकल दूध के चन्द्रमा की भांति इसमें नहीं होती । हा, लालज्वर के दाने से ये दाँते कुछ ३ मिलते हैं । दाँते यह में अधिक निकलते हैं । दाँतों के निकलते ही ज्वर जाता रहता है । चार पाँच दिन, कभी दस बारह दिन, में दाँते मुरझा कर मूसी सहने लगती है ।

परिणाम—अच्छा है । इसमें कोई सम्मिलित रोग नहीं उत्पन्न होता ।

१ इसे रोयसेन या क्वीकला नामा भी कहते हैं । सम्भव है कि यह रोग जर्मनी का हो रानी से इसे जर्मन मीजिल्स कहते हैं ।

३८४ छूत वाले रोग और उन से बचने का उपाय ।

चिकित्सा—खसरे, और स्कारलेट फीवर (लाछ ज्वर) की भांति चिकित्सा करें ।

डिफ्थीरिया—भूठी झिल्ली-(घुंघुडी)

DIPHTHERIA

यह बहुत घुरी छूतदार बीमारी है । इसमें एक प्रकार की भूठी झिल्ली हलक में उत्पन्न होती है ।

कारण—मुख्य कारण छूत है । लड़के अधिक इस रोग में ग्रसित होते हैं । कभी २ जगहों को भी हो जाता है । रोगी के मुख की राख बहुत ही छूतदार होती है । झिल्ली और राख में विष लगा रहता है । यदि राख का अथ दूसरे मनुष्य को लग जाये तो यह रोग हो जाता है । खास द्वारा भी छूत लग जाती है । कभी २ यह विष वायु में मिल कर बड़ा उपद्रव मचाता है । हकीम और दवाखाने जो औषधि खादि पिलाते या लगाते हैं उन्हें यह सहज ही हो जाता है और उनके द्वारा अन्य मनुष्यों में भी फैल जाता है । चाहे जिस स्थान की छुमायी झिल्ली पर ऐसे रोगी की राख लगा देखिये, तुरत भूठी झिल्ली वहा बन जायगी ।

लक्षण—जब इस रोगी की छूत किसी निरोगी मनुष्य के शरीर में प्रवेश करती है, तो सात आठ दिन तक कोई प्रत्यक्ष लक्षण नहीं उद्भूत होते । केवल, कभी २ काढ़ा सा लगता है, जो मचलाता और भस्मक में पीड़ा होती है । उपरान्त कंठ की जड़ें तन कर कंठ के भीतर पीड़ा होती है, कंठ की सारी गिलटियां सूज जाती हैं । उनमें गांभी और पीड़ा बढ़ जाती है । मुख खोल कर

देखने से कठ के चारों ओर ऐसी लाली दिखलाई पड़ती है मानों दू गुर लगाया गया है । या-तो यहीं से रोग लौट जाता है, या और आगे बढ़ कर लेरिस्स (हवा की मछी) को भी घेर लेता है, उस समय सास लेने में पीड़ा और हेश नाम पड़ते हैं । यदि सूजन फेरिस्स (भोजन की मछी) में फैले तो चपाने और निगलने में कष्ट होता है । जिसभाही यह रोग आगे बढ़ता जाता है उतनाही कठिन होता जाता है । इसी दशा में नर्म तालू और उसके पिछले भागों पर कुछ घूमेले रंग के बिंदु प्रगट होते हैं । पश्चात् ये बिंदु एक दूसरे से मिलकर एक उबेतपीत अथवा मलाई की पर्त, या उबेत चमड़े की भांति की क्रिझी, में बदल जाते हैं । क्रिझी मुख की लुभावदार क्रिझी में जुड़ी होती है । एक बार यदि निहाल दें तो फिर उसी स्थान में दूसरी झूठी क्रिझी उत्पन्न हो जाती है । कभी २ यह गाल, नाफ, और मुख के भीतर की सब जालियों में फैलकर मयानक फल उत्पन्न करती है । कभी २ यह क्रिझी चढ़ कर काली पड़ जाती है, और कभी गल कर गिर पड़ती है । जहाँ से गिरती है वहाँ घाव हो जाता है । कभी २ घाव भी गलने लगता है, जिससे रोगी के मरने में संदेह नहीं होता ।

यह तो दुर्घट झूठी क्रिझी की कथा, अथ शारीरिक लक्षणों की दशा का भी कुछ वर्णन करना अनुचित न होगा । कठ में जिसभी कि सूजन होती है उतना दर्द नहीं होता । तब धीरेधीरे और निर्वलता बहुत सताती है । ज्वर तेज़ और नाही जल्द २ चलने लगती है । कठ की गिलटिया सूज

६८ छूतघाले रोग और उनसे घबने का उपाय ।

जाती हैं। मुख से राल बहती है। कुछ दुर्गंध भी आती है। कभी २ नाक और मुँह से लोहूँ निकलना पड़े। सूत्र में “एल ठपूभिन” मिलता है। शरीर पर धड़कें निकल आते हैं। ये धड़के छाल और अम्होरी की रगेत के, कभी एरिसिपे-लस् की भाँति के, होते हैं। वायु की माली में क्लिष्टी हो तो श्वास क्रिया में कष्ट हो जाता है और श्वास की माली रोग ग्रस्त होने से कुछ खाया पीया नहीं जाता। कभी नाक की लुमाखी क्लिष्टी ग्रस्त हो कर नाक का द्वार बंद कर देती है। गर्दन की गिलटियाँ बढ जाती हैं। कभी धीरे २ मुख से रुधिर निकलने पर रोगी निघल हो जाता है। कुछ पनीली चीज कठ से नहीं खतरती, इससे दुर्बलता अधिक हो कर रोगी मर जाता है। या कठ की क्लिष्टी के कारण साँच रुक जाती है और रोगी दम घुटे कर मर जाता है। यह दशा उस समय होती है जब वायु की माली में झूठी क्लिष्टी या उसकी सृजन केने। गर्दन में लकवा भी मार जाता है जिससे चिर टेढ़ा हो जाता है। बोली में भिर्भिनाहट का शब्द होता है, साफ नहीं बोलता जाता। शरीर के विविध स्थानों में पीडा होती है। रोगी चलने फिरने योग्य नहीं रहता। देखने, सुनने, समझने में अन्तर आ जाता है। कभी २ मृत्यु अचानक होती है। जिसका कारण “कार्डिपक् एम्बोलिस्म” (खून में लोथड़ा अटकना) है।

निदान—निदान करने में स्कारलेट फीवर (छाल उघर) से घोखा न खार्वे। क्योंकि उसमें भी कठ में इसी प्रकार की सृजन होती है। तो भी नीचे लिखे लक्षणों का ध्यान रखने से दोनों की अच्छी पहिचान हो सकती है।

डिफथीरिया

(१) यह कई बार होता है और हर बार इसकी एक सी तेज़ी होती है ।

(२) यह बार २ लौटता है, और वायु की नाली (लेरिक्स) भी रोगग्रस्त हो जाती है ।

(३) रोग के दूसरे या तीसरे दिन ऐल्यूरिनारिया (albumenorrhoea) होता है ।

(४) इसके फल से छकड़ा रोग हो जाता है ।

लासव्वर

(१) यहूधा एक ही बार होते देखा गया है । यदि दूसरी बार हो तो पहिले की सी तेज़ी नहीं होती ।

(२) लेरिक्स (वायु की नाली) में सूजन तो होती है, किन्तु बार २ नहीं लौटता ।

(३) जब रोगी अच्छा होने लगता है तब होता है ।

(४) इसमें छकड़ा नहीं होता ।

परिणाम—लेरिक्स (वायु की नाली) में सूजन का होना, या लाहू की नलियों में लाहू का लायदा अटकना, या मूत्र का लाहू में मिलना वा बढ़ हो जाना, मुख के भीतर (इलक में) सड़न होना, नकसीर फूटना, बककक धकना, सास में कष्ट आदि, लक्षण हैं तो रोग भयानक समझें । लहको के लिये यह रोग बहुत ही बुरा है । २४ ३६ घण्टे में मृत्यु हो जाती है । अथवा इसकी २ से १४ दिन है । प्रायः दम घुट कर मीत (एमफिक्सिया) होती है ।

१ सूत्र में "एल्यूरिनारिया" अधिक होने से यह रोग होता है । इस में कुल गरीर मूत्र जाता है मुख और पाँव पर सूजन अधिक होती है । इसे ग्राहट साहब ने परीक्षा करके जाना इसी से इसे ग्राहट्स डिस्सीन कहते हैं ।

६८ छूतयाले रोग और सगसे बचने का उपाय ।

दिन क्रमशः कमी होती जाती है और "हूप" शब्द जाता रहता है । शरीर में बल बाने लगता है । भूख खुल जाती और कब बंद हो जाती है । धीरे २ खासी में भी कमी होकर रोगी अच्छा होने लगता है ।

सम्मिलित रोग और फल—इस रोग के फल में जो अन्य रोग उत्पन्न होते हैं उनमें नाम नीचे लिखे जाते हैं ।

"केपिलरी ब्रांकाइटिस" (केफड़े की बारीक २ वायु की नाली की सूजन) "लाङ्ग्यूलर न्यूमोनिया" (केफड़े के लोचड़ों की सूजन) "कोलेप्स और एम्फीमीमा आफ दी लूंग्स" (केफड़े का बैठ जाना वा उसमें वायु भर जाना) "कटारल न्यूमोनिया" (केफड़े की सूजन) "प्लूरीसी" (केफड़े के ढाकनेवाली किल्ली की सूजन) "पाइसिस" (जयी) "क्रूप" (पूँठनी खांसी) "कन्वल्शन" (पूँठन) "मिनिमजाइटिस" (दिमाग जैसे की किल्ली में सूजन) "सेरीब्रल एपेप्लेक्सी" (दिमागी सक्ता, लकवा) "गेस्ट्राइटिस" (आमाशय की सूजन) "एन्ड्राइटिस" (आंतों की सूजन) "डाइरिया" (अतिसार) "डरनिया" (आत का सतर जाना) आदि, रोग होते हैं ।

निदान—साधारण खांसी से यों निदान कर दि साधारण खांसी में न तो मुख्य प्रकार की बारी होती है, और न "हूप" शब्द ही सुना जाता है । और न तो इसके समान ससमें लक्षण ही मिलेंगे । अर्थात्, कफ, घमन, प्रसक्त में लोहू का जमाव आदि साधारण खांसी में सभी नहीं मिलेंगे और न विशाग कोल में इस के समान निर्यलता होगी ।

परिणाम—ऊपर कहे सम्मिलित रोगों का यदि

सम्मिलन न हो, तो परिणाम अच्छा कह सकते हैं, अन्यथा बुरा ही है। नय घटा उठा हो, भीर दांत निकलते हों या इन रोग की मरी कैली हो, घारी की कठिन अवस्था हो भीर निगती में अधिक भीर फटकर हो, तब परिणाम अशुभ है। नाथ में तब सरदी अधिक हो, तब लडकों की अपेक्षा लडकिया अधिक मरती हैं। “लाशक्यर” वा “खमरे” के पीछे यह रोग हो तो मरानक होता है। यदि आरोग्य होने वाला है तो छे से नाथ सप्ताह में कठिन लक्षण दूर हो जाते हैं। किन्तु पूर्ण आरोग्यता अधिक दिनों में प्राप्त होती है। एक बार कुछ आराम के बिना प्रगट होकर कुपथ्य आदि से फिर दुबारा रोग छोट जाता है। निःसंदेह यदि केरुके के रोग न आ मिलें तो परिणाम अच्छा है, रोगी अवश्य अच्छा हो जाता है।

चिकित्सा—दो प्रकार की चिकित्सा करें। (१) रोग

से बचने की (२) रोगी की।

(१) रोग से बचने का उपाय। जहाँ तक हो सके रोग से दूर रहें। छोटे २ बच्चों को इस रोग से बचावें क्योंकि बच्चे बहुत शीघ्र इस की छूत में प्रसृत होते हैं। जब यह मरी की भाँति कैला हो तो दूर जा मरें। घर में यदि कोई रोगी हो कर अच्छा हो गया या मर गया हो तो जिस कमरे में रोगी रहा हो उसे खूब साफ करें। घूना मिट्टी आदि से छीपें पोसें। कहीं कित्वाड़ों में अलकतरा लगावें,

३९६ छूतघाले रोग और सगसे बचने का उपाय ।

हिसइनफेक्शन^१ करें । कपड़े लुत्तों को जला दें या हिसइनफेक्टेंट^२ लोशन में भिगो कर घाम में सुलावें । और २ सामानो को भी हिसइनफेक्ट^२ करें ।

(२) रोगी की चिकित्सा । रोगी को गर्म कपड़ा पहिना कर अलग नकान में रखें । बच्चों और बच्चे वाली स्त्रियों को रोगी के समीप न आने दें । रोगी का कफ, राल, और थूक आदि कार्बोलिक लोशन (१ हिस्सा १००० हिस्सेवाला) में लेकर घसी से दूर खोद कर गाड़ दिया करें । खासी से बचाने को लिसेट्ट^३ की भातून चटावें इस से बड़ा फायदा होता है । गर्दन और रीढ़ पर नीचे की दवा—

लिनीमेंट वैलाडोना	२ ड्राम
॥ सोप	२ औंस
॥ कैम्फर	१ औंस

मिला कर मलें । सर्दी न लगने पावे इसका ख्याल रखें । यदि मल कड़ा हो तो कोई हलका लुब्धाब जैसे रेडी का तेल, या मेगनेशिया सहक आदि दें । उबर हो तो उसकी यथोचित चिकित्सा करें । नीचे लिखा जुसरा इस रोग में लाभदायक होता है ।

स्लिपिट एमोनिया एरोमेटिक	१ ड्राम
॥ ईंधर	१ ड्राम

१ मरकरी लोशन (पारे का पानी) जो एक हिस्सा पारे (मरकरी - डेड्राल परक्लोराइड Hydrag Perchloride पाउचकम) १००० हिस्से पानी में मिला कर तैयार करें । उससे जो

२ पारे के पानी से पारें ।

३ बड़ी बचकी दवा है । यद्यपि

टिक्चर बैलाढोना	१२ घू द
डाइल्यूट हैड्रोसियानिक एसिड	६ घू द
सादा शर्बत	२ बींस
पानी	२ बींस

मिलाकर इसमें से दो द्रव्य की मात्रा में दो वर्ष के बच्चे को चार २ या तीन १ घण्टे पीछे पिलावें । या—

वाइनम् इपीकाकेयाना	१ द्रव्य
डाइल्यूट हैड्रोसियानिक एसिड	१० घू द
स्पिरिट क्लोरोफार्म	१ द्रव्य
टिक्चर हाइसाइनस	१ द्रव्य
कैम्फर वाटर	३ बींस

मिलाकर इसमें से एक द्रव्य की मात्रा में चार २ या तीन १ घण्टे पीछे एक वर्ष के बच्चे को दें । या—

क्लोरेल हैड्रेट	२ घेन
एलन	१ घेन
टिक्चर बैलाढोना	२ निमन
कार्बोलिक एसिड	१ निमन
शर्बत	१ द्रव्य
पानी	१ बींस

मिलाकर ऐसी एक मात्रा दो या तीन २ घण्टे पीछे पिलावें । छाती और पीठ पर तारपीन का तेल कट्टर तेल में मिष्टा कर लें । या—

लिनीमेंट टारपीनटाइन	१ हिस्सा
एमीटिक् एसिड	३ हिस्सा
लहू की जर्दी	१ हिस्सा

लिनीमैन्ट बैलाडोना

१ हिस्सा

मिलाकर छाती, पीठ, और रीढ़ पर मलें । हलक के भीतर ग्लिसरीन, ट्रेनिक एसिड या कास्टिक लोशन (२० ग्रोन एक औंस घाला) फुरेरी द्वारा लगावें । या “ग्लिसरीन कार्बोलिक एसिड”—(१ भाग १५ भाग घाला) वायु की माली में फुरेरी से लगावें । रोगी को वायु से बचा कर हलकी पथ्य खाने को दें । लिसोडे की माशुन खूब चटावें । यदि निर्बलता हो तो मदिरा दें । आरोग्य होने पर जल वायु का परिचर्तन करें ।

टाइफस फीवर Typhus fever कासा खुखार ।

यह एक प्रकार का छूनदार उखर है इसमें कासे २ विधु शरीर पर निकलते हैं इसीसे इसे हमने “कासा खुखार” लिखा है । इसमें रोगी बहुत निर्बल हो जाता है ।

कारण—इस रोग की छून रोगी के सासद्वारा या पथ्यद्वारा शरीर में पहुचने से यह रोग होता है । अकाल के दिनों में प्राय यह होता है । बहुत आदमियों के एक स्थान पर इकट्ठे होने से, जैसे मेले, समाशे, या मिलों और बदीरुहों आदि में प्राय होता है । नरी की भाति कैल कर सैकड़ों मनुष्यों को भोजन बनाता है । रोगी के आरोग्य लाभ करने पर भी उसके शरीर, या श्वास से दूसरे निरोगी मनुष्य रोगी हो सकते हैं ।

लक्षण—छून लगने के पीछे रोगी सुस्त, काहिल और कुछ उखर से बेचैन होता है । दस या द्वादस दिन पीछे,

पीठ में दर्द होकर जाड़े से खर चढ़ता है । प्यास अधिक लगती है, धमन भी होता है । खर इसमें प्रथम १०५ दर्द का या इससे भी कमी २ अधिक हो जाता है । शिर में पीड़ा, मुख सूखा, और ओठों पर पपड़ी जम जाती है । जीभ सूखी, भूरी, और बाहर निकालने पर कापती है । सुपह तो कम परन्तु शाम को बेचैनी अधिक होती है । रात में एक-एक आरम्भ हो जाती है । कभी २ दो तीन मिनिट तक "मूछा" भी हो जाती है । देखने सुनने सुमझने में फर्क पड़ जाता है । कभी नींद आती है और कभी नहीं । जब नींद नहीं आती तो बेहोशी हो जाती है । खर प्रथम सप्ताह में सरल रोगियों में एक सा चढ़ा रहता है । किन्तु कठिन में घटता जाता है । आरोग्य होने को होता है तो दूसरे सप्ताह में खर धीरे २ उतरने लगता है । यदि दूसरे सप्ताह में खर प्रथम के समान रहे वा उससे भी अधिक हो जाये, तो आन्तरिक विभागों में सूजन उत्पन्न होने का संदेह होता है । खर की अवधि १४ दिन से २१ दिन है । इसमें भीतर खर एक साथ (क्राइसिस) होकर उतर जाता है । खर के पाचवें या छठे दिन बाह के पीछे पींने पर, या बगल में प्रायः हड्डियों की हड्डियों के नीचे, या मुँह, कंठ, और पेट पर, कभी अलग २ कभी आपस में मिले हुए, चमड़े से कुछ उभरे, लालफाला पन लिये, शहसूत की भाँति, दाने निकल आते हैं । दाने दवाय से जाते रहते हैं, किन्तु दवाय हटाते ही फिर उर्ध्व के त्यों हो जाते हैं । दो एक दिन बाद दानों की रगत दैद के समान हो जाती है । और

१ खरके एक साथ (अपामक) उतर जाने को "क्राइसिस" कहते हैं।

लिनीमेंन्ट बैलाहोना

१ हिस्सा

मिलाकर छाती, पीठ, और रीढ़ पर मर्से । हलक के भीतर ग्लिसरीन, टेनिक एसिड या कास्टिक लोशन (२० ग्रोन एक औंस घाला) फुरेरी द्वारा लगावें । या “ग्लिसरीन कार्बोसिलिक एसिड”—(१ भाग १५ भाग घाला) वायु की माछी में फुरेरी से लगावें । रोगी को वायु से बचाकर हलकी पथ्य खाने को दें । लिखोछे की माछान खुष चटावें । यदि निर्बलता हो तो मदिरा दें । आरोग्य होने पर जल वायु का परिवर्तन करें ।

टाइफस^१ फीवर Typhus fever काला बुखार ।

यह एक प्रकार का छूतदार उखर है इसमें काले र विदु शरीर पर निकलते हैं इसीसे इसे हमने “काला बुखार” लिखा है । इसमें रोगी बहुत निर्बल हो जाता है ।

कारण—इस रोग की छूत रोगी के खासद्वारा या पथ्यद्वारा शरीर में पहुचने से यह रोग होता है । अकाल के दिने में प्राय यह होता है । बहुत आदमियों के एक स्थान पर इकट्ठे होने से, जैसे मेले, तमाशे, या मिलों और बदीरुहे आदि में प्राय होता है । मरी की भाति फैल कर सैकड़ों मनुष्यों को भोजन बनाता है । रोगी के आरोग्य लाभ करने पर भी उसके शरीर, या प्रवास से दूसरे निरोगी मनुष्य रोगी हो सकते हैं ।

लक्षण—छूत लगने के पीछे रोगी सुस्त, काहिल और कुछ उखर से बेचैन होता है । दस या द्वादस दिन पीछे,

रोग से बचने का उपाय—बहुत से आदमियों को एक स्थान में न जमा होने दें, जहाँ अधिक भीड़ हो बड़ा न जायें। भूखे न रहें। भूखों को भोजन आदि दें। इस रोग के रोगी से बचें। जहाँ या जिस कमरे में रोगी हो बड़ा भी कोई वस्तु न छूयें और न कोई खाने पीने वाली वस्तु खावें पीवें। रोग के परिणाम के पीछे रोगी के कमरे की सफाई करावें, अथवाय, कपड़ा और कूड़ा आदि जला दें। कहीं क़िवाड़े में अलकतरा, दीवारों में सफेदी, और कच्चे घरों में छीप पोत करवायें। सम्पूर्ण यह को दिसहन केक्ट^१ करें।

चिकित्सा—आरम्भ में रोग के रोकने की चिन्ता न करें। क्योंकि यह रोग होने पर रुकता नहीं। बढ़ने न पावे इसका ध्यान रखें। खाने को पतली पथ्य पोली २ मात्रा में पोली २ देर पीछे दें। और यह नुस्खा बराबर हर हालत में देते रहें।

स्लिपरिट एमेनिया एरोमेटिक	२० ग्रूद
„ क्लोरोफार्म	२० ग्रूद
टिक्चर सिन्कोना कम्पोजिट	१५ ग्रूद
ब्राडी	२ ग्राम
डिक्वाक्शन सिन्कोना	१ औंस

यह एक मात्रा है। ऐसी एक मात्रा मह्येक तीन २ घण्टे पीछे एक जमान रोगी को पिछायें। करघट बढ़लवाते रहें।

^१ कूतनायक दवायों के पानी द्वारा पीने को दिसहनकेक्शन कहते हैं।

४०० उत घाले रोग और उन से बचने का उपाय ।

दवाय से उनकी रंगत नहीं बदलती । आरोग्य होने तक दाने एक ही दशा में रहते हैं ।

फठिन रोगियों में जीभ सूखी, भूरी और बाहर निकालने पर कापती है । रोगी अचेत या अकम्पक बकता रहता है । नींद नहीं आती । और ऐसा निर्वल हो जाता है कि करघट तक नहीं बदल सकता । बिस्तर में घस जाता है । मुख सूख जाता है । आंखें घंघ जाती हैं । मुख से दुर्गंध आती है, पेटे पुल जाते हैं, और नसें सूख कर तांत हो जाती हैं । आंखें अघखुली और मुह फटा हुआ होता है । सूत्र कम, कभी २ विलकुल बंद, होता है । ज्वर के ९ वें या दसवें दिन अर्जलान फटकने लगते हैं । मलमूत्र अनिच्छा से निकलने लगता है । अंत में बेहोश होकर या कमवलायन Convulsion होकर रोगी परलोक सिंघारता है ।

संमिश्रित रोग और फल—“ब्रांकाइटिस” (खांसी) “न्यूमोनिया” (फेफड़े की सूजन), “प्लूरिसी” (फेफड़े के ठकने वाली झिल्ली की सूजन) पैरों और हाथों में सूजन, और एक करघट पड़े रहने से फेफड़े में रुधिर जम जाना आदि रोग हो जाते हैं ।

परिणाम—दस रोगियों में से दो मर जाते हैं । दूसरे सप्ताह में ज्वर की अधिकता से मरी मृत्यु हो जाती है । दूसरे सप्ताह के उपरान्त यदि मृत्यु हो तो अन्य रोग के फल से मृत्यु होना बतलाते हैं । जितना ही अधिक संस में यह रोग हो उतना ही बुरा है ।

रोग से घबने का उपाय—यहूत से आदमियों को एक स्थान में न जमा होने दें, जहाँ अधिक भीड़ हो वहाँ न जायें । भूखे न रहें । भूखों को भोजन आदि दें । इस रोग के रोगी से घबें । जहाँ या जिस कमरे में रोगी हो वहाँ की कोई वस्तु न छूयें और न कोई खाने पीने वाली वस्तु खायें पीयें । रोग के परिणाम के पीछे रोगी के कमरे की सफाई करावें, अस्वाय, कपड़ा और कूड़ा आदि जला दें । कच्ची किचोरी में अलकतरा, दीवारों में सफेदी, और कच्चे घरों में छीप पोत करवायें । सम्पूर्ण यह को हिस्सन फेकट करे ।

चिकित्सा—आरम्भ में रोग के रोकने की चिन्ता न करें । क्योंकि यह रोग होने पर रुकता नहीं । घबने न पावे इसका ध्यान रखें । खाने को पतली पथ्य घोही २ सात्रा में घोही २ देर पीछे दें । और यह मुखवा बराबर हर हालत में देते रहें ।

स्लिपरिट एमोनिया एरोमेटिक	२० ग्रंथ
॥ क्लोरोफार्म	२० ग्रंथ
टिक्चर सिन्कोना कम्पोज	१५ ग्रंथ
ब्राडी	२ ग्राम
डिक्काक्शन सिन्कोना	१ ओंस

यह एक सात्रा है । ऐसी एक सात्रा मस्येक तीम २ घण्टे पीछे एक जवान रोगी को पिलायें । करघट बदलवाते रहें ।

१ सूतमायक दवाओं के पानी द्वारा घबने को दिवदनफेक-
गन कहते हैं ।

४२२ छूत वाले रोग और उनसे बचने का उपाय ।

विस्तर रख मुलायम रखें । भूख बढ़ हो तो सलाह हाककर निकाल दें । शोश्वा, घीफ टी, आदि खाने को दें । सम्मिलित रोगों की यथोचित चिकित्सा करें ।

टाइफाइड फीवर Typhoid Fever सन्निपातिक उवर ।

यह रोग भी एक प्रकार की हलकी छूत से संपर्क होता है । इसमें आँता में बिगाह संपन्न होता है, इस लिये इसे एन्टरिक फीवर Enteric fever और जर्मनी वाले एब्डामिनल टाइफस abdominal typhus कहते हैं ।

कारण—यह रोग मेरी समझ में “कन्टेजस” तो नहीं है, हाँ “इनफेक्शस” अवश्य है, “फोसाइटिस” के द्वारा भी इसकी छूत लग सकती है । पनारे और बीदा की सही घू वायु में मिल कर मनुष्य के शरीर में प्रवेश करती है, इसी कारण से यह रोग संपर्क होता है । पनारे आदि का दुर्गन्धित जल यदि कूए वा तालाबों में मिले और उनका जल निरीन्गी मनुष्य पीये तो भी यह रोग हो जाता है ।

लक्षण—जब इस रोग की छूत शरीर में प्रवेश करती है तो दस पन्द्रह दिन तक कोई मुख्य लक्षण नहीं प्रगट होता । केवल कुछ हस्ती और ओलस्य, सिरदर्द और दस्त कभी २ होता है । उपरान्त रोगी को, जाड़ा गरमी शरीर में, जाग प्रवृत्ति है । मस्तक में पीड़ा, आँखें कभी चमकदार और कभी बैठी जीभ की नोक और किनारे लाल, किन्तु जीभ का भाग मैला होता है । जाड़ी शीघ्रगमिनी और निबेल गति की हो जाती है । गाल पर लाल घट्टा पड़े

जाता है । नाक से छोटू गिरने लगता है । प्यास अधिक और भूख कम हो जाती है । मुख घुरा हो जाता है । पेट में दर्द होता है जो दधाने से अधिक होता है । पेट फूल जाता है । बैठने और करवट बदलने में क्लेश होता है । दस्त और कै शुरू होते हैं । कभी एक ही देखा गया है । अर्थात् या तो कै या दस्त ही होते हैं । मूत्र कभी तो कम और कभी एक छूंद भी नहीं निकलता । मूत्र में "एलब्यूमन" (एक लसदार भयंकर की सफेदी या फटे दूध की भांति पदार्थ) पाया जाता है । चमड़ा सूखा गर्म और शारीरिक गर्मी १०४ और १०५ दर्जे तक चढ़ जाती है । किसी २ में १०६ १०७ दर्जे तक बढ़ जाती है । यह गर्मी सुषह की अपेक्षा शान को एक दर्जे अधिक बढ़ती रहती है । अर्थात् सुषह १०३ दर्जे पर है तो शान को १०४ दर्जे पर और फिर सुषह १०४ दर्जे पर तो शान को १०५ दर्जे पर चढ़ जाती है । यह दशा चार पांच दिन तक केवल इसी रोग में देखी गई है । उतरते समय भी सुषह का दर्जा प्रयत्न कम होता है पीछे शान का भी पीछे २ कम होने लगता है । प्रायः दूसरे सप्ताह में गर्मी का दर्जा घटने लगता, या बढ़ने लगता है । जब बढ़ने लगता है तो, लक्षणों में भी तेजी आ जाती है । अर्थात् त्वचा सूखी और गर्म, कभी २ फुल पसीमा भी निकलता है । नाड़ी धूल सी निर्बल, तथा प्रति मिनिट संख्या में १२० गति की हो जाती है । जीभ सफेद वरारदार, कभी चमकदार लाल, या भरे रंग की होती है । पेट फूल जाता है और दधाने से दर्द करता है । ज्वर से सातवें या आठवें दिन छाती और पेट पर कहीं २ गोठ त्वचा से कुछ ऊँचे, गुर्मादी

४०४ छूत घाले, रोग और उन से बचने का उपाय ।

रंग के दाने निकलते हैं । चार दिनों पीछे उस स्थान को छोट कर अन्य स्थानों पर निकलते हैं । अर्थात् जहाँ प्रथम निकलते थे, वहाँ से गायब हो कर दूसरे स्थान पर दिखाई देते हैं । इसी प्रकार दाने निकलते और गायब होते रहते हैं । दानों की गिनती ठीक नहीं । जब यह दाने किसी २ में नहीं भी निकलते देखे गये हैं । किसी २ में तो अम्बोरी के सदृश निकलते देखे गये हैं ।

जब दूसरे सप्ताह का अन्त आता है तो या तो शारीरिक गर्मी अपनी असली दशा में पहुँच जाती है, और लक्षणों में कमी होकर रोगी आरोग्य प्राप्त करता है, पेट फूल कर ढोल हो जाता है । ठोंकने से “ट्यूर” की आवाज आने लगती है । पेट में एक प्रकार की गरगराहट उत्पन्न हो जाती है । नाभि के दाँये ओर (दाँये इलियक फासा में) दर्द आने लगता है । दस्त पतले पीले या गदले रंग के होते हैं, परीक्षा से कैफियत खराब की पाई जाती है । यदि दस्त को किसी बर्तन में रखें तो योही देर बाद फट कर उसमें छिछरे, खून के लोपड़े, क्लिष्टियों के टुकड़े और एक मलली वस्तु पीले या भूरे रंग की जिसमें एलठ्यूमिन और नमकीन चीज़ें होती हैं पायी जाई हैं । सज्जित लक्षण रोगी में उद्भूत होते हैं । नाड़ी और शारीरिक गर्मी बढ़ जाती है । यहरापन हो जाता है । हिचकिया आती हैं रोगी थककर बकता है । मिथलता हतनी बढ़ जाती है कि रोगी थोड़ा भी कम सकता है । बिस्तर में घस जाता है । खाने को कुछ नहीं खाता । दस्त बराबर हुए चले जाते हैं । जब बहुत ही लट जाता है तो हाथ पैर कांपने लगते

हैं । पेटे फटकने लगते हैं । मलमूत्र सब विस्तर पर ही होने लगते हैं, पीछे येहीन होकर रोगी मर जाता है ।

जब आरोग्य होने वाला होता है तो पीछे सप्ताह में एयर चीरे २ चतरने लगता है और सम्पूर्ण लक्षणों में कमी हो कर रोगी अच्छा होने लगता है । किसी २ में कठिन लक्षण नहीं प्रगट होते, किसी २ को दस्त आदि आता का क्रोध नहीं होता, कोई २ रोगी शीघ्र इससे मुक्त हो जाते हैं । और कोई २ थुरी दुर्गति भोगने के पश्चात् या तो आरोग्य होते हैं, या सदा के लिये दुनिया के जगह से बच जाते हैं । बच्चों में यह रोग अधिक होता है । अस्तु कुछ लक्षण उसके भी वर्णन करने योग्य हैं ।

इनफैन्टायल रिमीटेंट फीवर

Infantile Remittant Fever

यह दो प्रकार का होता है । प्रथम सरल और दूसरा कठिन ।

१ सरल—यह बिना कुछ ज्वर हुए ही प्रगट होता है । अर्थात् ज्वर कम ज्यादा अधिक होती है । अच्छा सुस्त, चुपका पड़ा रहता है । स्वभाव का चिह्नबिह्व हो जाता है । रात में बेचैनी अधिक होती है, नींद नहीं आती । शारीरिक गर्मी सुबह सामूली किन्तु शाम को बढ़ जाती है । और ज्यों २ रात बढ़ती है गर्मी भी बढ़ती जाती है । दुर्गन्धित पसला दस्त आता है । मोहो इसकी शीघ्र चली जाती है कि निभनी कठिन होता है । दूसरे सप्ताह में बेचैनी अधिक बढ़ जाती है । रात में घबरा पांत पीसता है, कराहता है । कभी जोर

१ बच्चों के दाहकाह फीवर को इनफैन्टायल रिमीटेंट फीवर अर्थात् धिगु धिगुपातक ज्वर कहते हैं ।

४०६ छूट वाले रोग और उन से बचने का उपाय ।

से बिस्त्रा कर चौक सटता है । दोपहर और शाम को बमन होती है । निर्बलता अधिक होती है । पेटे फूल जाते हैं । बच्चा मुह और नाक नोचा करता है । बममें किसी प्रकार के दाने नहीं निकलते । भीम मीली किनारे पर छाल होती है । पेट फूल जाता है, गरगराहट का शब्द होता है । नाक के दागें नीचे की ओर बखाने से दर्द होता है । दस्त दुर्गन्धित सड़ा हुआ होता है । तीसरे सप्ताह में सब लक्षण कम होकर धीरे २ लडका अच्छा होने लगता है ।

२ कठिन—इसमें पश्लिसे से कठिन लक्षण होते हैं । इसमें सब सन्निपातिक लक्षण उदय होते हैं । पेट बैठ जाता है । छाती पर काले बिंदु निकलते हैं । ये दाने कभी तो साफ, और कभी अन्धेरी की भांति के होते हैं । कौ अधिक होती है । ज्वरना लक्षणों में तेजी होगी चतुर्था ही वृत्त भी अधिक होता है । दुर्गन्ध अधिक हो जाती है । छाती में दर्द होता है । एक प्रकार की सूखी खाँसी भी आती है । पतला भूरे रंग का दस्त विस्तार पर ही होता रहता है । दूसरे सप्ताह के अंत तक लडका सूख कर कांटा हो जाता है । नाड़ी निर्बलता के कारण ठहरने के समीप हो जाती है । ज्वर १०३-१०५-१०७ दर्ज तक का होता है । तीसरे सप्ताह में लडका गंठ जाता है, गफलत (अचेतता) में पड़ा कभी कनवलशन (Convulsion) का मुख भोगता और कभी निर्बलता की दशा में सन्धु को मार होता है । कभी धीरे २ आराम भी होने लगता है । कुछ दिनों में अशुभ लक्षण धीरे २ कम हो कर लडका अच्छा हो जाता है ।

प्रावधि—घीरे २ आराम होता है । आराम होने में २१ से ३० दिन और यदि फेफड़े में सूजन हो तो ४० दिन लगते हैं । आरोग्य होने पर फिर भी लौटने का अम्देश है ।

निदान—टाइफस और टाइफाइड ज्वरों में बहुत कुछ समानता है—परन्तु नीचे लिखे निदान पर ध्यान देने से भेद प्रगट हो जावेगा ।

**टाइफाइड फीवर (सन्नि-
पातिक ज्वर)**

(१) इस में कई बार जाड़ा लगकर क्रमशः ज्वर चढ़ता है ।

(२) गर्ले पर लाल घट्टा दिखाई देता है । आँखें उलझी प्रकाशवान होती हैं । रोगी आरम्भ ही से निर्बल नहीं होता ।

(३) प्रायः आठवें दिन गुलाबी रंग के दाने पेट पीठ और छाती पर निकलते हैं जो दो तीन दिन में जाते रहते हैं, फिर उस स्थान को छोड़कर दूसरे स्थान पर निकलते हैं । इसी प्रकार कई बार निकलते और जाते रहते हैं ।

(४) बहुतो पेट चलता और पेट से लोहू भी निकलता है । आँतो में पाव हो जाता है ।

**टाइफस फीवर
(फाला मुखार)**

(१) हममें ज्वर एक साथ चढ़ता है मस्तक में पीड़ा अधिक होती है । रोगी सुस्त, निढाल और काहिल हो जाता है ।

(२) मुख पर श्यानता छा जाती है, आँखें सारी चढ़ी हुई और निर्बलता आदि से ही अधिक होती है ।

(३) प्रायः ५ वें दिन शह-तूत के रंग के दाने कड़ाई की पोठ पर निकलते और मस्तक एक ही दशा में विद्यमान रहते हैं ।

(४) पेट नहीं या कम चलता है । लोहू नहीं निकलता, और न आँतों में पाव होते हैं ।

४०६ छूत वाले रोग और उन से बचने का उपाय ।

से चिन्ता कर थीक सठता है । दोपहर और शाम को बसम होती है । निर्बलता अधिक होती है । पेटे खुल जाते हैं । बच्चा मुह और नास नोचा करता है । इसमें किसी प्रकार के दाने नहीं निकलते । जीभ सैली किनारों पर छाल होती है । पेट फूल जाता है, गरगराहट का शब्द होता है । नाक के दागें नीचे की ओर दबाने से दर्द होता है । दस्त दुर्गन्धित सड़ा हुआ होता है । तीसरे सप्ताह में सब लक्षण कम होकर धीरे २ लड़का अच्छा होने लगता है ।

२ कठिन—इसमें पहिले से कठिन लक्षण होते हैं । इसमें सब सुनिपातिक लक्षण उदय होते हैं । पेट बूठ जाता है । छाती पर काले बिंदु निकलते हैं । ये दाने कभी तो साफ, और कभी अम्होरी की भाँति के होते हैं । कभी अधिक होती है । जितना लक्षणों में तेजी होगी उतना ही बसम भी अधिक होता है । दुर्गन्ध अधिक होती है । छाती में दर्द होता है । एक प्रकार की सूखी खाँसी भी आती है । पतला भूरे रंग का दस्त बिस्तर पर ही होता रहता है । दूसरे सप्ताह के अंत तक लड़का सूख कर काँटा हो जाता है । नाड़ी निर्बलता के कारण टहलने के समीप हो जाती है—ज्यर १०३-१०५-१०७ दर्ज तक का होता है । तीसरे सप्ताह में लड़का गल जाता है, गकलत (अचेतता) में पड़ा कभी कणवलयन (Convulsion) का दुख भोगता और कभी निर्बलता की दशा में सूर्य को प्राप्त होता है । कभी धीरे २ आराम भी होने लगता है । कुछ दिनों में अशुभ लक्षण धीरे २ कम हो कर लड़का अच्छा हो जाता है ।

अवधि—घीरे २ आराम होता है । आराम होने में २१ से ३० दिन और यदि फेफड़े में सूजन हो तो ४० दिन लगते हैं । आरोग्य होने पर फिर भी लौटने का आदेश है ।

निदान—टाइफस और टाइफाइड ज्वरों में बहुत कुछ समानता है—परन्तु नीचे लिखे निदान पर ध्यान देने से भेद प्रगट हो जावेगा ।

**टाइफाइड फीवर (सन्नि-
पातिक ज्वर)**

(१) इस में कई बार जाड़ा लगकर क्रमशः ज्वर चढ़ता है ।

(२) गर्ल पर लाल चट्ठा दिखाई देता है । आँखें उलली प्रकाशमान होती हैं । रोगी आरम्भ ही से निर्बल नहीं होता ।

(३) प्रायः जाठरें दिन शु-
लाधी रंग के दाने पेट पीठ और छाती पर निकलते हैं जो दो तीन दिन में जाते रहते हैं, फिर उस स्थान को छोड़कर दूसरे स्थान पर निकलते हैं । इसी प्रकार कई बार निकलते और जाते रहते हैं ।

(४) बहुतो पेट चढ़ता और पेट से लोहू भी निकलता है । आंता में पाव हो जाता है ।

**टाइफस फीवर
(कासा बुखार)**

(१) इसमें ज्वर एक साथ चढ़ता है मस्तक में पीड़ा अधिक होती है । रोगी सुस्त, मिट्टाल और काहिल हो जाता है ।

(२) मुख पर श्यामता छा जाती है, आँखें भारी, चढ़ी हुई और निर्बलता आदि से ही अधिक होती है ।

(३) प्रायः ५ वें दिन शह-
सूत के रंग के दाने कलाई की पांठ पर निकलते और अतः तक एक ही दशा में विद्यमान रहते हैं ।

(४) पेट नहीं या कम चढ़ता है । लोहू नहीं निकलता, और न आंता में पाव होते हैं ।

४९८ न छूत वाली रोग और उन से बचने का उपाय ।

(५) शारीरिक गर्मी कमजोर होती है और सुबह शाम में एक एक प्रकार का अन्तर अर्थात् रक्तवाह से शरीर को एक छिगरी जैसा अधिक होता है सुबह एक छिगरी घटता है और शाम को दो छिगरी बढ़ जाता है १४-१५ दिन तक ऐसी ही दशाएँ बहरती होती हैं ।

(६) यह छोटता है और प्रायः अमीरी को सताता है । ४० वर्ष से अधिक उम्रवाले को कम होता है ।

(७) इसे की छूत बहुत कम लगती है । शरीर में पहुँच कर इसका विष नहीं बढ़ता । शरीर इसका असर होता है ।

(८) अवधि २१ से ३० दिन है । सक्रियता तीसरे सप्ताह में आरम्भ होता है ।

(५) चौबीस घण्टे से लेकर तीसरे दिन तक नाही और गर्मी बढ़ती है । फिर एक दशा में रह कर आठवें दिन काम होने लगती है ।

(६) यह नहीं लीटता । गर्मी को अधिक होता है । जो लोग रोगी के समीप जाने जाने वाले हैं उन्हें अवश्य होता है ।

(७) बहुत जल्द फैलने वाला छूतदार रोग है । शरीर में पहुँच कर इसका विष बढ़ जाता है ।

(८) १४ से २१ दिन इसकी अवधि है । दूसरे सप्ताह के अन्त में बहर एक साय उत्तर जाता है ।

रोग से बचने का उपाय—पनारा, पंखरा आदि को साफ रखें । दुर्गन्धित पानी को पानी घर में न रुकें इसका प्रयत्न करें । यदि दुर्गन्धित घर हो तो उसे छोड़ दें । यदि पीने के पानी के पास कोई मलमल या मीठी आदि के खुलने का भय हो, या पीने के जल में मिलने का भय हो तो उसका तुल्य उचित प्रयत्न करें, यदि प्रयत्न न हो सके तो घर छोड़ दें । जब यह रोग फैला हो तो पानी को नर्म करके

पीये । रोगी के पास की कोई वस्तु खाने पीने की व्यवहार में न लावें । रोगी का मल मूत्र किसी यंत्रण में “कांहीज़ फलुइह” (छूतनाशक अर्क) मिला कर बस्ती से दूर ले जा कर गाढ़ें । आरोग्य होने पर घर की सूख सफाई करें । अघो को दूध आदि ओटा कर पिलावें, और रोगी से दूर रहें ।

चिकित्सा—रोगी की चिकित्सा इस प्रकार करें कि प्रथम घनन लानेवाली औषधि दें । जैसे “इपीकाकेवाना” या टिक्थर इपीकाकेवाना घनन की सांघ्रा में १ औंस जल में मिलाकर दो तीन दिन तक पन्द्रह बीस घण्टे पीछे बराबर पिलावें । यदि फटल हो तो केवल रेंडी का तेल कान में लावें । ध्यान रहे कि इस रोग में अति बहुत कमजोर होती हैं इससे तेज या मनकीन जुझाव भूल कर भी कान में न लावें, और न रोगी को एक कदम चलने फिरने दें । चलने फिरने से सुरत अति में चूजन, छेद, या सोहू का अहाय होने लगता है । रुचिर हाडू करने आदि के लिये—

नाइट्रो वैमोक्लोरिक डाइएथ्यूट	१५ ग्रेन
क्लिनाइन सलफेट	५ ग्रेन
क्लोरीट आफ् पुटानिथिन्	१५ ग्रेन
क्लोरिक डेथर	१० ड्रूड
टिक्थर तिनमिथिन कम्पौण्ड	२० ड्रूड
पानी	१ औंस

ऐसी ३ मात्रा एक तरुण पुरुष को दिन में तीन बार दें । जब इस रोग का पूर्ण निदान हो जाये तो इसका अलाज़ “चारपीन” के तेल से करें । नीचे का मुख्वा ऐसी

४१० छूत वाले रोग और सन से बचने का उपाय ।

दशा में उत्तम और लाभदायक होगा ।

आइसल आफ टरपेनटाइन १ ग्राम

छाइकर पुटासी १ ग्राम

म्यूसलेन आफ गम एकेसिया २ ग्राम

सिरप आफ पापील ४ ग्राम

” ” आरेंज ४ ग्राम

कैम्फर वाटर ४ औंस

इस में से आधे औंस की मात्रा लेकर एक तरुण रोगी को दे दो घण्टे पीछे बराबर पिछाते रहें । उधर के लिये—

छाइकर एमेनिया एसीटेटिस १ ग्राम

नाइट्रिक ईथर १० बूंद

पुटासी वाइ कार्बोनेट १० ग्रैन

कैम्फर वाटर १ औंस

मिलाकर ऐसी १ मात्रा तरुण रोगी को दिन में ३-३ घण्टे पीछे दें । गर्म दूध, यखनी, आग जी, या अन्य पनीरी पच्य भूय पिछाते जिससे पसीने द्वारा श्वस निकले । गर्म जल से स्नान करावें । या गर्म जल का “सपारा” इस प्रकार दें कि रोगी को बिना बिस्तर की चारपाई पर सुला कर चारपाई के नीचे खीलाए हुए जल का पात्र जिसका मुह बंद हो धरें । पीछे चारपाई को कमबल आदि से ऐसा ढर्रे कि भाफ बाहर न निकल जावे, उपरान्त पात्र का मुह खोल दें, और रोगी को भी ढंक दें । केवल मुख खुला रहने दे । यह बिधि भाप घण्टे तक करने योग्य है ।

इससे विष पसीने द्वारा निकलता है । इससे उस समय अधिक लाभ होता है जब शारीरिक गर्मी १०५ या १०७ दर्जे पर हो, और माही जल्द २ घंटे और रोगी खबर से अकम्बल बचता हो । गर्म जल, जिसकी गर्मी "थर्मामेटर" द्वारा देखने से ८७ दर्जे की हो, उसमें रोगी को आध घण्टे तक इस विधि से बिठावें कि धीरे २ ठंडा जल उसमें छोड़ते जायें जब जल की गर्मी ६५ दर्जे पर आ जाये तो ठंडा जल मिलाना बंद कर के रोगी को सटालें और उसे सोख कर बिस्तर पर कम्बल ओढ़ा कर सुलायें । यह तो हुआ पसीने द्वारा विष का बहिष्कार । अब मुखद्वारा विष निकालने की विधि बताते हैं । प्रथम तो चाह काफी गर्म २ ग्लास तक पिछा सकें खूब पिलायें । यह मुखका-

पुटासी ऐसीटास १० घंटे

नाइट्रिक ईथर १० घंटे

टिक्थर जूनीपर १० घंटे

कम्पौंड डिकोक्शन आफ़ प्रोमेटाप्स १ औंस

बना कर और मिलाकर ऐसी एक मात्रा एक तरफ रोगी को प्रत्येक चार २ घण्टे पीछे पिलायें ।

पेट फूल जाय तो टरपमेटाइन (तारपीन) मल कर सेंकें, या "मस्टर्ड" (राई) का "प्लास्टर" लगायें । या गर्म जल में पोस्त की डोड़ी हाल कर फलानेख के टुकड़े से सेंक करें । यदि इस विधि से पेट का उभरना और दर्द बंद न हो तो "तारपीन" १ ग्राम वॉग १ घंटे मिलाकर दो दो घण्टे पीछे पिलायें । गर्मजल को उन्हीं पिचकारी द्वारा

पेट में डालें या हाथ का गर्म जल में घास चढ़ाई करता है ।

४१२ खून वाली रोग और उन से बचने का सपाय ।

गुदा में पहुँचावें । यदि दर्द तेज हो और रोगी तरुण हो तो नाभी से कुछ नीचे दहिने कटि की ओर एक छोटा सा डिलस्टर (आवला हाथने वाली पट्टी) लगावें । इस विधि से दर्द तो दूर हो जाता है, किन्तु घाव सहने लगता है । शारीरिक क्रेश दूर करने को "ओपियम (अफीम) भार-क्रिया" (अफीम का सूत) या मारक्रिया की रक्बा में पिचकारी करना लाभदायक है । दस्त बहुत होते हो तो एक साथ बंदन करें, केवल कम करने को यह जुसखा—

डोवर्स पौडर १० घेन

कार्बोनेट आफ् सिमसस १० घेन

एक पुडिया । ऐसी ४ पुडिया तरुण रोगी को दें । या

एनिड मलयूरिक हाइड्र्युट १५ ग्रु द

टिक्चर ओपियम ५ ग्रु द

पानी १ औंस

मिलाकर ऐसी एक मात्रा एक तरुण रोगी को प्रत्येक चार २ घण्टे पीछे दें । चाक् निक्रचर एक औंस प्रत्येक दो २ घण्टे पीछे दें । या

लिक्विड एक्स्ट्रेक्ट आफ् ओपियम २० ग्रु द

स्टार्च १ औंस

पानी १ औंस

मिला कर एक काश की लम्बी पिचकारी में भर कर गुदा में पहुँचावें । यदि पेट पर अस्तर करनेवाली शिन्नी (पेटोनियम) में सूजन हो जाये तो "ओपियम" (अफीम) भापा घेन बैलाहोना के सूत के साथ या अकेली दें । पेट को "तारपीन" या गर्म जल से खूब सेंकें । "एक्स्ट्रेक्ट ब्रेठा-

होना" और एक्स्ट्रेक्ट आफ पापीज़ देना को मिलाकर पेट पर लेप करें । यदि आंते में से लोहू निकले तो "टेनिक" या "गैलिक" एसिड १० ग्रैम की मात्रा में दिन में चार बार पानी के साथ दें । या तारपीन २० ग्रूय पानी एक बीस मिला कर ऐसी एक मात्रा दिन में तीन बार चार बार पिछावें । बर्फ चुसावें । "आर्गोटीन" त्वचा में त्वचा की पिचकारी द्वारा पहुँचावें । आरम्भ में यकनी, और दूध ही खाने को दें । यदि वमन हो तो सोडावाटर या लाइन वाटर (बूने के पानी) के साथ दें । दूसरे सप्ताह में अरुहा या सेंगो आदि दें । पथ्य का पूर्ण प्रत्यय करें । कड़ी, अपच, और सूखी पथ्य न दें । इसकी पतीली पथ्य ही रोगी को लाभदायक होगी । कड़ी पथ्य से हाथों में घाव होने का भय है । चौड़ी मात्रा में मदिरा भी देना उचित है । जब रोगी ठहरा पड़ जाय या निबलता अधिक हो तो मदिरा अवश्य दें ।

मम्स=Mumps=कर्णमूल = गलामुआ = गालोमाता ।

यह भी एक छूतदार रोग है । इसमें कान के आस पास की गिलटियां सुज जाती हैं । इसे "पैरोटाइटिस" भी कहते हैं । यह कभी २ बरी की शक्ति फैलती है और चार पांच वर्ष के या अधिक अवस्था के बच्चे और जवान समुप्य इस रोग में ग्रसित होते हैं ।

कारण—जहाँ बहुत से छड़के जमा हों जैसे मदर्स आदि में, और जहाँ अधिक भीड़ हो जैसे मेजेतमाशे आदि में, या जहाँ कुमबेवासे घरों में इसकी छून फैलती है । जहाँ एक को इसका कि घर का घर इस रोग में ग्रसित हुआ ।

कारण—तराई के देशों में अतु परिघर्तन के समय जहां यमुत से मनुष्यों की भीड़ जमा हो वहां यह उत्पन्न हो कर दूर २ तक अपना असर फैलाता है । रोग छूतदार है और मुख्य छूत ही इस का कारण भी है ।

लक्षण—आदि में सद्य, लक्षण साधारण जुकाम के ही उत्पन्न होते हैं, नाक बहने के उपरान्त किसी २ में नक-सीर का फूटना, सालू और मुख में पीड़ा आदि होना, कान के भीतर सूजन, कंठ में सूजन, खांसी और दम का उभरना आदि—लक्षण इसमें पाये जाते हैं । किसी २ रोगी को दस्त, और घमन लग जाते हैं । आमाशय के स्थान पर दर्द होता है, जीभ नाच की भांति उल पड़ जाती है । आवाज ब्रेक जाती है । भूख कम, परन्तु प्यास अधिक, होती है । यदि साधारण है तो सात आठ घंटे में ठहर आदि दूर हो जाते हैं । और कहीं कठिन हुआ तो नाक और कान की सूजन आगे बढ़ कर छाती के रोग उत्पन्न कर देती है जिससे आराम देर में होता है । निर्बलता इसमें साधारण जुकाम की अपेक्षा अधिक होती है ।

निदान—यों तो साधारण जुकाम और इस रोग में बहुत कम फर्क जान पड़ता है तो भी इस का एक साथ मरी की भांति फैलना, और निर्बलता की अधिकता होना, श्लेश अधिक बहना आदि से निदान कर लेना सहज है ।

परिणाम^१—घब्रे, बुद्धे, और निर्बल मनुष्यों में, या, उनमें जिन में श्वस्य वा फेफड़े के रोग हो, अशुभ परिणाम होता है, किसी २ में खांसी और जोड़ा में दर्द रह जाता

है । पूर्ण नीरोगता देर में प्राप्त होती है ।

रोग से बचने का उपाय—यवाँरे जुकाम से दूर रहना ही अच्छा है । रोगी से भी बचना चाहिये ।

रोगी की चिकित्सा—साफ धुवादार नकान में हवा से बचा कर रोगी को रखें । एक हलका जुलाब देकर पेट को साफ करें । यदि चक्काइयाँ आती हों तो बमन कारक औषधि जैसे वाइनम् एपीकाक् पानी में मिला कर दें । गर्मी में बर्फ चुसावें । यदि निर्वृत्तता हो तो एमोनिया मदिरा आदि पिछावें । “क्लोरोफार्म” ईयर वा “कोमा-इन्” को गर्म जल में घाल कर कंठ में भाफ पहुँचावें । या यह मुख—

वाइनम् एपीकाकेयाना ४ ग्राम

सिरप आफ हिमी डिस्मिस ६ ग्राम

इन्फ्यूजन आफ लिमोड १२ औंस

मिला कर इस में से एक औंस की मात्रा में एक तरफ रोगी को प्रत्येक चार २ घण्टे पीछे दें । यदि श्लेष्म अधिक हो तो सावधानी से रात के समय १० घंटे “ड्रावर्स” पाउडर खिलावें । छाती का दर्द दूर करने को राई का प्लास्टर लगावें । या तारपीन के तेल से सेंक करें । यदि फेफड़े में सूजन (प्यूमोनिया) हो जावे तो—

एमोनिया कार्बोनास ५ घंटे ,

क्लोरिक ईयर २ ग्राम

ब्राडी १२ ग्राम

टिक्चर सिनकोना कम्पौण्ड २ ग्राम

डिकाक्शन सिनकोना ६ औंस

मिला कर इस में से एक औंस प्रत्येक तीन २ घंटे पीछे एक सफ़्त रोगी को खिलायें । दर्द दूर करने को कुनेन, और पुटासियम् आयोडाइड, बराबर मिला कर खिलायें । हलकी पथ्य जैसे दूध, शोरबा, यखनी, अहा, और सैगो (सागुदाना) आदि खिलायें । आरोग्य होने पर "इंस्टन सिरप" खिलायें । जल का परिषर्जन करावें ।

एरीसिपेलस^१ Erysipelas = सुख बादा ।

यह एक कठिन छूतदार रोग है । इस में एक प्रकार की सूजन मुख पर या अन्य स्थानों पर होती है, ज्वर भी तेज होता है । चोट आदि लगने के स्थान पर भी हो जाता है ।

कारण—छूत लगना इसका मुख्य कारण है । यह छूत चाहे स्पर्श द्वारा लगे और चाहे वायु द्वारा शरीर में प्रवेश करके अपना असर प्रकट करे । किन्तु किसी २ में दोनो प्रकारों से भी होता देखा गया है । यह रोग दो प्रकार से होता है । (१) ट्रामेटिक (चोट आदि से), (२) "इडियोपैथिक" (जो प्रायः सिर या चेहरे पर होता है) बिना चोट के ।

(१) इडियोपैथिक के लक्षण—छूत लगने के दस या चौदह दिन के उपरान्त गले में दर्द उत्पन्न होता है । ज्वर, जो १०४ से १०५ दर्जे तक का होता है, चढ़ता है । ज्वर के दूसरे या तीसरे दिन एक छाल चढ़ता, प्रायः कान के पीछे या चेहरे पर, किसी २ के मस्तक, गाल, नाक, हथेली और कलाई पर, निकलता है । फिर उस चक्रे के चतुर्दिक् छाली और सूजन बढ़ जाती है । नाक या कान या मुख के कोने

पर प्रथम यह दशा पाई जाती है। धीरे २ यह सूजन फैलती और बढ़ती जाती है। यहां तक कि सिर, चेहरा, गर्दन, और कानो, और नाक के भीतर फैल कर दिमाग तक इस सूजन का असर पहुंच जाता है। सिर से कंधे तक लाली और सूजन फैल कर मनुष्य की आकृति^१ बिगाड़ डालती है। रोगी इस सूजन के कारण न तो आखें खोल सकता है। न नाक बंद होने से नाक द्वारा सांस ले सकता है। गाल और हाठ ऐसे सूज जाते हैं कि मुख खोलना कठिन हो जाता है। जलन और पीड़ा से रोगी को पल भर भी चैन नहीं पड़ता। सूजन के स्थान की त्वचा (चमड़ा) सूखी छाल और तनी हुई जान पड़ती है। सारे जलन के सारे शरीर पर फफोले से पड़ जाते हैं। दर्द ऐसा होता है कि रोगी से सहा नहीं जाता। तिसपर स्वर^२ की प्रयत्नता और भी छट्ठे छुड़ा देती है। सूजी हुई त्वचा चमड़ी हुई होती है। इससे सूजन का आदि अंत मछी प्राति जान पड़ता है। लेकिन जहां से सूजन बढ़ती है वहां की रखा नहीं दिखलाई पड़ती।

तारीफ यह है कि यह सूजन प्रायः एकही^३ ओर को बढ़ती है। कभी २ आगे बढ़ती जाती है और पीछे आरोग्य होती जाती है। सूजन उस स्थान पर अधिक होती है जहां नांस अधिक है और वहां दवाने से गढ़ा भी पड़ जाता है। किन्तु ऐसे स्थानों की सूजन में दर्द कम पाया गया है।

१ जैसे कोड़ी का चेहरा होता है।

२ यह स्वर "सूजनी" है अर्थात् सूजन के कारण होता है।

३ कभी २ चारों ओर से भी बढ़ती है।

विरुद्ध इसके जहाँ केवल हड्डी और चमड़ा है वहाँ दर्द तोत्र किन्तु देखने में सूजन कम, होगी । ऊपर १०४ से १-८ दर्जे तक का देखा गया है । नाड़ी १०० से १४० या १५० गति की हो जाती है । सूजन के बढ़ने पर ऊपर भी बढ़ता है और घटने पर घट जाता है । बढ़ाव का दर्जा शान को अधिक होता है । सूजन के चारों ओर की गिलटिया भी सूज जाती हैं । सूत्र में “एलड्युमन” मिलता है । चेहरे की सूजन बड़ी दुखदायी होती है । पीछे या तो सूजन कम हो कर सूनी रहने लगती है या सूजन दिमाग (मेजा) या हृत्, की नाडी में फैल कर रोग को असाध्य बना देती है । दिमाग और उसकी क्रियाओं में सूजन पधारते ही मृत्यु हो जाती है ।

लक्षण के अनुसार यह रोग तीन प्रकार का है । (१) “क्यूटेनिसस^१” जो केवल त्वचा ही पर होता है । और समय पर आराम हो जाता है । (२) “फलग् मोनिस^२” इसमें सूजन मांस फिल्ली, और चर्बी आदि में फैलती है । इसमें पीप पड़ जाती है, कभी २ सदन बीह जाती है । यदि यही स्थिर न रह कर फैलती जावे तो “डिफ्यूज^३” एरीसिपेलस” कहते हैं, यह खराब है । (३) नाइफेटरी वा “पेटिटिफ एरीसिपेलस” जिसमें ब्रैकायदा सूजन त्वचा में फैलती है । किन्तु लक्षण सरल होते हैं नर्मी केवल कुछ परिवर्तित होती है ।

(२) द्रामेटिक = चोट सम्यधी लक्षण—

यह प्रायः अरुपताली में जहा पायवाले रोगी होते हैं और जघाओं को जघाखानों में होता देखा गया है । वे जखम को कुचट से सत्यन हों वहा, और प्रायः लिङ्गप्रियो पर के जखम में और पेट और अहकोश के पाये में, इस की छूत जगती है । असल जराही (आपरेशन आदि) के पीछे भी इसका उदय जराह की असावधानी के कारण होता देखा गया है । जहां पाय हो वहा इस विषय का असर वायु द्वारा वा स्पर्श द्वारा होते ही शारीरिक लक्षण उदय होते हैं अर्थात् निर्बलता, हडफूटन, सारे शरीर में दर्द, और जाहा देकर ज्वर की सवारी आ जाती है, रोगी बहुत मिडाल हो जाता है । रोग तीन प्रकारों में से जिस प्रकार का हो उसी प्रकार का लक्षण भी सरल, कठिन, और भयानक होता है । स्थानिक लक्षण यह होते हैं कि—पाय लाज और उसके किनारे सूज कर बाहर लोट जाते हैं । पीप दुर्गंधित होती है । मेदा के अनुसार लक्षण भी उदय होते हैं, अर्थात्—

१ सरल—इसमें केवल पाय के चारों ओर अपरिमित लाज, त्वचा सूजी हुई मोटी, और कभी २ पीप के सहने के कारण कलकेदार, होती है । दर्द और जलन सब “इडियो पेटिक एरिस्पेल्स” की भांति होते हैं ।

२ कठिन—इसमें पाय के चारों ओर की त्वचा समकदार सूजी हुई, गर्मी अधिक और लगी हुई होगी । इसके विपरीत सारे शरीर पर सर्दी और फीकापन पाया जावेगा । रोगिल स्थान छूने से कठोर और यहां दर्द टीस मारने वाला होगा,

घाव का रंग घुत्ता, और बढ़ाव की ओर झुका हुआ पाया जावेगा ।

३ मयानक—रोगिल स्थान सूख जाता है । रगत उस स्थान की नीली होती है । कुछ दिन उपरान्त सबने की सी रंगत हो जाती है । इस की सूजन फैलती जाती है ।

परिणाम—इडियोपेथिक^१ का—रोगिल स्थान पर नीले रंग का फफोला पड़े, या रोगिल स्थान काता पड़ जावे, पीप पड़ जावे, शिर दिमाग (मेजा) और हवा की नाली में भी सूजन पहुच जावे, वा यह सरी की भांति फैले । इनके सिवाय घूट्टा, बच्चा वा गुर्दे का रोगी हो, तो परिणाम अशुभ तथा मयानक है ।

परिणाम—ट्रामेटिक का—(१) सरल यह १० वा १५ दिन में भराम हो जाता है । शर्त यह कि रोगी बलवान हो, किन्तु यदि रोगी निर्यल है तो घाव धिगड़ कर वा सहकर खराब हो जाता है । शरीर का रोगिल भाग बहुत दूर तक सह गल जाता है । यहा तक (२) कठिन का भी परिणाम आ गया । अब (३) मयानक-का परिणाम बहुत ही बुरा समझना अर्थात् इसमें रक्तविष (ठलह पाहलनिग) से रोगी मर जाता है ।

सम्मिलित रोग—प्यूरपरल फीवर (मसृति ज्वर) पाइमिया, सेप्टीसीमिया, आदि ।

रोग से बचने का उपाय—“इडियोपेथिक” से बचने के लिये चाहिए कि रोगी से और यदि सरी हो तो नगर से, दूर रहें । ऐसे रोगी के पास जाकर उसी कपड़ों से घर में

न पुर्ने । घरन कपड़े आनि सरकरी लोशन (छूतनाशक जल) से धो कर बाहर सुखायें । अपने शरीर की भी उसी अर्क द्वारा या गर्म जल द्वारा शुद्ध करके तब अपने घर में जायें । क्योंकि यह यहा घुरा रोग है, और हर प्रकार से इनकी छत तैय्यार रहती है, जहा जरा छूक जुड़े कि इसके बशीभूत होना पडा । इससे प्रथम तो ऐसे रोगी के समीप ही न जावे, यदि जाये तो बिना स्पर्श के दूर से देखे । कोई वस्तु अपने शरीर वा कपड़ों से न छू जावे इसका खूब ध्यान रखे । यदि उस घर में, जिसमें कि इस रोग का रोगी हो, कोई घाव वाला वा ज़खा हो तो तुरत वहा से उन्हें हटा देना चाहिये । इन दोनो के हक में यह रोग बहुत ही घुरा है । जब इसकी बवा (मरी) फैली हो तब सब कुटुम्ब को उस स्थान से दूर ले जाकर रखें । आरोग्य होने पर घर की उसी भाति सफाई करें कैसा अन्योन्य छूस वाले रोगों में वर्णन कर आये हैं ।

ट्रानेटिक (चोट वाले) में विशेष ध्यान जराहों वा जो महइन पट्टी लगावें उनको देना उचित है । कहीं ऐसे रोगी को देख कर किसी अन्य घाव वाले रोगी वा ज़खाजो के पास न चले जायें । क्योंकि यह रोग दोनों को घुरा है । घाव खुब साफ और छूतनाशक अर्कों द्वारा धोना चाहिये । घोने वाले का हाथ भी छूतनाशक अर्कों द्वारा शुद्ध रहना उचित है । घाव पर की रुई और बिगही जुड़े पही जला दें वा गहवा दें ।

चिकित्सा, इलियोपेथिक एरीसिपेल्स की—
बहुत धखेडा न छिख कर साफदायक और जकी जुड़े औपचिस

४२४ छूतयाले रोग और उन से बचने का उपाय ।

ही लिख देना उचित समझते हैं । इस रोग में लोहे का टिक्चर जिसे टिक्चर स्टील कहते हैं यही 'सत्तम' और लाभदायक औषधि है । यह औषधि न केवल खिलाने के काम की है, किन्तु बाहर लगाने में भी अपूर्व लाभ पहुँचाती है । इस औषधि से सब अशुभ लक्षण दूर हो जाते हैं । नुसखा यह है—

टिक्चर स्टील	४० बूँद
क्लोरिक हैयर	४० बूँद
ग्लिसरीन	४० बूँद
पानी	२ औंस

मिला कर ऐसी एक मात्रा एक तरुण रोगी को तीन या चार २ घण्टे पीछे दें । ऊपर २ आराम जान पड़े त्यों २ औषधि की मात्रा घटाते जायें । और जो २ कष्ट उपस्थित हों, जैसे दर्द आदि, उनकी यथोचित चिकित्सा करें अर्थात् रात में नींद न आवे तो प्रोभाइट्रिक आफ पुट्रास २० ग्राम खिलायें । पाखाना न हो तो रेडी का तेल वा मेगनेसिया सल्फास १ ग्राम या २ ग्राम पानी में घोलकर पिलायें ।

स्थानिक चिकित्सा में फास्टिक की बत्ती से सूजन के किनारे दाग दें । इससे उस समय अधिक लाभ होता है जब एरीसिपेलस "डिफ्यूज" प्रकार का हो । पीछे नीचे लिखा सरहान लगायें ।

हीरा कसीस

वेमलीन या सादा सर

खूब घोंट और मिला

पीछे रुई रल कर बांध दें नि

चिकित्सा, द्रामेटिक एरीसिपेलस की—दुर्मलता

में यलकारक औषधि दें । घाव को “काठीज लेशन” = १-१००० वाले से या “नरकरी लेशन” १:१००० वाले से सूख साफ धोयें । पट्टी और रुई साफ बांधें । यदि पीप अधिक निकलती हो तो घाव को दिन में दो तीन बार धोकर बांधें ।

यलो फीवर Yellow Fever पीतज्वर

यह एक तेज छूतदार रोग है । इसमें त्वचा पीली पड़ जाती है । इसी से इसे “पीतज्वर” कहते हैं । यह निचली भूमि जैसे तराई आदि देशों में मरी की भाँति फैलता है । यह एक बार होता है । इसमें दस्त और बमन काटे रंग के होते हैं । जहाँ गर्मी का दर्जा ७२ दर्जे से कम है वहाँ यह नहीं होता । इस ज्वर को “हीमोगैस्ट्रिक” फीवर (आमाशय से रुधिर निकलने वाला ज्वर) भी कहते हैं ।

कारण—रोगी द्वारा वा वायु द्वारा छूत का लगना है ।

लक्षण—छूत लगने के दो से १५ दिन तक केवल रोगी हस्त काहिल और चिहचिहा हो जाता है । पीठे जाड़ा देकर ज्वर बढ़ता है । त्वचा पीलिया की भाँति पीली पड़ जाती है, जीभ साफ, मध्य में मैली, होती है । रोगी शिथिल हो जाता है । आँखें पानी से लबलबाई और कुछ छाल हो जाती हैं । बमन बार २ काले रंग की होती है । दस्त भी, जिसमें सोहू मिला होता है, बहुत जाता है । यल आनकतरा की भाँति का होता है । सूत्र में “एल्यूमन” निकलता है । कभी २ सूत्र बन्द हो जाता है । आमाशय पर दृढ़ जान पड़ता है । कभी २ बमन में भी सोहू मिला होता है । यदि सरल रोग है तो दो तीन सप्ताह में अच्छा हो

जाता है । छठे दिन अशुभ लक्षण कम होने लगते हैं । और कठिन रोग में छः घण्टे पीछे अशुभ लक्षण बढ़ने लगते हैं । तीसरे दिन रुधिर बमन द्वारा निकलने लगता है । अंत में निर्व्यलता हो कर रोगी मर जाता है ।

निदान—इस रोग से और “लोरिमिटेन्ट फीवर” से बहुत कुछ मेल है इससे दोनों की पहिचान नीचे लिखते हैं ।

यलो फीवर ।

लोरिमिटेन्ट फीवर ।

- | | |
|---|--|
| (१) यह बिना घाटी का ज्वर है । | (१) यह घाटी से आता है । |
| (२) ज्वर के दूसरे दिन मूत्र में एलब्यूमन मिलता है । | (२) नहीं मिलता । |
| (३) तिप्पी नहीं बढ़ती । | (३) तिप्पी बढ़ जाती है । |
| (४) “कमवलशन” हो तो शीघ्र होता है । | (४) धीरे-धीरे कमवलशन होता है । |
| (५) तीसरे दिन मर जाता है । | (५) सातवें दिन से पहिले कम चतपु सुनी गई है । |
| (६) बमन और मल के साथ-साथ निकलता है । | (६) कभी-कभी निकलता है । |
| (७) कुबजाइन से ज्वर नहीं रुकता । | (७) रुक जाता है । |

इसकी सिंघाय एक साथ भारी ज्वर बढ़ना, काले रंग की बमन और दस्तों का साथ-साथ निश्चित आना, ल्वेचा का पीला पड़ना, जोड़ों में बहुत दर्द, आदि से निदान पूर्ण हो जाता है ।

परिणाम—मुरा है । काले रंग की बमन, और मूत्र का बढ़ होना रुधिर का अधिक निकलना, “यूरेमिया” आदि होना अशुभ परिणाम है ।

रोग से बचने का उपाय—यदि यह रोग घर या घस्ती के किसी भाग में हो तो तुरन्त स्थान परिवर्तन करें। रोगी के समीप न जायें और न किसी को समीप आने दें। आरोग्य होने पर घर की सफाई, जैसा पहिले लिख आये हैं, करें।

रोगी की चिकित्सा—जब रोग के लिये बर्फ चुमायें। या तबका में भागकिया की पिचकारी करें। “क्रियो जोट” चीनी में डाल कर दें। या जिसमिथ सब माइद्रास १० ग्राम, क्रियोजोट १ मिमम, सोडा १० ग्राम, मिलाकर ऐसी १ पुडिया तरुण रोगी को प्रत्येक तीन घण्टे पीछे दें। आनाशय पर तारपीन मल कर सेंक करें। ज्वर तेज हो तो गर्म जल से स्नान करावें या गीली चादर में रोगी को लपेटें। जब गर्मी उतर जाये तो वायु से बचा कर कम्बल सड़ा कर ऊंचे स्थान में झुलायें। रोगी ठहा पड़े तो मदिरादि दें। खाने को हलकी पच्य जैसे दूध, शोरबा, यखनी आदि दें। रोगी को साफ हवादार और ठंडे कमरे में रखें। जब पड़े तो पहाड़ आदि ऊंचे स्थानों पर ले कर रहें। आरोग्य होने पर “इस्टन मीरप” का सेवन करावें।

सेरीब्रो-स्पाइनल फीवर (Cerebro-Spinal fever)

या सेरीब्रो-मेनिनजाइटिस Cerebro Meningitis यह भी एक प्रकार के विष से उत्पन्न होता है इसमें दर्द बहुत तेज होता है। रोग मरी की भांति फैलता है।

कारण—जाड़े के दिनों में एक मुख्य छूत के विष से यह रोग प्रत्येक को होता है, किन्तु लड़कों को कम होता देखा गया है।

लक्षण—जाड़े से ज्वर बढ़ता है । शारीरिक गर्मी १०२ से १०४ दर्जे और नाड़ी प्रति मिनिट १०० से १२० या १३० गति की होती है । सर्षप शीघ्र २ चलती है । सारे शरीर में बड़ा दर्द होता है । रीढ़ में बड़ा खुरा दर्द, जिसे रोगी सह नहीं सकता, होता है । शरीर अकड़ जाता है । आँखें भीतर की खिच जाती हैं । पेट पीठ से लग जाता है । मस्तक पीछे झुक जाता है । मुख भिन्न जाता है । बमन भी होती है । आँख की पुतली चिकुड जाती है । सरल रोग में बुद्धि विकार नहीं होता, किन्तु कठिन रोग में बुद्धिविकार होता है । अचेतता में रोगी पड़ा रहता है । किसी किसी में लकवा, कभी आँखे चढ़ का और कभी आँखे शरीर का होता है, जो पाया जाता है । कोई २ बहरे हो जाते हैं । कठिनता में लगभग २ रुधिर के चट्टे शरीर पर दिखाई पड़ते हैं । दिनांगी लक्षण, कठिनता में कठिन और सरलता में सरल होते हैं । कठिन दशा में रोगी का बचना असम्भव है ।

सन्मिलित रोग और फल—जोड़ों में पीप, पड़ जाती है । दाँदे आँख सूज कर बैठ जाती है । केफड़े की बीमारी जैसे खाँसी “न्यूमोनिया” (केफड़े की सूजन) “प्रीकाडाईटिस” (हृदय के ढाकने वाली झिल्ली की सूजन) आदि रोग हो जाते हैं ।

परिणाम—बुरा है । सिकड़े पीछे साठ आदमी मर जाते हैं । छोटे २ बड़े बहुत शीघ्र मर जाते हैं ।

रोग से बचने का उपाय—जहाँ यह रोग फैला हो वहाँ से भाग जायें । स्वास्थ्य-रक्षण के नियमों का पालन करते रहें । रोगी से दूर रहें । सफाई मुख्य उपाय है ।

चिकित्सा—पुटास आयोडाइड

५ ग्रैन

„ थ्रोमाइड

१० ग्रैन

टिक्चर येलाहोमा

५ ग्रु द्र

एका कैम्फर

१ औंस

मिलाकर ऐसी एक साधा प्रत्येक तीन २ या चार २ घण्टे पीछे पिलावें । रात को आधा द्वाब “लायकर मार-
दिया” पानी में मिलाकर दें । अचेतता में केवल “स्टिम्यु-
लेंट मिक्चर” दें । जलवायु का उत्तम प्रबंध करें । निर्य-
लता न होने पावे इसका ध्यान रखें । यदि हो तो आरम्भ
ही से “स्टिम्युलेंट” (शक्तिसधारक) औषधियों का सेवन
करावें ।

डेंग्यू फीवर Dengu Fever लगड़ा बुखार ।

यह बड़ा ही घुरा छूतदार रोग है । इसमें शरीर के
सारे जोड़ अकड़ जाते हैं और तनमें बड़ी असह्य पीड़ा
होती है । यह रोग सन् १८७२ ई० में सारे हिन्दुस्तान में
फुला या तब से आज तक फिर इसका रोगी नहीं दिखाई
पड़ा । लेकिन इसका नाम बूढ़ों की जिह्वा पर अवलोकित सुदा
हुआ है ।

कारण—यद्यपि यह रोग भारत वर्ष में एक ही बार
फुला इसलिये इसका ठीक २ कारण नहीं ज्ञात हुआ, तो
भी यह छूतदार अवश्य है इसमें संदेह नहीं । कारण कि
यह बवाह (मरी) है । बिना विष के मरी नहीं हो सकती ।

लाक्षण—जाहा देकर उवर चढ़ता है । उवर के सथ
उत्पन्न उदप होते हैं अर्थात् मस्तक में पीड़ा, मल का कड़ा
होना, प्यास अधिक, भूख कम आदि, होकर मधीन गठिया

की प्रांति सारे शरीर के जोड़ों में दर्द होता है। दर्द भी ऐसा होता है कि मानो हड्डियाँ टूटी पड़ती हैं। इसी कारण कोई इसे “ब्रेक बोन फीवर” Break bone fever (हड्डी तोड़ने वाला ज्वर, हड्डिखाल) कहते हैं। निर्बलता अधिक होती है। रोगी चल फिर नहीं सकता। किसी २ की गिलटिया सूज जाती हैं। ज्वर से दूसरे या तीसरे दिन ऊपर के लक्षण कम होने लगते हैं। लेकिन ज्वर एक बार अच्छा हो कर फिर लौट आता है। सारे शरीर पर छाल पड़ने लग जाते हैं। घटबो में जुगली और जलन अधिक होती है। आराम होने वाला होता है तो सात आठ दिन में रोगी आरोग्य हो जाता है। केवल निर्बलता और जोड़ों की, विशेष कर घुटने की, कठोरता बची रह जाती है। किसी २ को खाँसी, “प्युनो निया”, पीलिया, आँखों की सूजन, अदृश्य फोड़े, अतिसार आदि रोग उत्पन्न हो जाते हैं।

परिणाम—अच्छा है। कोई २ जोड़ों की कठोरता में बहुत दिन तक प्रसित रहते हैं।

रोग से बचने का उपाय—

जब इसका कारण ही नहीं जान सके तब उपाय क्या करते? यह रोग एक ही बार हिन्दुस्तान में देखने में आया इस कारण न तो कुछ उपाय कर सके और न चिकित्सा ही सत्तन ठूँही गई। भगवान करे यह रोग भारत से दूर ही रहे।

रिलेप्सिंग फीवर Relapsing Fever अकाल ज्वर

रिलेप्सिंग फीवर अर्थात् बार २ लौटने वाला ज्वर दोमें प्रकारों की छूता वाला रोग है। प्रायः यह अकाल में होता है इसीसे इसे Famine fever (फेमीन फीवर)

अकाल ज्वर कहते हैं। पुरुषों को अधिक होता है ।

कारण—छूत लगना है । यह रोग जाड़ा मुखार रोग का भाई है । जिस व्यक्ति जाड़ा मुखार का रोग कम होता है, उस समय यह उसकी एघरा में काम करता है। जहाँ बहुत से अकाल-ग्रस्त मनुष्यों की भीड़ जमा होती है, वहाँ हो यह उत्पन्न होता है ।

लक्षण—एक साय जाड़े से ज्वर चढ़ता है । शारीरिक गर्मी १०२ से १०४, किसी २ में १०८, दर्ज तक की होती है । जोड़ों में दर्द उत्पन्न होता है । आंखों में गहरे और उनके चारों ओर काफ़ी चेरा पड़ जाता है । पसीना एक बूंद नहीं आता । सूत्र^१ लासारग का, परिमाण में कम, निकलता है । रोगी धीरे-धीरे और शिथिल पड़ जाता है । पित्त बहुत बमन होता है । पेट और पाय पर छाल पड़े पड़ जाते हैं । तिल्ली और जिगर (यकृत) बड़ जाते हैं । दधाने से तिल्ली पर दर्द जान पड़ता है । रात में रोगी बक बक करता है, कभी २ औम्मादिक लक्षण रात्रि में पगट होते हैं । मुख पीला और चेहरे पर उदासी छा जाती है । पीलिया रोग की भांति रोगी पीला पड़ जाता है । चार पांच दिन तक ज्वर एकसा रातदिन चढ़ा रहता है । कभी २ कुछ पसीना चुकचुका उठता है । पाँच सात दिन में ज्वर एक साय उतर जाता है । उपरान्त आठ, दस दिन तक रोगी आरोग्य रहता है । किन्तु फिर ज्वर, जो प्रथम बार की अपेक्षा हल्का होता है, चढ़ जाता

१ "एल्यूमन" भी निकलता है । कभी मूत्र बंद और कभी उसमें रुधिर पाया जाता है ।

४३२ छूतघाले रोग और उन से बचने का उपाय ।

हि और दो चार दिन रह कर चला जाता है । इसी प्रकार कई बार उबर आता और जाता रहता है । महीनें यही चार इस रोग का लगा रहता है । घीरे २ रोगी निर्वल हो कर वा ठठा पहकर, कभी २ मजे के रोगों के कारण, मर जाता है । यदि आरोग्य होने वाला है तो पांच छ सप्ताह में रोगी अच्छा होने लगता है ।

सम्मिलित रोग और फल—इस रोग में गठिया, केफड़े के रोग, गर्दन, बगल और जाघो की शोषक (लिम्फेटिक) गिलटियो में पीप पड़ना, आदि रोग हो जाते हैं । दस्त, पेचिश, न्यूमोनिया, आस में सूजन वा घाव, गर्भवतियों में, गर्भपतन, आदि रोग भी हो जाते हैं ।

परिणाम—सैकड़ों पीछे तीस वा चालीस मनुष्य मर जाते हैं ।

निदान—बार २ छोटका अर्थात् पांच सात दिन में उबर एक साथ (क्राइसिस द्वारा) उतरना और बारह चौदह दिन के उपरांत फिर आना, इसी प्रकार कई बार आना जाना, दूसरे उबरों में नहीं होता ।

रोग से बचने का उपाय—अनायास्यो आदि की दूषित वायु से बचते रहें । भूखे न रहें । और किसी ऐसे सेले तमाशे वा अन्य स्थान में न जायें जहाँ बड़ी भीड़ हो । अकाल के दिनों प्रातः काल कुछ जलपान कर लिया करें । रोगी से दूर रहें । किसी तग कोठरी में बहुत से मनुष्यों के साथ न बैठें । स्वास्थ्यनियमों का पालन करते रहें । शुद्ध वायु का सेवन करें । इस हेतु किसी ऊँचे स्थान, जैसे पर्वत आदि पर, जा रहें । रोगी के घर की सफाई करें,

आरोग्य होने पर छूतनाशक अर्कों से घर और सामानों को खूब धुतु करें ।

रोगी की चिकित्सा—ऐसा प्रबंध करें कि जिससे मल मूत्र का काम अच्छी प्रकार हो । यदि कब्ज हो तो रीही का तेल वा सलफेट आफ मेग्नेसिया चार ग्राम वा १ औंस की मात्रा में देकर पेट साफ करें । यदि उबर तेज हो तो उस के लिये नीचे का जुसखा दें—

लाइकर एनोमिया एसीटेटिस	१२ ग्राम
पुटास लाइट्रेट	३० ग्रैन
स्त्रिपटि ईथर लाइट्रिक	१ ग्राम
मेग्नेसिया सल्फ (यदि कब्ज हो)	१२ ग्राम
एक्वा कैम्लर	६ औंस

मिला कर इसमें से एक औंस की मात्रा प्रत्येक तरुण रोगी को प्रत्येक तीन २ वा चार २ घण्टे पीछे दें । मींद लाने को

क्लोरेड वैञ्जेट	२० ग्रैन
पुटास ब्रोमाइड	५० ग्रैन
पानी	२ औंस

मिला कर रात में सोते वक्त दें । आख दुर्ल तो कान के पीछे डिस्कर (छाछा डालने वाली औषधि) लगावें । और सयोगी रोगों की सचित चिकित्सा, जैसा देखें वैसा, करें करावें । रोगी को पथ्य ऐसी दें जिससे कष्ट न हो और जो शीघ्र अच्छे; जैसे दूध, शोरवा, सैगो, बारली, आदि ।

४३४ छूतवाले रोग और सर्न से बचने का उपाय ।

आराम से और सफाई से रखें । बहुत से मनुष्यों को पास न बैठने दें ।

द्रूक्रूप TRUE CROUP

इसकी हिफथेरिटिक क्रूप Diphtheritic Croup या मेंम्ब्रेनस क्रूप Membranous Croup भी कहते हैं । यह एक कठिन संचालिक छूत दार रोग है जो बहुधा बच्चों को होता है । यह कभी “स्फुरेडिक” और कभी “इपीडेमिक” प्रकार का देखा गया है । इसका श्वस स्वास द्वारा या रुधिर में प्रवेश हो कर अपना असर प्रगट करता है ।

हवा की माछी की बलगमी फ़िझी में प्रथम रुधिर अधिक पहुँच कर एक प्रकार का रिसाव होने के उपरान्त, कौठवा के पास एक सफेद फ़िझी “हिफथीरिया” की भाँति उत्पन्न होती है और सहज में सखड़ जाती है ।

कारण—दो प्रकार का है १ आन्तरिक २ प्रत्यक्ष ।

१ आन्तरिक कारण—बच्चों को दूध के दात निकलने के समय, अर्थात् ६ महीने से ६ वर्ष तक की अवस्था में, बहुधा होता है । लड़कियों की अपेक्षा लड़कों में अधिक देखा जाता है । माता का दूध न मिलना, ऊपरी दूध पिलाना, तराई के देशों में एकाएक जल में परिवर्तन होना, निर्बलता आदि भी इसके आन्तरिक कारण हैं ।

२ प्रत्यक्ष कारण—कुल शरीर या केवल गले पर सर्दी लगना, भीगना, या इन रोग के रोगी की छूत स्वास द्वारा या अन्य प्रकार से शरीर में प्रवेश करना है ।

लक्षण—आरम्भ में उधर जुकाम के साथ होता है । शारीरिक गर्मी बढ़ जाती है, नाक बहने लगती है । जीभ

मैली हो जाती है। प्यास अधिक लगती है। क्कड़ा होता है। पश्चात् हमके धोली मारी हो जाती है। खासी सूखी और एक मुख्य प्रकार की होती है, निगलने में दुःख होता है। एक दो दिन बीतने पर कठिन लक्षण अर्थात् ज्वर अधिक हो जाता है। त्वचा की रगत कासी पड़ जाती है। हाथ और गोह ठंडे हो जाते हैं, माही की गति घट जाती और वह कुछ कही तथा मरी हुई चलती है। लहका एकाएक चौक कर बिछौने पर बैठ जाता है, दम घुटने लगता है, निप्रसे बेचैनी अधिक हो जाती है। चेहरे की रगत कीकी पड़ जाती है या लाली छा जाती है, चेहरे की खूनी रंगें लभर जाती हैं, आँखें लाल, पानी से बबबबाई, स्वास लेने में कष्ट, भीतर की सास लम्बी तेज़ और प्रत्येक इंसप्रेशन^१ के साथ एक सूखा शब्द मुर्गे के चींझने की भांति जो एक बार सुनने से नहीं मूलता,—ये चिह्न होते हैं। जब उपर्युक्त लक्षणों में कमी होती है, तो यथा सुस्त और दुखी होता है। पैंठनी (लसतुकी) खानी, निप्रसे यथा बिलबिला उठता है, सुयह के समय अधिक होती है। फिर ऐसी ही खानी का समय आने से सोता बड़ा जाग उठता है। लक्षणों में तेज़ी हो जाती है। चेहरा लाल, कुछ कालापन छिपू, हो जाता है। यथा हरदम मुह में खगली हालता है। नामों कठ से कोई अटकी हुई वस्तु निकालने की चेष्टा करता है। पैंठनी खांसी उठते ही सिर पीछे झुका लेता है। सास जल्दी २ छेने लगता है। कठिन रोगियों में विश्राम का दर्जा कम या बिलकुल नहीं होता। हर समय दम घुटने की

४३६ छूत वाली रोग और उस से बचने का उपाय ।

दशा पाई जाती है । ठंडा पसीना सारी शरीर में आता है । बेहोशी होकर मरने की दशा पहुंच जाती है ।

अवधि—इस रोग की अवधि २४ घण्टे से लेकर ५ दिन तक है, कभी २ दो हफ्ते तक देखी गई है । शुभ लक्षण यह है कि खांसी सर हो जाय, बलगम निकलने लगे, खासते २ फूटी फ़िफ़ी निकल जाय, स्वास साक हो जाय तो जीने का आरोग्य होने की आशा है, नहीं तो अन्यान्य रोग सहायक हो कर मार डालते हैं ।

निदान—इस रोग में और “कटारल लेरिजाइटिस” (हवा की नाली की सूजन) “डिफ्थीरिया” (गले में फूटी फ़िफ़ी वाले रोग) “कालस क्रूप” (फूटा क्रूप) में बहुत मेल है, इससे धोखा हो जाता है, अस्तु इन का आपस का भेद जानना उचित है ।

डिफ्थीरिया ।

- (१) यह चीरे २ होता है ।
- (२) पथ्य की नाली (फेरिग) में होता है ।
- (३) जखड़े की गिलटियां सूज जाती हैं । “लकवा” और एलठ्यूमिनोरिया (मूत्र रोग) हो जाता है ।

द्रू क्रूप ।

- (१) पकाचर देखने में आता है ।
- (२) हवा की नाली (लेरिग) में होता है ।
- (३) इसमें नहीं होता ।

लेरिजाइटिस ।

- (१) जवानो को होता है ।
- (२) हवा की नाली में जलन होती है । फूटी फ़िफ़ी तो नहीं, हा पाव अवश्य होता

द्रू क्रूप ।

- (१) घघे अधिक घसित होते हैं ।
- (२) हवा की नाली में फूटी फ़िफ़ी पैदा होती है । दम पुटता है । खांसी खाव

है। खाँसी मुख्य प्रकार की और कफ अधिक निकलता है।

तरह की और बलगम (कफ) नहीं निकलता।

(३) जुकाम नहीं होता और छ्वर भी कम होता है।

(३) जुकाम और छ्वर साथ होता है। छ्वर तेज होता है।

फाल्स क्रूप।

द्रू क्रूप।

(१) यकायक बिना किसी लक्षण के प्रगट होकर यकायक आराम हो जाता है।

(१) कोई न कोई लक्षण प्रगट होने के उपरान्त होता है। और धीरे-२ आराम होता है।

(२) छ्वर नहीं होता।

(२) होता है।

(३) खाँसी मुख्य प्रकार की नहीं होती।

(३) सुर्गे के चीखने की आवाज़ होती है।

(४) विज्ञान में कोई क्षेय नहीं होता।

(४) विज्ञान में ही क्षेय बना रहता है।

(५) कम्बलघन^१ होता है।

(५) कम्बलघन नहीं होता।

परिणाम—जब विज्ञान काल में क्षेय कम हो, भूठी क्लिष्टी खाँसी के साथ निकल आवे, निर्वलता कम हो, और कोई अन्य रोग का संयोग न हो तो परिणाम अच्छा है। परन्तु जब हवा की माली में पेंठन होने के कारण हवा फेफड़े में न आवे, या रोग बढ़कर हवा की सूक्ष्म मालियों में फैल जावे, छ्वर आरम्भ ही से तेज हो, और स्वास लेने में कष्ट हो, सुन्नक (सूखी) खाँसी हो, नाड़ी भारीक, धीम २ और अनियमित हो, निर्वलता अधिक हो, चेहरा नीला तथा भिजा हुआ, आँखें धुमी हुई हों, तो

^१ यद्यो में एक प्रकार की पेंठन होती है।

४३८ छूतवाले रोग और उन से बचने का उपाय ।

परिणाम अशुभ है ।

रोग से बचने का उपाय—ऐसे रोगी बच्चे के समीप निरोगी बच्चों को न ले जाएँ । निरोगी बच्चों को साफ़ रखें, मरदी न लगने दें, ऊपर का दूध न पिलावें, यदि पिलावें भी तो बसरी का दूध दें । यदि यह रोग हो जाय तो उसकी चिकित्सा करें ।

चिकित्सा—रोग के आरम्भ में रोगी को गर्म जल में दस निमिट तक बैठायें, “एपीका केवाना” वमन लाने को दें । छवर के लिए उचित चिकित्सा करें । कफ निकालने के लिए “इपीका क्युआना” उचित मात्रा में दें । यह जुमला सत्तम होगा—

छाड़कर एमोनिया एसीटेटिस	२ ग्राम
टारटार एमेटिक्	१० ग्रैन
स्विपरिट ईथर नाइट्रिक	१५ मिनिम
पुटासी नाइट्रास	५ ग्रैन
मेगनेसिया सल्फास	दो ग्राम
वाइनम् एपीकाक	१० मिनिम
पुटास प्रोमाइड	१० ग्रैन
पाणी कपूर का	१ औंस

मिलाकर इसमें से एक या दो ग्राम की मात्रा में एक या दो वर्ष के बच्चे को प्रत्येक ३ या २ घण्टे पीछे पिलावें । जब रोग कठिन हो तो “फ्लानेल” या स्पंज के टुकड़े को गर्म पानी में भुंवा निचोड़ कर गले को सेंकें । पीछे फ्लानेल या और गर्म पट्टी से गले को बांध रखें । यदि इससे लाभ न हो तो “एपीका क्युआना” वमन कारक मात्रा में दस २

या पन्द्रह २ मिनिट में खिलावें जब तक कि भली भाँति घमन न हो जाये । पांच वर्ष के बच्चे के लिए यह सुझाव उत्तम है—

आयोडाइड आफ पुटासियम	२ ग्रैन
एरोमेटिक स्प्रिट आफ एमोनिया	२ मिनिम्
टिचर समेगा	२ ”
विपरमेट घाटर	३ ड्रान

यह एक मात्रा है । ऐसी मात्रा दो दो या तीन २ घण्टे पीछे दें । खाने को दूध, शोरवा, चाह आदि पिलावें । यदि ज्वर अधिक हो तो गर्म जल से स्नान कराए या स्पर्श भिजोकर शरीर को धोएँ । निर्व्यलता में स्टीमुलेंट Stimulant औषधियाँ जैसे एमोनिया, ईथर, ब्राडी, आदि दें । कूटी किङ्गी निकालने का मादा या बूने का गर्म पानी, “स्प्रे” Spray के द्वारा कंठ में पहुँचावें । भरकरी आइन्स्टमेंट (पारे का भरहन) रोग स्थान पर मलें । पारा आदि न खिलावें । साफ हवादार घर में रोगी को रखें । साफ कपड़े आदि पहिरावें । स्वास्थ्यरक्षण के नियमों का पूरा २ बन्दोबस्त करें ।

प्लेग = PLAGUE मरी-ताऊन

परिभाषा—छूतदार रोगों में इस का आसन सब से ऊँचा है । अथवा यों कह लीजिए कि यह छूत वाली रोगों का दादा है । प्रायः दस बारह वर्ष से यह जनसहारक रोग भारत वर्ष की जन शून्य बर्तमान की चेष्टा कर रहा है ।

१ एक टोटीदार यन्त्र है जिसमें गर्म जल भर कर बुझ द्वारा कंठ में भाष सेते हैं ।

४४० छूतवाले रोग और उन से बचने का उपाय ।

यद्यपि यह रोग पहिले श्री भारतवर्ष में कई बार हुआ था तदपि इसे सर्वसाधारण, जो इस सदी में विद्यमान थे या हैं, नहीं जानते थे । इसी से इस के पधारते ही जनसमुदाय में भ्रांति के तर्क वितर्क उठ रहे हुए । कोई कहता है कि यह ईश्वर का कोप है, कोई कहता है कि नहीं यह कोप तोप कुछ नहीं सरकार ने ही मनुष्यों के नारने के लिए नयी बीमारी फैलाई है, आदि । इन्हीं शकाओं के धशीभूत हो कितने ही स्थानों में बलवे, दंगे, आदि कितने ही बसे रहे हुए । फल भी वही हुआ जो प्राय होता है । अर्थात् कई एक फाँसी पा गए । कई एक कठिन कैद में डाले गए । विचार से विद्वद् हुआ है कि यह बीमारी एशियाई है, इस का पता बरक, सुन्नत, बोगेनह आदि आयुर्वेदिक ग्रन्थों तथा पुराणों में अच्छी तरह लगता है । तुलुक जहागीरी में भी इस का आगरे आदि नगरो में होना लिख है ।

सब से प्रथम यह रोग ईसा के ४३० वर्ष पूर्व "एथन्स" नगर में हुआ था । उस के पीछे यह निम्न देश में पहुंचा । छठी शताब्दी में निम्नदेश से यूरप में जा पहुंचा । सन् १६६९ में फिर इसने इंग्लैंड पर चढ़ाई की । पश्चात् सन् १८४० में इस के कुस्तुनसुनिया में और १९०६ में फिर इंग्लैंड में पधारा था ।

भारतवर्ष में सन् १३४५ ई० में प्लेग का बीजारोपण होकर सन् १५६० के लग भग यह काशी शहर में हुआ । जहा गीर के समय सन् १६१८ ई० में आगरा और काशी में इसने खूब घूम मचाई । गो० तुलसीदासजी के समय में भी यह काशी में विद्यमान था । सन् १८१४ ई० में कच्छ और गुजरात

में तथा १८२५ में कनाक प्रदेश में हुआ । फिर इस का सन् १८२६ में घरेली तथा सन् १८३७ से सन् १८४४ तक हासीहिंसार में होना निश्चय है । पश्चात् सन् १८६६ ई० में बम्बई नगरी में यह दुष्ट आया । तब से आज तक इसने भारतवर्ष को नहीं छोड़ा और न सान दो साल की फुरसत ही दी ।

उपर्युक्त लेख से यह सिद्ध हो चुका कि यह रोग, न तो नया है और न दयालु सरकार ही इस में कुछ हस्तक्षेप करती है । यह जनसंहारक रोग पुराना पापी है, भारतवर्ष का चिरशत्रु है ।

इस सदी में यह रोग पहले पहल सन् १८२५ ई० में बम्बई नगरी में हुआ । होने का कारण यह बतलाते हैं कि सन् १८२५ ई० के अक्टोबर महीने में हागकाग से बहुत सामान से लदा एक तिब्बारती जहाज बम्बई में पहुँचा । उस जहाज से कुछ सामान बम्बई में उतारा गया । उन्हीं सामानों के किसी पुलिसदे में कई प्लेगी बूढ़े मरी निकले । लोगों ने साधारण बूढ़े जान कर उन्हें कैद दिया । उस वन बूढ़ों का असावधानी से कैदना ही इस दुष्ट के फैलने का कारण कहा जाता है । बम्बई नगरी में फैलते ही लोगों ने मागमा शुरू कर दिया । फल यह हुआ कि जहा २ वे लोग यक्षित वा अयक्षित होकर पहुँचे वहाँ २ यह रोग भी साथ लगा गया । प्राचीन काल में रेल, आदि न होने से रोग जिस नगर में होता था वहाँ जनसंहार करके सुप्त हो जाता था । किन्तु इस नवीन समय में रेल द्वारा आज बम्बई में तो कल पूना में और कल पूना में तो परसे कलकत्ते में इस का पहुँचना सहज हो गया । इसी कारणों से सम्पूर्ण भारत वर्ष में

४४२ छूतवाले रोग और उन से बचने का उपाय ।

कैल कर बचने अपना सहारक शासन शुद्ध कर दिया । सन् १८८६ ई० से १९०८ ई० तक ६० लाख के लगभग मनुष्य अकस्मिन् इस भयङ्कर रोग से मर चुके हैं । सन् १९०४ और १९०९ का "प्लेग" बड़ा ही भयावना हुआ है । लाखों ठेलों में लकड़ियों की जालि भर कर फेंकी, गाड़ी, तथा जलाई गयी हैं ॥ मगर गांव, महल तथा ज्योंपड़े जन शून्य हो गये ॥

प्लेग की उत्पत्ति—कहते हैं कि लिबिया Libya उत्तरीय अफ्रीका में लगभग ४७ या ४५ इंच नीचे की जमीन में एक प्रकार के जहरी कीड़े पाये जाते हैं । ये आकार में इतने सूक्ष्म होते हैं कि बिना सूक्ष्मदर्शक यन्त्र के नहीं दीख सकते, किन्तु विकार में बड़े भयङ्कर होते हैं । इन्हें चूहे बड़े प्यारे हैं । यों तो ये गिलहरी, बंदर, आदि से भी खुश हैं, तो भी इन कीड़ों को अपने स्वदेशी भाई चूहे ही अधिक प्रिय हैं । स्वदेशी कहने का यह अन्तिमार्थ है कि चूहे भी पृथ्वी में निवास करते हैं, और प्लेगी कीड़े भी पृथ्वी के नीचे रहते हैं । अतः एक दूसरे से बहुत शीघ्र मिल जाते हैं । चूहे मिल खाद कर इनके पास पहुँच जाते हैं । ये (कीड़े) चूहों के शरीर में प्रवेश कर उनके साथ ही बाहर जाके उन्हें "प्लेगी चूड़ा" बना देते हैं, कीड़ों के अमर से चूहे तत्क्षण मर जाते हैं । चूहों के सूतक शरीर से निकल कर प्लेगी कीड़े नरनारियों में फूट निकलते हैं । प्लेगी कीड़े ही इस रोग के प्रधान कारण माने जाते हैं । चूहे ही नर नारियों में इस रोग को फैलाते हैं । क्योंकि यहस्यों तथा चूहों से पहा सम्बन्ध है । अथवा यों समझ लीजिए कि जहाँ अन्न राख है वहाँ चूहों का निवास है । और जहाँ चूहों का निवास

है वहीं स्त्री कीर्णों का रास महल है। स्त्री भूहे जहा एक घर से दूसरे में पहुँचे तथा तुरत प्लेग का प्रादुर्भाव हुआ। इसी से एक घर में होते ही आस पास के सब घरों में प्लेग फैल जाता है।

प्लेगी कीर्णों का आकार दो सरसों के बीच में एक छोटा लगा हुआ ०—० इस प्रकार का है जो सुर्दमीन से भली भाँति दृष्टि आता है। अर्थात् एक बाल की जड़ में कई कीड़े निवास कर सकते हैं। एक आदमी के प्राण लेने को एक कीड़ा काफी है। यतक शरीर में ये एक से एक हज़ार तक हो जाते हैं। इन की जन्मभूमि सिसर, श्याम, छिछिया आदि के सिवाय भगवत्प्रेम भी है।

इनका स्वभाव ऐसा है कि ये सीज, कीचड़ तथा ठंडक से बड़े बलवान होते हैं, और कुछ ही गर्मी से घबड़ा कर मर जाते हैं। यह घृणिन तथा अपवित्र पदार्थों से अधिक प्रेम रखते हैं। ऐसे पदार्थों में पहुँच कर ये एक के 'अनेक' हो जाते हैं। समुद्रों की स्त्री गाँठ में पहिले एक ही दो कीड़े होते हैं। फिर एक दो दिन में अधिक बढ़ जाते हैं। इनकी बढ़ाने की तरकीब एक हाकर साहब ने यों बतलाई है कि चोड़ा शेरवा एक गिलास में भर कर कुछ गिनती के कीड़े उसमें डाल कर ऊपर से घी फैला दो दूसरे दिन उसमें अजगिनत कीड़े उत्पन्न हो जायगे।

इन कीर्णों का असर बूहे, गिलहरी, बन्दरी के रुधिर पर पड़ती होता है। बूहों का रुधिर इन्हें अधिक प्रिय है, बूहों के रुधिर में ये एक के एक सी तक हो जाते हैं। एक बूहा एक कीड़े से मर जाता है किन्तु मरते ही उसके

४४४ खूतधातु रोग और उन से बचने का उपाय ।

शरीर में लाखा कीड़े हो जाते हैं जो और खूहों पर आक्रमण कर कर नारियों में फैल जाते हैं । जिस मनुष्य का खून इनकी रुचि के प्रतिकूल होता है वही बच जाता है । अन्य पदमके शरीर में प्रवेश करते ही मनुष्य का सारा रुधिर दूषित हो जाता है ।

कारण—कारण दो प्रकार के हैं । (१) आन्तरिक (२) प्रत्यक्ष ।

(१) आन्तरिक कारण—प्लेगी कीड़े का मनुष्य के शरीर में प्रवेश करना ही मुख्य कारण है, बीसा ऊपर वर्णन कर आए हैं । चाहे ये कीड़े किसी प्रकार से वयो न प्रवेश करें, इनके प्रवेश करते ही मनुष्यों में प्लेगी लक्षण उदय हो जाते हैं । इसके आन्तरिक सवास द्वारा या प्लेग रोगी के पीप, वस्त्र, तथा और सामानों द्वारा भी इस रोग का विष पैदा हो जाता है ।

(२) प्रत्यक्ष कारण—नगे रहना, नगे पाये फिरना, कगल होना, मैला रहना, भजन आदि का जहाँ ठहर हो उस स्थान में रहना, नगे खूहों को हाथों से उठा कर फैलना या छूना, प्लेग रोगी को छूना या उस के समीप रहना, ऐसे घर में रहना जहाँ एक बार प्लेग हो चुका हो, इस रोग का सरा मुर्दा सठाना या छूना, कृत्वा रहना, ऐसी कोठरी में सोना जिस में सील अधिक तथा गंदगी हो, जिस स्थान में इस रोग की दवा हो जहाँ रहना, आदि प्रत्यक्ष कारण हैं । घरों में खूहों का सरना इस रोग के आगमन की सूचना है, इसे जान कर भी जो उन स्थानों की नहीं हटा-गते वे समय पाकर अवश्य ही इसके शिकार होते हैं । इन

के अतिरिक्त भय भी एक प्रधान कारण है । अर्थात्तर मनुष्य शीघ्र ही आक्रान्त होते देखे गए हैं । उस समय तो निश्चय जब कि इन रोग की बया बहुत तेज हो, जैसे कि सन् १९०४ तथा १९०७ में थी, तब निश्चय से भय के कारण अधिक मनुष्य मरे यह मैंने अपने नेत्रों से देखा है ।

लक्षण—लक्षण को पांच दर्जा में लिखेंगे ।

(१) दर्जा—अर्थात् विष कीटको का प्रवेश—काल—

कीटों के शरीर में प्रवेश करने के उपरान्त २ दिन से ७ दिन, किसी २ में दो तीन सप्ताह तक, तो कोई मुख्य लक्षण प्रगट नहीं होती । किन्तु जब यह रोग प्रचल हो तो दो चार घंटे ही में सब कुछ हो जाता है ।

(२) दर्जा—इस में हाथ पैरों में और मस्तक में

पीड़ा होती है । इतनी पीड़ा कि जिसे रोगी बरदाश्त नहीं कर सकता । जहां गिलटी निकलनी होती है वहां इस दर्जे में केवल कुछ पीड़ा जान पड़ती है । जो में एक प्रकार की चक्काहट, जब ऊपर हो जावे तो मोलम में अरुचि, छुस्ती, तथा इन्द्रियों में शिथिलता, निर्बलता, और शरीर में विशेष कर हृदय में एक प्रकार की पीड़ा, होती है । कभी दस्त लग जाते हैं, कभी घमन होती है । दो दिन तक यही लक्षण दिखाई देकर गिलटी गले, घगल, वा नाचो में निकल आती है । कभी २ इन लक्षणों के बिना ही ऊपर १०३-१०४-कभी २ ५६७ डिग्री का चट आता है । माही की सरुपा अधिक हो जाती है । प्यास अधिक, भूख, तथा नाखें लाल हो जाती हैं, कोई २ रोगी तो ऊपर चढ़ते ही अचेत हो जाते हैं, परन्तु बहुधा पीरे २ अचेत हो जाते हैं, मल मूत्र कर

४४६ छूतवाले रोग और उन से बचने का उपाय ।

फट्टी बघ जाती है । ऊपर मस्तीभूत एक सा दिन रात चढ़ा रहता है ।

(३) दर्जा—कांख गांध तथा गले की गिलटिया समस्त ही उन में दर्द उत्पन्न हो जाता है । देखने में कोई मूत्र, कोई बलक के छहे की भाति, कोई गोल कोई चपटी, छूने से गर्म देखने से तनी हुई छाल होती है । किसी २ में तो ५७ तक निकलनी देखी गई हैं । इस दर्जे में किसी २ को दस्त काले रंग के, सूत्र लाल रंग का होता है । रुधिर वस्त भी होता है । यदि यह लक्षण प्रगट हो तो रोग असाध्य समझना चाहिए । किसी को गांठ निकलते ही ऊपर प्रबल चढ़ कर दो एक घंटे में रफू चक्कर करता है । कोई कोई ५-७ दिन तक जीते रहते हैं । इस दर्जे में ऊपर प्राय १०५ १०६ डिग्री तक रहता है, मांसी शीघ्र २ चलने लगती है । हृदय की गति अनियमित शीघ्र तथा निर्बल होती है, रोगी या तो अचेत रहता है या खोलने या खुलाने से हा हां करता है । कांखें लाल, चेहरा जयावना हो जाता है । जीभ बाहर निकलने में हापने लगती है । उपरान्त जिस प्रकार का प्लेग हुआ उसी प्रकार का परिणाम भी प्रगट होता है । अर्थात् "क्यूनी निक" हुआ तो केफडे की सूजन और "क्यूबोनिक" हुआ तो व्यूयो (बद-गांठे) 'कोलरिक्' हुआ तो धीना आदि के लक्षण प्रगट होते हैं । किसी २ में कोई दर्जा नहीं प्रगट होता । रोगी आदि से ही अचेत, गांठें निकलने भी नहीं पाती कि मर जाता है । किसी २ में तो यह दृश पाई गई कि तुरंत ऊपर हो कर गांठें निकली और घंटे दो घंटे में मृता कि मर गया ।

४ दर्जा—इस दर्जे में आरोग्यता के चिन्ह दिखाई पड़ने

लगते हैं, मुख पर प्रकाश, आँखों में उजाला, आ जाता है, क्वर घट जाता है, गार्ते या तो बैठ जाती हैं या चममें पीप पह जाती है जो सहीनों में अच्छी होती है। मुख लागने लगती है। पाखाना पीले रंग का ढीला होता है। मुख का रंग बदल जाता है, केवल निर्बलता रह जाती है। कोई २ रोगी प्लेग के पञ्जे से छूट कर निर्बलता से भरते देखे गए हैं।

भेद १ गांठ वाला—इसमें कंठ, गले, जाँघों तथा काखों में गिल्टिपां निकल आती हैं। किसी २ में मुख के भीतर भी निकल आती हैं। इसे “व्युद्योनिक प्लेग” कहते हैं। इस में सी में ३०, ३५ आदमी बच जाते हैं।

भेद २ जिस में हिजे के चिन्ह हों—इसमें हिजे के लक्षण प्रगट होते हैं, किसी में केवल हिजे के चिन्ह, किसी २ में व्युद्योनिक के साथ, प्रगट होते हैं। के या तो साधारण हिजे की वा साली पीछी तथा रुधिर की होती है। दस्त पतला काले रंग का दुर्गन्धित होता है। द्विचकियां भी आती हैं। इसे कालरिक प्लेग कहते हैं। कोई २ इसे इन्टेस्टाइनल प्लेग कहते हैं। सी में २०, २५ अनुष्य इसमें बच सकते हैं।

भेद ३—हृदय में शूल उत्पन्न करने वाला। यह हृदय के चतुर्दिश पसलियों में दर्द करने वाला बड़ा शयानक रोग है। इसमें सत्तण सृत्य होती है। कुल १५-१६ आदमी सी में बचते हैं।

भेद ४—फेफड़े में सूलन उत्पन्न करने वाला—इसमें फेफड़ा सूज जाता है। अंगरेज़ी में इसे “प्युमोनिक” प्लेग कहते हैं। इसमें १० १५ आदमी बचते हैं।

४४८. छूतवाले रोग और उन से बचने का उपाय ।

भेद ५—मस्तक में विकार उत्पन्न करने वाला—इसमें औन्मादिक छक्षण प्रगट होते हैं । इसे “कार्थिक प्लेग” कहें तो अनुचित न होगा । इसमें रोगी कभी थक झुक करता, कभी खरटि से लेकर लोगों को डराता है । इसमें सी में १०, १५ २० तक बचते देखे गए हैं ।

भेद ६—भय से होने वाला—इसमें भ्रूण जान जाती है । मनुष्य देखते वा सुनते ही रोगग्रस्त होता है और उपर्युक्त भेदों में से किसी एक का विकार होता है । इसमें ५० से भी अधिक बच जाते हैं । उचित चिकित्सा की जावे, जिस से कि भय दूर हो, तो ८० ९० तक बचत हो सकती है ।

भेद ७—सहने वाला—इसमें तुरन्त रोगी की गिलटियाँ वा सारा शरीर भीतरही भीतर सह जाता है । मृत्यु होते, वा किसी २ में जीते ही, कीड़े पड़ जाते हैं । यह बड़ा भयानक तथा घृणित प्लेग है । इस प्लेग के शव की माफ से मनुष्य रोगी हो सकता है । इसमें सी में चार पाँच ही मनुष्य बच जाते हैं । अंगरेजी में इसे सेप्टिसीमिक प्लेग कहते हैं । प्रायः यही अधिक होता है । ऐसे रोगी के शव में असह्य प्लेगी कीड़ों के होने की सम्भावना की जाती है क्योंकि कीड़ों का सही दुर्गन्धित चीजें अधिक प्रिय हैं ।

इन भेदों के अतिरिक्त और भी बहुत से भेद हैं जो समुक्त रोग के साथ होने से विविध नामों से पुकारे जाते हैं । यथा किसी २ में रुधिर बमन होने से “हिमाप्टेटिक” प्लेग, तथा सक्किपात होने से “टाइफाइड” प्लेग आदि कहते हैं ।

ग्वधि—कोई ठीक नहीं । बहुत २ दिन से ४ दिन तक देखी गई है । कोई रोगी २४ रोज कोई २४ घण्टे तथा कोई २ सप्ताह २४ मिनिट ही में चल घसते हैं ।

परिणाम—अशुभ है । यदि कोई अन्य रोग न, भा मिले, बहुत गिर्यलता न हुई हो, गांठों में पीप पड़ जाय, खर कम हो, हृदय में बिगाड़ न उत्पन्न हुआ हो तो आरोग्यता की आशा है । यदि गांठें गले, मुख वा कनपटी पर हों, हेजे के चिन्ह दिखाई दें, अचेतता अधिक हो, खर १०४ से ऊपर १०६-१०८ डिग्री पर हो तो अमानक परिणाम समझना चाहिए । गले वा मुख के भीतर की गिलटियां सूजी हों तो अवश्य मृत्यु होती है । कांखें तथा जाघों की गिलटियां अच्छी होती देखी गई हैं । सहने वाला स्त्रेग बहुत खराब है, केकड़ेवाला दुखदाई होने के सिवाय प्राणघातक भी है । सारांश यह कि इसका परिणाम मेदानुकूल है । सरल भय से उत्पन्न होने वाला केवल एक ही स्त्रेग है । शेष सब कठिन तथा अमानक हैं ।

निदान—इस रोग में टाइफस फीवर (काला खर) का संदेह होता है । निम्न लिखित बातों पर ध्यान रखने से संदेह दूर हो जाता है कि इस रोग में खराब पर कोई दाने नहीं निकलते यन् शोषक गिलिटियां कठ कांख तथा जाघों की सूज जाती हैं । मृत्यु २४ घण्टे से लेकर १ दिन के भीतर होती है । यह बात टाइफस फीवर में नहीं पाई जाती ।

प्लेग से बचने के उपाय—इस रोग से बचने के दो उपाय हैं । एक तो जहां प्लेग हो रहा हो वहां उससे बचना । दूसरा प्लेगी हो जाने पर उससे रक्षा माना ।

४५० छूतवाले रोग और उनसे बचने का उपाय ।

(१) उपाय (क) जिस स्थान में प्लेग शुरू हो, बाघों में घूँसे मरने लगे तो तुरंत उस स्थान को छोड़ कर कहीं दूसरी जगह चले जायें या उस शहर तथा यान को छोड़ कर, वन, बाग, या खारी में निवास करें । यदि यह असंभव हो तो इस बात को ध्यान में रख कर रहें, कि घर ऐसा हो कि जिसमें शुद्ध वायु का गमनागमन हो, प्रकाश, तथा सूर्य की धूप आती हो । घर यदि पक्का है तो बूने से और यदि कच्चा है तो पोतनी मिट्टी गोबर आदि से उसे पुतला लिपवा कर साफ रखें । पाखाना सोरी आदि-निम पुतला कर साफ करें । दुर्गंध दूर करने को जूना वा कार्बोडिब एसिड लोशन, वा परमेन्गेनट आफ पुटास आदि का व्यवहार करें । या २० तोला हीरा कसीस, १० तोला सुहागा और आधा तोला करोनिव सबलिमेट (दार चिकना = पाक्लोराइड आफ सरकारी) ढाई सेर पानी में मिलाकर पाखाने तथा पनाले आदि को घुलवा दिया करें । घर के किवाड़ आदि धूप निकलते ही खोल दें, किन्तु सूर्यास्त होते ही उन्हें बंद कर दें; लेकिन ऐसा न बंद करें कि शुद्ध वायु का प्रवेश ही न हो । यदि सीली जमीन हो तो कोयला जलायें वा जांभा की गरम द्राख लाकर बिछावें । गधक, गुग्गुल, धूप, लोमान, वा नीम की पत्ती की धूनी दिया करें । हो सके तो दीवारी को सलिया मिलाकर पोतवायें । घर के आस पास यदि कुड़ा करकट आदि जमा हो तो उठवा दें । जहाँ तक हो सके ऊपर के खुले कमरे में रहें । किसी वस्तु को जो किसी दूसरे से मास हो बिना धूप दिखाये गर्म किये वा शुद्ध किए घर में न लावे । हो सके तो खाने पीने और पहिरने बर्तने की

भीलो को दूसरे स्थान से जहा प्लेग न हो मगवा लिया करें । किसी के घर न जाय और न छुआछून फैलावें । (इस स्थान पर हमारे पूर्व जाचारी याद आते हैं । हाय ! वह जाचार कहाँ गया जो इन्हें ऐसी छूतो से बचाता था) । मंगे पावों घर से बाहर न निकलें । लख घर आवें तो छूता भीखट के बाहर ही उतार दें, कपड़े आदि तुरत बदल डालें, उनको सुखा वा धुलवा डालें । शरीर को खूब साफ रखें । गर्म जल से नित स्नान करें, देह में तेल लगावें, तलवों में भी तेल मलें, वस्त्र साफ धुले हुए अच्छे पहिरें । बाल बच्चों को बाहर न निकालें । हो सके तो भाप भी इस से बचें । सनीन में न सोवें । भोजन गर्म गर्म, घी अधिक, पाचक तथा ताजा, खावें । आटा दाल आदि को सावधानी से ढाँक कर रखें । बासी न खावें । समय पर खावें । भूखे बैठ न रहें । दूध, चाय, काफी, आदि दोनों बक्त गरमागरम पीवें । पानी कूए का ताजा वा गर्म किया हुआ कपूर डाल कर पीवें । सर्दी, मादी, तथा अपच वस्तुओं से परहेज करें । घर में भूखे भरे हुए मिलें तो उन्हें चिनटी से सटाकर किसी झाँडी या टोकरी में डाल कर बरती से दूर ले जा कर बछा दें । जहा से सठावें उस स्थान को ऊपर लिखे लोगन द्वारा साफ करें, वा उस पर जाग सुलगा दें । गर्म कपड़ा पहिरें, शराब हानिकारक है इसे न पीवें । रज शोक भय को दूर करें । लख जाग जारी और घाटिकाओं में बिचरू करे । दिन में न सो कर रात में खूब सुख की नींद सोवें । बहुत सवेरे उठें, और गर्म जल से स्नान करें । सदा प्रसन्न रहें और औरों को प्रसन्न रखने की चेष्टा करें । सत्यु देख

४५२ छूतवाले रोग और उससे बचने का उपाय ।

कर न हरे । अपने पास केपूर वा “नेकपलीन” का टुकड़ा अवश्य रखें ।

(ख) प्रथम ही इनओक्युलेट (Inoculate) कार्वे । जैसे हाफटर जेनर ने गीधन का सीतला का टीका प्रचार करके सीतला से भारतवासियों की रक्षा की वही प्रकार हाफटर हाफकिन ने प्लेग का टीका खोज निकाला है । कहते हैं कि जैसे सीतला का टीका लगाने से सीतला नहीं निकलती, यदि निकलती भी है तो चरल, वही प्रकार प्लेग के टीके से प्लेग नहीं होता, यदि होगा भी तो चरल होगा । जो हो, इसी सिद्धान्त पर सीतला को टीका निकाला गया था जिससे आज करोड़ों प्राणी उस रोग की यन्त्रणा से मुक्त हुए देखते हैं । सम्भव है कि प्लेग का टीका भी किसी दिन वैसा ही काम देने योग्य हो । अभी तो इसका प्रचारमात्र है । लाभालाभ आगे देखने में आवेगा ।

२ उपाय—इसमें आयुधि द्वारा चिकित्सा की आवश्यकता है ।

(क) ज्यूबेनिक प्लेग—इसमें स्थानिक-उपाय, आन्तरिक दो प्रकार की चिकित्सा करें । स्थानिक चिकित्सा में रोगी को हवादार खुले जगह, किसी २ के मत से खुले मैदान या वृक्ष के नीचे, साफ बिस्तर और पर्लंग पर लिटावें । गांठों में तेज आइडीन Liqueur Iodid Hart अर्थात् Lomentt Iodine लगावें और उसे खूब सेंक कर भाच दें । या रसीद १ तोला, अफीम १ माशा, जिटकिरी १ तोला, आइडिन १ माशा, मिठाकर गर्म करके, बाँधें या भागवनी काटे का फन छीलकर

बार्थे । यदि इस से न बैठे तो तेलनी मक्खनी का प्लास्टर *Cantheradis plaster* (कैंथेरेडिस प्लास्टर) को बांधकर छाछा डालें । उपरान्त छाछा काट कर मक्खन लगावें । सोहे को गर्म करके ललाना भी लाभदायक बताते हैं किन्तु यह कार्य कठिन होगयायक है । सब से उत्तम यह है कि उसे तेज चाकू से सली प्रकार चीर कर उसका सम्पूर्ण रक्त तथा पीप निका लें । कच्चे पक्के का ध्यान न रखें । चतूरे के पत्ते को सेंक कर बांधने से भी आराम होता देखा गया है ।

आन्तरिक चिकित्सा में हजारी औषधियां सैकड़ों डाक्टरों वैद्यों तथा इकीमों ने व्यवहार कीं किन्तु कोई भी लाभकारी न ठहरी । यों तो बहुत से रोगी बिना चिकित्सा ही के अनेक स्थानों में अच्छे होते देखे गए हैं, सब किसी २ औषधि से किसी २ को आराम हुआ, किसी २ को नहीं भी हुआ । मतलब यह कि अभी तक कोई ऐसी औषधि नहीं मिली है कि जिस पर हम पूरा भरोसा करें । पर इसमें सन्देह नहीं कि रक्तविकार दूर करने वाली औषधियां कुछ उपयोगी ठहरी हैं । क्योंकि प्लेग के कीड़े मनुष्य के शरीर में क्या रुधिर में ही विचरते हैं, रुधिर विष-नाशक औषधियों के सेवन से इनका भी नाश होना सम्भव है । इस विचार से, फिनाल्ल, परमेगनेट आफ क्लाटेट्, पर-फ्लोराइड आफ सरफरी, आदि देना लाभदायक है । निखलता दूर करने को ब्रांही दूध में मिला कर हर तीन तीन घण्टे पीछे दें । मल शुद्ध करें । रोगी को उठने कौन कहे कर-घट तक न बदलने दें, क्योंकि मेक ही लुम्बिश में हृदय की गति बिगड़ जाने का बड़ा भय है । हमने निम्न लिखित

मुमखे से कई एक रोगियों को अच्छे होते देखा है और स्वयं इससे लाभ उठाया है ।

टिक्चर हिणीटेलिस	५ ग्रूद
स्परिट एनोनिया एरोमेटिक	२७ ग्रूद
छाड़कर हैड्राजराइ परक्लोराइड	३ ग्राम
टिक्चर सिमकोना कम्पौंड	२ ग्रूद
ब्राडी	२ ग्राम
पानी	१ लीन

मिलाकर एक तरुण रोगी को हर ३-४ घण्टे पीछे पिलावें । प्यास दूर करने को सोडा वाटर, बर्फ आदि दें ।

(ब) न्यूमोनिक प्लेग—इसमें आन्तरिक चिकित्सा वही करें जो ड्यूबोनिक में लिखी गई है । इसके सिवाय छाती पर राई वा बेलाहोना का प्लास्टर (पलसतर) लगावें । तारपीन के तेल से सेंकें, वा पुलटिस बार २ बदल २ कर लगावें । दूध खाने को दें । ब्राडी भी लाभ दायक है ।

(ग) शूल प्लेग—इसमें बहुत कम समय चिकित्सा के लिए मिलता है ।

(घ) कालरिक प्लेग—इसमें प्लेग के सिवाय कै तथा दस्त दुरुस्त करने वाली औषधि जैसे कैम्फर, बिसनिथ, आदि दें ।

(ङ) मस्तक विकार प्लेग—इसमें सिर के पीछे तथा पिहलियों पर राई वा मक्खी का प्लास्टर लगावें । बाकी चिकित्सा ड्यूबोनिक प्लेग की तरह करें ।

(च) अथ जलित प्लेग—यह ड्यूबोनिक प्लेग की भांति होता है अस्तु उसी प्रकार की चिकित्सा करें ।

(छ) सेप्टीसीमिक प्लेग । इसकी चिकित्सा अभी

खोज के घेद में है क्योंकि इसमें चट सड़न दौड जाती है ।
सड़न रोकने का उपाय अभी हाबटरों के अस्तक में है ।

कालरा—Cholera—दौडा-विशूचिका ।

यह एक प्राणघातक रोग है । इसमें वमन और चाल
की पीच की भांति दस्त होते हैं । शरीर के भीतरी तथा
बाहरी विभागों में एक प्रकार की एंठन होती है । शरीर
ठंडा पड जाता है, पित्त और मूत्र नहीं निकलता । पीछे
सेकेन्डरी कीवर भी होता है । इस रोग को अंगरेजी में
कालरा ये कहते हैं कि इसमें पित्त गिरता है, और यह
पित्तों के विकार से होता है । यह एशिया में अधिक होने
से “एशियाटिक कालरा” कहा जाता है, यूरोपीय कालरा से
इसका कुछ सम्बन्ध नहीं । वह इस से भिन्न है । यह “एपी-
डेमिक इन्फेक्चस” अर्थात् वायु द्वारा एक दूसरे पर
आक्रमण करने वाला है । संस्थान में इसे विशूचिका कहते
हैं । गर्म देशों में यह अधिक होता है ।

प्रत्यक्ष कारण—एक मुख्य विष से असर से यह
होता है । यह विष छुतदार है । इसका असर एक-दोनों से
दूसरे पर हो जाता है । जिस स्थान में बहुत मनुष्यों की
भीड़ हो जैसे प्रयाग, हरिद्वार, आदि तीर्थों में, या मेले,
तमाशों, तथा पियेटरों में, वहाँ यह सत्यक हो कर इजारा को
बेला बनाता है । छून का अंश रोगी के दस्त तथा वमन में
होता है । अतएव यदि दस्त या वमन का कुछ अंश पीने
वाले तथा अंतर्मे वाली वस्तुओं में लग जाय, और वह
वस्तु एक निरोगी पुरुष व्यवहार में लावे तो वह भी रोगी
हो जायगा । पानी के द्वारा इसका असर सड़न ही होता

४५६ छूतवाले रोग, और उन से बचने का उपाय ।

है । साम लीजिए कि एक रोगी ने वसन किया । उसका वसन छिटक कर एक पीने के लोटे पर पड़ा, एक निरींगी मनुष्य पानी पीने को वही लोटा लेकर कूप पर गया और उसने लोटा कूप से भर कर पानी पीया । पीते ही उसे दस्त तथा वसन आरम्भ हुआ । कूप में जो विष मिला उसके असर से जिस २ ने उस कूप का पानी पिया उन सब को हैला हुआ । इस प्रकार जलद्वारा इसका असर नगर २ में फैल जाता है । प्रवेश के समय इस रोग का विष चाहे कितना कम हो किन्तु शरीर में पहुँचते ही बढ जाता है । मल भी इसका कम छूतदार नहीं है । इस रोगी का मल सूख कर वायु में उड़ता है, फिर वायु द्वारा मनुष्यों में प्रवेश करता है । यही कारण है कि मेले आदि में बहुत मनुष्य इस रोग से मरते हैं ।

आन्तरिक कारण—चकन, कगलपन, कुपथ्य, सदिरा पान, बदचलनी, शोक, भय, तथा गोरे रंग आदि का होना । इसके सिवाय घुटापा, जुझाव वार २ लेना, सबीयत का विगडना, स्थान परिवर्तन, गर्म से शीत वा शीत से गर्म देश में जाना, एक बार हैला हो चुकना, वायु का गर्म, तर, तथा भारी चलना, मनुष्यों की बस्ती के समीप मैला कुचैला फूहा करकट आदि जमा रहना, ऐसा सहास करना जिसमें स्वाध्य भग हो, गाँवों के चारों ओर धूरे आदि का होना, विगडने वा विष मिले पानी का पीना, वायु और पृथ्वी की अवस्था में अंतर पडना, अज्ञोम का कम हो जाना आदि आन्तरिक कारण हैं । प्रातः काल का हैला अयामक समझा जाता है ।

लक्षण—लक्षण को ४ दर्जों में लिखना उचित समझते हैं ।

(१) दर्जा—इसमें विष २ दिन से १८ दिन तक बिना कोई लक्षण प्रगट किए शरीर में रहता है । निम्न लक्षण किसी २ में रोग आरम्भ होने से पहिले प्रगट होते हैं । बुस्ती, उद्वेग, मस्तक में पीड़ा, कानों में ऊमऊमाहट, आमाशय के स्थान पर दर्द तथा भारीपन, दस्त दिमा पीड़ा के, मुख का प्रकाश घूमिल, आदि । पश्चात् दूसरा दर्जा शुरू होता है ।

(२) दर्जा—इसमें दस्त बमन होने लगते हैं । बहुधा प्रातः काल या अन्य समय दस्त आरम्भ होते हैं । प्रथम २ दस्तों में कुछ मल दर्द के साथ जाता है और मरीह होती है । फिर चावल की घोवन की भांति दस्त पतले पानी की तरह सफेद तथा बिना दर्द के होने लगते हैं । दस्तों के साथ कभी उचके पीछे बमन शुरू होती है । इसमें भी बैसी ही सफेद रंगत होती है । इस दर्जे में प्यास अधिक लगती है । रोगी पानी २ बिछाता है । किन्तु पानी ठहरता नहीं, पीते ही चट्टी हो जाती है । हाथ, पैर, तथा सिर के पट्टों में ऐठन होने लगती है । सारा शरीर दुखता है । दस्त और बमन से रोगी पेशा निहाल हो जाता है कि समवे जोला तक नहीं जाता । इसके बाद चीरे २ तीसरा दर्जा आरम्भ होता है ।

(३) दर्जा—इस दर्जे में दस्त और बमन द्वारा शरीर के पनीले परमाणु सब निकल जाने से रोगी ठहा पड़ जाता है । शरीर की गर्मी बिल्कुल कम हो जाती है ।

४५८ छूनवाले रोग और उन से बचने का उपाय ।

शरीर का खुला हुआ भाग मुँह का सा जान पड़ता है। अस्तु । मुख में थर्मामिटर (उष्णमापक यन्त्र) द्वारा देखने से ७९ से ८८ दर्जे और काख में ९७ या ९९ दर्जे, वही प्रकार घोलि या आमाशय पर लगाने से १०३ या १०४ दर्जे, की गनी मासूम होती है। इतना ठंडा पड़ने पर भी रोगी को गनी जान पड़ती है; वह “पानी २” चिझाता तथा शरीर पर से ओढ़ना बँक देता है।

मुख की आकृति एक प्रकार की अर्थात् गाल चिबके, भाँखें झँठी हुई, अथखुली तथा श्वेत भाग चपटा हो जाता है। नाक नोकदार हो जाती है। होंठ, जीभ, तथा सब शरीर टेढ़ा और नीला पड़ जाता है। सारे शरीर में ठंडा पसीना निकलता है। साँस जोर से निकलती है और कार्बोनिक एसिड गैस के कम होने के कारण ठंडी होती है। बोलना नहीं जाता। अँगुलिया नीली और ऐसी फुर्तीदार हो जाती हैं जैसे पानी में देर से भीगी हों। नख नीले, पीले तथा नाड़ी ठहरने के निकट, कभी २ सुजा में भी नहीं जान पड़ती। “कोलेप्स” अर्थात् ठंडा पड़ जाने के दर्जे में यदि कोई हू पित रक्त की नाड़ी को खोले तो अलकसरे की साति गाढ़ा रुधिर निकलता है। चेतन्यता अंत तक बनी रहती है। किन्तु निर्बलता के कारण रोगी लाचार सुपचाय पड़ा रहता है। जीभ की बूछा बनी रहती है। वृष के सिवाय सारे रिसाव बंद हो जाते हैं। मूत्र कम परिमाण में तथा किसी २ को बिलकुल नहीं होता। दस्त कुछ कम हो जाते हैं परन्तु वनन कर्मों की स्थिति बनी रहती है। पेटों में ताकत बनी रहती है जिससे रोगी उठ बैठ सकता है। बेचैनी अधिक रहती है।

और चटुपा करवटें बदलता रहता है । कभी २ एंठनके कारण रोगी अँकड़ जाता है, हिचकियाँ भी आने लगती हैं । जब ये लक्षण प्रगट हों तो इनसे २४ घण्टे में रोगी मर जाता है । और जो यह समय निकल आवे तो आराम होने की आशा रहती है ।

(४) दर्जा—इस दर्जे में वमन कम हो जाती है, शरीर में गर्मी आ जाती है । मुख लाल हो जाता है, स्वास तथा रक्त प्रसव नियमानुसार होने लगता है । धीरे-धीरे हो जाता है । पेशाब आने लगता है । कुछ काला रंग का दुर्गन्धित दस्त भी होता है । इस दर्जे में ये शुभ लक्षण माने जाते हैं । परन्तु कभी यह दशा थोड़ी देर के ही लिए होती है । क्योंकि उपर्युक्त लक्षणों के पश्चात् दिनाग तथा फेफड़े में खून का जमाव आरम्भ होता है । मूत्र का अंश रुधिर में मिल जाने से शिर पीड़ा, औरान, बेहोशी, एंठन, और झुर्राटे से स्वांस आदि उत्पन्न होकर रोगी “युरेमिया” होकर मर जाता है । इस दर्जे में किसी २ रोगी को ज्वर होता है जो बहुत दिनों में आराम होता है । स्त्रियों में तीसरे दर्जे में गर्भाशय से रुधिर निकलता है । चौड़े दिनों की गर्भवतियों का गर्भ गिर जाता है । पूरे दिनों के गर्भ का बालक गर्भ ही में मर जाता है । पसीना अधिक आने से रोगी भी मर जाती है ।

संयुक्त रोग और फल—

सरल ।

(क) ज्वर होना- जो कई प्रकार का होता और जल्दी आराम हो जाता है ।

(ख) आमाशय में भूतन होने के कारण वमन का अधिक होना ।

४६० छूतवाले रोग और उन से बचने का उपाय ।

(ग) श्विचकी, तथा ठकारो की अधिकता, और भूख न लगना ।

(घ) नींद का न आना ।

कठिन संयोग—

(क) गुर्दे में प्रारम्भिक सूजन होना ।

(ख) अंतर्द्वियों में सूजन होना ।

(ग) दस्त और शरोह पैदा होना ।

(घ) फेफड़े या लसकी क्रिस्ती में सूजन का होना ।

चौथे दर्जे में जब ज्वर होता है तो जिल्दी रोग जैसे पित्ती उछलना, दाढ़ होना, कठ और शूक की गिलटियों का सूजना, आंखों को स्याही में घाव होना या सह जाना मुँह में छाले पड़ जाना, शरीर में जगह २ फोड़े फुंसी का निकलना या घाव हो जाना, निर्वलता अधिक दिन तक ठहरना, आदि पाए जाते हैं ।

निदान—साधारण दस्तों तथा सखिया के खाने से जो दस्त हों उनमें और हैजे में यों पहिचान करें कि साधारण दस्तों में इतनी जल्दी और ऐसे अचानक लक्षण नहीं होते जैसे कि हैजे में देखे जाते हैं । सखिया में पहिले घमन पीछे दस्त रुचिरमिश्रित होता है और कठ में तगी जान पड़ती है । इसके विरुद्ध हैजे में पहिले दस्त पीछे घमन तथा कठ में तगी नहीं होती और न गला भिचता है । अम्याम्य दस्तों के रोगों में हैजे की भाँति मुख्य निम्न नहीं पाए जाते ।

परिणाम—धुरा है, इस बवा की तेजी एकमी नहीं होती । किसी बवा में सेकड़े पीछे ८० और किसी में २०

रोगी अच्छे होते हैं । आरम्भ में अधिक तथा अंत में कम मृत्यु होती है । घुहरे, मिर्यल, मैले, बदपरहेज, शराब पीने वाले, या वे जो घुरी जगहों में रहते या शुर्दे के रोगी हैं, इनमें अशुभ परिणाम देखा गया है । चीचे दर्ज में अशुभ परिणाम का अधिक भय रहता है । हाँ जब सूत्रादि रिसने लगते हैं तो भय दूर हो जाता है ।

रोग से बचने का उपाय—जब यह बवा की भाति कैले तो जहाज, रेल तथा मुसाफिरी के लिए “क्वारन्टाइन ला” जारी करें । लोगों को साफ तथा प्रसन्न रखें । बहुत से आदमी कहा बकट्टे हों वहाँ न जाय । किसी बदकोठरी में बहुत आदमियों के साथ न बैठें । घर के हाँदे पमादे तथा पाखाने आदि खूब साफ रखें । सड़े फल तथा भठली आदि का सेवन न करें, शराब न पीएं । पानी बीटा कर ठहा करके पीयें । उपवास, तथा कुपय्य से बचें । तेल जुझाव न लें । शरीर खूब शुद्ध रखें । सर्स स्थान को छोड़ कर अलग रहें जहा हिला फैला हो । बहा के फूए आदि का पानी तथा बाजार की मिठाई पूही आदि न पीयें खावें । रोगी से अलग रहें । रोगी के मल सूत्र तथा घमन आदि को, फाँडील लोशन, कार्बोलिक लोशन, सेग्रेगलस पौडर, होरा इह या सलफेट आफ लिंक, या होराइह आफ लाइन, वलोरल एलम, आदि में मिलाकर बस्ती से दूर ले जाकर गाहें किन्तु ध्यान रहे कि बास पास कुमा या तालाब आदि न हो । नित्य प्रातः काल एक मात्रा डाइस्प्ट सलफूरिक एसिड १० वा १५ बूँद लेमोनेड के साथ पीयें इससे हेजे का विष नहीं व्यापता । हेजे के दिनों में अजीर्णता वा ओर

४६२ छूनवाले रोग और उनसे बचने का उपाय ।

किसी कारण से यदि दस्त होने लगें तो तुरत किसी योग्य वैद्य या हाब्टर को बुला कर चिकित्सा करें क्योंकि आरम्भ में चिकित्सा से बड़ा लाभ होता है ।

चिकित्सा—इस रोग में प्रथम ही चिकित्सा से अधिक लाभ होता है । इसके लिए कैम्फर Camphor—काफूर बड़ी लाभदायक दवा है । सौ में एक रोगी इससे उस समय निश्चय बच सकते हैं जब यह पहिले दर्जे की में दी जाय । दूसरे दर्जे में भी इससे कम लाभ नहीं होता । इसके देने से तीसरा दर्जा आने की नहीं पाता । यदि देव योग से आती गया हो तो दूर हो जाता है ।

दस्तों के रोकने की चिन्ता न करें क्योंकि दस्त रुकने से विष शरीर में ही रह जाता है । दस्तों को होने दें यदि समय देखें तो देही का तेल एक दो तोले और पिछा दें, जिससे हिजे का विष निकल जाये । यह सुसखा पहिले दर्जे में अधिक लाभदायक है । दूसरे दर्जे में भी इससे अच्छा लाभ पहुँच सकता है ।

हाइस्यूट मलफ्यूरिक एनिड	२० ग्रू द
टिकजर कार्बोमस कम्पौण्ड	२० ग्रू द
स्लिपरिट एनोमिया एरोमेटिक	२० ग्रू द
॥ क्लोरिफार्म	२० ग्रू द
कैम्फर साटर	१ औंस

मिला कर ऐसी एक मात्रा प्रत्येक तीन २ घंटे पीछे बराबर पिछाते रहें । आवश्यकता हो तो प्रत्येक घण्टा तथा दस्त के पीछे एक २ मात्रा दें ।

प्यास दूर करने का—बर्फ की रोही मुँह में दें ।

या पुटासीक्लोरास २० ग्रॅम, एक औंस जल, इसी हिस्सा से एक घोल बनायें । इसी में कुछ चर्क भी छोड़ दें और पानी मागते ही इसे पिलायें । दूध पानी मिला कर पिलायें, इससे न केवल प्यास ही बंद होती है किन्तु वमन को भी फायदा होता है । वमन रोकने के लिए आनाशय पर राई का प्लास्टर लगायें ।

दूसरे दर्जे में—किसी योग्य डाक्टर की सम्मति लेकर चिकित्सा करें । यदि यह न हो सकता हो तो कपूर के चर्क को देना न भूलें । यदि यह दवा ठीक २ समय पर दी जायें तो इसमें सन्देह ही नहीं कि तीसरा दर्जा पास न पटकें । बाकी चिकित्सा सब वही करें जो प्रथम दर्जे के लिये बतलाई गई है । अर्थात् प्यास तथा वमन आदि की । पुँठन कैफर नलने ही से दूर हो जाती है । इसे शरीर पर नलना चाहिए । वर्मेनुस कैफर इसमें बड़ा फायदा पहुँचाता है ।

तीसरे दर्जे की चिकित्सा वही झुझिनामी से करें । इस दर्जे में दस्त तो कम होते हैं पर वमन ही अधिक भयावनी होती है । इस दर्जे में मुख्य चिकित्सा ठड़े शरीर को गर्म करना है, इस लिए गर्मी लाने वाली औषधियों को दें ।

इस दर्जे में दवा की मात्रा कम देनी चाहिए किन्तु उसे आचे २ घंटे में दें । शेम्पेन, ब्राडी आदि मदिराएं चर्क मिला कर दें । यह नुसखा इस दर्जे में देना लाभदायक होगा—

एरोमेटिक स्प्रिट आफ एनोमिया	२ ग्राम
सलफ्यूरिक ईथर	२ ग्राम
क्लोरिक ,,	१ ग्राम

बाह्यम गेलीसाईं ग्राही

६ द्राम

पिपरमेंट वाटर

६ औंस

मिश्रा कर इसमें से चार द्राम की मात्रा में घण्टे २ पीने पिलावें । यदि बतनी मात्रा भी न पचे तो और कम करके आधे २ घण्टे में दें । कैम्फर (कपूर) इस दर्जे में भी दे सकते हैं । कभी २ इससे लाभ अवश्य होता है ।

पिछलियो तथा तलुओं में कायकल मलें । इससे पसीना सूखता है और गर्मी कम निकलने पाती है । शरीर को गर्म कपटो से खुब ढांक रखें । अत में क्षीरोफार्म सुधाने से भी बड़ा लाभ होता है ।

एक नई तरकीब यह निकली है कि श्री एसोनिया वाटर Free ammonia water एक पिचकारी द्वारा रक्तमल में पहुँचाना । इससे मैंने स्वयं दो तीन केस, जो मिर्जापुर में दत्त डाक्टर ओमेरा साहेब सिविल सर्जन द्वारा बचे, अच्छे होते देखे हैं ।

चौथे दर्जे में चिकित्सा करनी व्यर्थ है और इससे नुकसान भी पहुँचता है । केवल शीघ्र पाचक पथ्य छोड़ी २ मात्रा में समय पर देते जावें । ज्यों २ आरोग्य होता जावे मात्रा बढ़ाते जावें । पानी जिसना रोगी पी सके पिलावें । यदि ज्वर हो तो सोडावाटर, पखली आदि दें । यदि ज्वर के प्रकोप से चेहरा लाल होते देखें तो राई का प्लास्टर लगावें । सिर पर ठंडा पानी डालें । “हपीका क्युमाना” वा “पे पीटर” खिलावें । दिमाग में खून कम गया हो तो दो एक जोर्क कमपटी पर लगावें, फेफड़े में रुधिर कमता देखें तो

छाती, पीठ तथा पशुलियों पर तारपीन का तेल मल कर सेंक करें; क्लोरेट आफ पुटासियम लाने को दें । प्यास इस दर्ज में भी हो और की न बढ़ होती हो तो सोडावाटर बर्फ आदि दें । पेशाब बढ़ हो तो कमर पर “कपिज्ज” (गिलास-पुरवा) लगावें । या बिलाडोमा, ह्यूप, तथा क्लोरीफार्म लिनीमेन्ट धराधरा २ लेकर लें । या गर्म २ भूसी की पुल-टिस या राई का प्लास्टर कमर पर लगावें । कोई २ गर्म पानी से नहला कर “कुनेन” तथा “टिक्चर स्टील” देना लाभदायक बताते हैं । या सलाई हाल कर मूत्र निकाल दें । रुधिर में नमक का भाग कम हो जाता है, इसलिए पानी के साथ नमक या कार्बोनेट आफ सोडा मिलाकर दें । पथ्य का भी ध्यान रखना चाहिए । ऐसा न हो कि औषधि ही औषधि देते रहें पथ्य बिलकुल न दें । बिना पथ्य के केवल औषधि से काम नहीं चल सकता । अस्तु, दूध, पखली, घोड़ी २ साप्ता में नियमित समय पर दें । और ज्यों २ रोगी को आराम होता जावे पथ्य बढ़ाते जावें । इस रोग का रोगी निर्वनता से न मरे इसका ध्यान रखें । घलकारक औषधि तथा बलकारक पथ्य देते रहें । संयुक्त रोगों की यथोचित चिकित्सा करें । आरोग्य होने पर जल धातु घटलवा दें । स्वास्थ्यरक्ष के नियमों का पालन करते रहें ।

थाइसिस PHTHISIS सिल-झयी ।

इस रोग के नाम का अर्थ ही सय है अर्थात् शरीर का सय हो जाना । किन्तु परीक्षा से जाना गया है कि यह रोग एक विष के, जिसे “स्यूरकिल” कहते हैं, केफड़े में जमने से होता है । केफड़ा इस रोग में ऐसा बिगड़ जाता

४६६ छूतवाले रोग और उनसे बचने का उपाय ।

हे कि फिर नहीं सुधरता । ऊपर, जो इस रोग में होता है जीर्ण होता है । इसको ट्यूबरकुलर या टिसिस Tubercular Phthisis भी कहते हैं ।

ट्यूबरकुल जो फेफड़े में जनता है वह प्रायः फेफड़े की नोक पर जनता है । कभी एक अर्थात् धार्य फेफड़े पर कभी दहिने धार्य दोनो और जन जाता है । वायु की नालियों की दीवारों और वायु की नालियों आदि में भी जन जाता है । इन ट्यूबरकुलों के दबाव पहने से रोग ग्रसित स्थान का पालन अच्छी तरह नहीं होता, इरी टेग्रन की बलह से उसके चारों ओर सूजन हो जाती है । इस कारण वहा की बनावट नर्म होकर गल जाती है और वह खासी द्वारा ट्यूबरकुल सहित वायु की नाली में से होकर बाहर निकलती है । इसी से इस रोगी का कफ सारी और छिछड़ेदार पीप की भांति होता है । रोगी स्थान में गढ़ा पड़ जाता है जिसको वमिका Vomica कहते हैं । जब ऐसे कई एक गढ़े पास २ हो, और कुछ समय में मिल कर एक हो जायें तो एक बड़ा गढ़ा फेफड़े में हो जाता है । ऐसे गढ़े बहुधा फेफड़े के ऊपरी और निचली भागों पर देखे गए हैं जो पीप से भरे तथा अन्यान्य दुर्गन्धित जलो से पूर्ण होते हैं और बलगम के साथ निकलते रहते हैं । थोरे २ फेफड़े की कुल बनावट गल सह कर निकल जाती है । इस रोग का रोगी कुत्तों की नीत सरता है ।

इस रोग के दो बड़े सेद हैं । एक एक्यूट (नवीन) या टिसिस, दूसरा क्रानिक (जीर्ण) लयी रोग । जो लोग फेफड़े की सूजन हो इस रोग की जड़ मानते हैं उनके मत से

“न्यूमोनिक पाइसिस” और “साईब्राइट पाइसिस” ये दो भेद और हैं। कारणों के अनुसार प्लूरेटिक, (जो “भूरा” फेफड़े को अस्तर करने वाली झिल्ली के रोगी होने के कारण हो), “हेमेरेनिक”, (जो खून घूकने के उपरान्त हो) “मेकानीकल” (जो घातु पदार्थों के संयोग से हो) “एल्कोहालिक”, (जो शराब पीने से हो) “सिफिलिटिक”, (जो उपद्रव आदि से होता है) भी कहते हैं।

कारण—मुख्य कारण इस रोग का वैत्रिक होना है। अर्थात् व्रत में किसी को हो वा पहिले हुआ हो तो यह रोग उसी व्रत में दूसरे को हो जाता है। अगवानी ही में यह प्राय होता है। स्त्रियों को प्राय कम होता है। कोमल स्वभाव वा फट माला वाले को या उनको जो अधिक बैठे रहते हैं, शराब अधिक पीते हैं, मैथुन अधिक करते हैं, जिनको अजीर्णता घेरे रहती है, घी दूध आदि जिन्हें स्वप्नवत् हैं, दिन रात जो पढ़ते ही रहते हैं वा जिनकी बुद्धि में कुछ बिगाड़ है, शोक, चिन्ता आदि जिनके पीछे पड़े रहते हैं, जिन्हें यहुनूच, खसरा, कूकर खासी, क्रूप, काला घ छाल उधर होने के उपरान्त इसकी अगवानी करनी पड़ती है, जो स्त्रियों बहुत दिन तक अपने बालको को दूध पिलाती हैं ऐसे समय में उनके पालन पर ध्यान नहीं दिया जाता, जिनके खून या पानी, पीप, वा अन्य रिसाव रिसते २ एक साध अव हो जायें, जिन्हें स्वारूप्यरक्षण की कुछ भी परवाह नहीं होती, जो जेल, अमायालय, वा किसी बंद घर में रहते हैं वा किसी विपैले कारखाने में काम करते हैं, जो शीत, तथा तराई के रहने वाले हैं,

४६८ छूत वाले रोग और उनसे बचने का उपाय ।

घार २ लिन्हें केफड़े का रोग सताता हो, जो बीमार पशुओं का दूध मांस खाते हों, उन्हें यह रोग हो जाता है ।

मुख्य कारण जो इसका जाता गया है वह यह है कि बलगम, (कफ) जो रोगी शूकता है, उसमें एक प्रकार का कीड़ा होता है । यह कीड़ा वायु द्वारा वा खाने पीने की चीजों द्वारा यदि केफड़े में पहुँच जाय तो यह रोग होता है । इससे सिद्ध हुआ कि क्षयी के रोगी का बलगम (कफ) छूतदार है । यदि असावधानी से वह सूख कर हवा में मिले और वह हवा मनुष्य सूँचे वा उसके केफड़े में वह स्वाँस द्वारा प्रवेश करे तो यह रोग हो जाता है । माता यदि रोगिन है तो दूध द्वारा और पिता रोगी है तो वीर्य द्वारा यह रोग बच्चे में पहुँच सकता है । इसके अतिरिक्त रोगी के हाथ से पान आदि खाने वा बलगम का छींटा जिसमें पड़ा हो ऐसा दूध वा पानी आदि पीने से इस रोग का विष केफड़े में पहुँच कर यह रोग हो जाता है । माटे मनुष्यों की अपेक्षा छम्बे, काले की अपेक्षा गोरे मनुष्य प्रायः इसमें ग्रसित होते हैं । निमके हाथों पैरों की उगलियाँ छम्बी, नाखून मोथड़े तथा चौड़े, शरीर दुर्बल, हों उनका अधिक ग्रसित होते देखा गया है ।

एक्यूट आइसिस ACUTE PHTHISIS नवीन क्षयी

इसको एक्यूट गैलोपिंग कंजक्शन (कंजम्प्शन) भी कहते हैं । यह एक कठिन संचातक रोग है । इससे रोगी बहुत शीघ्र मरघाम पहुँच जाता है परन्तु कुशल इतना ही है कि जीर्ण की अपेक्षा यह कम होता है ।

लक्षण—किसी २ को आरम्भ में केफड़े से मुख द्वारा रक्त निकलता है । ज्वर जाड़े से आता है । सांस बढ़ जाती है । खासी उठने लगती है । कब कि केफड़े के रोग के पीछे उत्पन्न हो तो हेक्टिक फीवर होने लगता है । छाती में दर्द, स्वांस में कष्ट होता है, खासी बहुत उठती है । कफ भी अधिक निकलता है, कफ का रंग लोहे में मोर्चे के समान होता है, शरीर गल, पुनः कर रुक हो जाता है । रात को पसीना आकर ज्वर शांत होता है । पसीने के आने से रोगी सुस्त हो जाता है । किसी २ को दस्त लग जाते हैं ।

परिणाम—बहुत दुरा है । यदि केफड़े के रोगों के फल से उत्पन्न हुआ हो तो कभी आराम हो जाता है या जीर्णायी में पड़ जाता है ।

चिकित्सा—शक्ति बनाए रखना, निर्वलता घटने न देना ही इसकी प्रधान चिकित्सा है । क्योंकि इस रोग से मुक्त होते प्रायः कम देखे गये हैं । खांसी, ज्वर, पीड़ा, आदि की उपोचित चिकित्सा करें । किसी २ के मत से ब्रांडी लाभदायक है । रोगी को गर्म कपड़ा पहिना कर साफ हवादार कमरे में रखें । दूध, शीरमा, सेना, आदि हल्की पचने वाली पियें । छाती पर राई आदि का प्लास्टर लगावें । खचने का सपाय आगे लिखेंगे ।

क्रानिक थाइसिस CHRONIC PHTHISIS जीर्ण क्षयी ।

यही प्रायः होती है । कभी तो आरम्भ ही से और कभी मदीन के उपरान्त इसमें जीर्ण लक्षण उदय होते हैं ।

लक्षण—यह भी अचानक खून गूँथने के उपरान्त आरम्भ होता है । पीरे २ खांसी, ज्वर, अत्यधिक थक, बदनपी

आदि प्रगट होते हैं। छाती में पीड़ा जो हड्डियों के पास से कर्षों तक फैलती है और किसी २ में पीठ और पसलियों में पहुँचती है। यदि फेफड़े की प्रतिक्रिया, जिसको सूरा कहते हैं, रोग प्रसृत हो तो दर्द बहुत तेज होता है। हृदय घटका है। स्वासा तेज होती है, सोते जागते खाँसी उठती है, कभी भोजन के पीछे बमन हो जाती है। यदि पथ्य कानल भी रोगी हो तो घाल भारी होता है। कफ आदि में लघावदार, कड़ा, पीछे लसदार, गढ़ा पहने पर सैल गढ़ा और गोला चक्का सा निकलता है जिसको "न्यूलेटिड स्प्यूटा" कहते हैं। यह पानी में डालने से डूब जाता है और सूक्ष्म दर्शक यन्त्र द्वारा देखने से उसमें फेफड़े की बनावट और एक प्रकार के कोड़े जिन्हें "वैसिलार्ड" *Vacelli* कहते हैं पाये जाते हैं।

यदि फेफड़े का कोड़ा हवा की नालियों में फूट पड़े तो कफ के स्थान में पीप मुह से निकलती है। किसी २ को आदि में किसी २ को अन्त में और किसी २ को आदि मध्य और अन्त में मुह से खून निकलता है—यह खून किसी २ में कम और किसी २ में अधिक निकलता है। ऐसा दशा में सृत्यु सिरहाने लड़ी रहती है। यह दशा सैकड़े में ५० रोगियों में देखी जाती है। जीर्णज्वर आदि में तो कम किन्तु ज्यों २ रोग बढ़ता है यह भी बढ़ता जाता है। दोपहर के उपरान्त भोजन के पश्चात् ज्वर बढ़ता है, शारीरिक गर्मी १०४-१०५ दर्ज की हो जाती है। सुबह १००-१०१-वा १०२ तक घनी रहती है। जिसकी गर्मी अधिक हो उसकी ही जल्दी हानि होने की सम्भावना की जाती है। नाड़ी आदि में शीघ्र, कड़ी, और अन्त में दबने वाली गर्मी, मूल

सी शीघ्र २ चलती है । मोलन के पश्चात् दोपहर से ऊपर बढ़ता है, आधी रात के समय ठंडा पसीना, जो नाभे और छाती पर होता है, आकर ऊपर उतर जाता है । किसी २ को आधे ऊपरी पक्ष में बसना पसीना आता है कि बिछीना भींग जाता है । रोगी सुस्त हो जाता है । इस पसीने को "कालीक्रेटिव स्वीटिंग" कहते हैं । इन दशाओं से रोगी दिन २ दुर्बल होता जाता है । चर्बी, पट्टे, नस, सभी गुल कर डीले पड़ जाते हैं, चेहरा पीका हो जाता है, किन्तु प्रकाश ज्यो का त्यों रहता है । मरते २ भी चेहरे से यह बात नहीं पाई जाती कि यह रोगी है । जीर्ण ऊपर में इपेली और पैर के तलुओं में जलन होती है । जो गोरे रोगी हैं उन के गालों पर एक दाग जिसे "इरिडिक् पलश" कहते हैं ऊपर की दशा में हो जाता है । कुपथ्य की ओर रोगी का चित्त झुकता है । दस्त आने लगते हैं जिसे ओर भी निर्बलता बढ़ जाती है । ऐसे समय के दस्तों को "कालीक्रेटिव डाइरिया" कहते हैं । भूख कम हो जाती है नींद नहीं आती । रोगी चिड़चिड़ा हो जाता है । निर्बलता के कारण वह बिस्तर से उठ नहीं सकता । पड़े रहने के कारण घुतह वा पीठ में घाव, जिसे "बेड सोर" कहते हैं, हो जाता है । सिर के बाल झड़ जाते हैं । किसी २ को भगन्दर (किरबूला एनाइमो) हो जाता है । गर्भवतियों में गर्भकाल में तो कम किन्तु प्रसव के पीछे यह तेजी पकड़ता है । किसी २ में प्रत्यक्ष कोई लक्षण नहीं ज्ञात होते पर जब छाती की परीक्षा की जावे तब भीद सुलता है । इसे "लेटेन्ट थाइसिस" अर्थात् गुप्त क्षयी कहते हैं । इस में रोगी अकारण ही दिन २

क्षीण होता जाता है ।

छाती की परीक्षा—तीन दर्जा में बाँट कर लियेंगे ।

१ दर्जा—हीपाजीशन स्टेज—इसमें फेफड़े की निचली भोक पर ट्यूबरकिल (विप) जमता है । अस्तु छाती का ऊपरी भाग चपटा और छोटा पड़ जाता है । और आधा व्यास अगले और पिछले व्यास की अपेक्षा ड़्पौड़ा होता जाता है । जितने ही “ट्यूबरकिल” अधिक जमते हैं, उत नाही छाती सास लेने में कम फूलती है । ठोकने से रोगित स्थान पर ठस आवाज आती है । हथेली, छाती पर कैला कर रोगी को एक, दो, तीन खुलवाने से शब्द की तेजी कभी कम और कभी सुनाई नहीं पड़ती । फेफड़ा नीचे झुक जाता है । दिल की उछाल दूर से दिखाई देती है ।

२ दर्जा—साफनिग स्टेज—इस में ट्यूबरकिल मुलायम होने लगते हैं, और फेफड़े में गढ़ा पड़ने लगता है । छाती छोटी और चपटी हथेली के ऊपरी और नीचे के हिस्से बंधे होते हैं । छाती का कुलाघ सास लेने में कम, रोगी सामने को झुका जान पड़ता है । हथेली छाती पर रख कर खुलवाने से शब्द हथेली में तेज जान पड़ता है । कान लगा कर लकड़ी (स्टेथिस्कोप) द्वारा सुनें तो छोटे १ या बड़े २ बुलबुले फूटने का शब्द रोगित स्थान पर सुनाई पड़ेगा । हृदय ऊपर को हट जाता है और उस का शब्द तेज सुनाई देता है ।

३ दर्जा—एक्सकेवेशन स्टेज—इस में ट्यूबरकिल मय फेफड़े की यमाघट के गल कर निकल जाते हैं ।

केफड़े में केवल गड़े रह जाते हैं । छाती दब जाती है । पसलियां समर जाती हैं या दब जाती हैं । हृदय का धक्का रोगिल रूपान से कुछ सचाई पर मालूम होता है । ठोकने से बहुत ठस आयाज़ सुनाई पड़ती है । कान लगा कर सुनने से छाया फूटने की भांति शठक्, जब केफड़े के गड़े में पीप मरी हो तो, सुना जाता है, और जब गड़े खाली हो तो खाली घड़े में फूंकने से जैसी आवाज़ आती है वैसी ही सुनाई देगी । दिल दूसरे दर्जे के अनुसार ही इस दर्जे में रहता है ।

सूचना—प्रगट हो कि यह परीक्षा बहुत कठिन और अम्यास की है । इसे अच्छा अम्यासी डाक्टर ही कर सकता है । इस में अम्यास और शारीरिक विद्या (प्रनादनी) की बड़ी आवश्यकता है । अस्तु, सर्वसाधारण के निदानार्थ कुछ सक्षेप से ही लिखा गया है । आस्कल टेशन (कान लगाकर सुनने को कहते हैं) वह इस में अच्छी तरह नहीं लिखा है, इस लिए कि यह बड़े अम्यासी वैद्य का कार्य है । जब इस रोग का कुछ संदेह हो तो किसी अम्यासी और पुराने वैद्य से इस की परीक्षा करावें । जिस से कि पूर्ण विश्वास सपा रोग का निदान हो ।

संयुक्त रोग—छेरिस् और ट्रैकिया में घाव, लासी, केफड़े में सूजन, केफड़े की फ़िझी में सूजन, केफड़े में वायु, यकृत का चर्बी में परिवर्तन, भगदर-गुर्दे के रोग जिन्हें ब्राइट साइड ने खोज निकाला है, आंति में घाव, जलधर (जलोदर), सम्माद, पेट के अस्तर बनने वाली फ़िझी में सूजन, दस्त (अतिसार), पेचिश (मरोह), आदि रोग इस

। मिठा कर इसमें से दो ड्राम की मात्रा लेकर दूध के साथ भोजन के पीछे पिलावें । "कार्बोनेट आफ गोपकोल" खिलावें । रात को नींद लाने के लिए "डोवर्स पीवर" १० ग्रेन फेंकावें । खाने को दूध, शोरबा, यखनी, सागूदाना और आरारूट, आदि दें । गदही का दूध इनमें बड़ा फायदा करता है । गदही तीन चार मास की बियाहें हो तो उसका दूध साजा दूह कर पीवें । दूध का परिमाण प्रति दिन बढ़ाते जावें । कोई कोई केकड़ा खिलाते हैं । जब कफ बहुत और दुर्गन्धित निकले तो "क्रियालूट" १ वा २ बूंद अथवा कार्बो-लिक एसिड एक वा दो बूंद खीले हुये जल में छाल कर मुँह में भाफ प्रसूचावें । इन्होंने औषधियों की गोली बनाकर खिलावें । दस्त लग गये हों तो "बिसमथ" और "डोवर्स पीवर" मिठा कर दें । वा चाक निकश्चर एक औंस में १० बूंद टिक्चर ओपियम मिला कर, वा अन्य दस्त बंद करने वाली औषधि, दें । "टिक्चर ब्राइओनिया" भी देते हैं । तीतर बटेर, सुरगाही, लधा, चिह्ना, और चूना मुर्ग आदि का मांस खिलावें । सेल की चीज न दें । मछली भूँज कर खिलावें । खर के समय पीवर निकश्चर दें । पीने को बरसाती पानी दें वा औटा कर जल दें । कमजोरों में स्टैम्यूलेंट औषधि दें । पसीना रोकने को अकसाइड आफ लिम २ ग्रेन से ५ ग्रेन तक एकसट्रेक्ट खेलासोना १५ ग्रेन के साथ गोली बना कर खिलावें । गैलिक एसिड और कुइनाइन मिला कर दें । रोगी को जिस प्रकार का कष्ट हो उसी के अनुसार औषधि आदि दें । "आइल आफ यूकेलेप्टस" खीलते पानी में

हाल कर मुख में नाक लेने से खांसी और दुर्गंधि को बड़ा लाभ होता है ।

स्थानिक चिकित्सा—छाती में दर्द हो तो सारपीन ओपियम लिनीमेंट के साथ या कैस्पर लिनीमेंट आदि मर्से । राई का प्लास्टर लगावें । क्रियाजूट, कार्बोलिक एसिड, यूकेलेप्टस आइल, आइडिन, क्लोराइन, आदि को खींचते जल में हाल कर “स्ने” के द्वारा नाक वा मुख में नाक पहुँचावें ।

लेप्रसी LEPROSY कुष्ठ = जुजाम = कोढ़

यह दो प्रकार का रोग है (१) स्यूथरक्यूकर लेप्रसी, (२) एनिस्येथिक लेप्रसी । पहिले में छाल २ घठये त्वचा पर निकलते हैं जिन को छूने या छूँ आदि गहाने से रोगी को कुछ भी क्षेय नहीं जान होता अर्थात् ये स्थान सुन पह जाते हैं । दूसरे में हाथ पैरों की उँगलिया गल कर ऊँट जाती हैं ।

कारण—यह रोग बैक्टीरिज है । यदि दूध पिछाने वाली माता वा दाई को यह रोग हो तो, बच्चे को जो दूध पीता है दूध द्वारा इस रोग का अंतर हो जाता है । सिवाय इस के और कोई कारण इस के उद्भव होने का नहीं है । हर अवस्था में यह हर एक को हो सकता है ।

लक्षण—(१) स्यूथरकिल लेप्रसी (सुन कुष्ठ) इस में त्वर हो कर छाल घठये शरीर पर निकलते हैं । कभी २ सारे शरीर पर बहुत से घठये और कभी पहिले एक ही दो घठये निकलते हैं । माथ प्रथम मुख, नाक, और कान के पास घठया प्रगट होता है । कान, नाक और ओठ की लो मुग जाती है । मुँह विगड जाता है । मूरत बदल जाती

४७६ छूतवाले रोग और उनसे बचने का सपाय ।

। मिला कर हममें से दो ग्राम की मात्रा लेकर दूध के साथ भोजन के पीछे पिलावें । “कार्बोनेट आफ गोपकेट” खिलावें । रात को नींद खाने के लिए “होवर्स पीडर” १० ग्रेन फैकावें । खाने को दूध, शोरबा, यखनी, सागूदाना और आरारूट, आदि दें । गदही का दूध हममें बड़ा फायदा करता है । गदही तीन चार मास की बियाहें हो तो उसका दूध ताजा दूह कर पीवें । दूध का परिमाण प्रति दिन बढ़ाते जावें । कोई कोई केकडा^१ खिलाते हैं । जब कफ बहुत और दुर्गन्धित निकले तो “क्रियालूट” १ वा २ बूंद अथवा कार्बो लिंक एसिड एक वा दो बूंद खीले कुये जल में हाल कर मुँह में भाफ पहुँचावें । इन्हीं औषधियों की गोली बनाकर खिलावें । दस्त लग गये हों तो “बिसमय” और “होवर्स पीडर” मिला कर दें । वा चाक निकश्चर एक औंस में १० बूंद टिक्चर ओपियम मिला कर, वा अन्य दस्त बंद करने वाली औषधि, दें । “टिक्चर ब्राइओनिया” भी देते हैं । तीतर घटेर, मुरगासी, लवा, चिहा, और खूना मुर्ग आदि का मांस खिलावें । तेल की चीज न दें । मछली भुंज कर खिलावें । सहर के समय कीबर निकश्चर दें । पीने को बरसाती पानी दें^२ वा औंटा कर जल दें । कमसोरों में स्टीम्प्लेंट औषधि दें । पसीना रोकने को अकसाइड आफ जिंक २ ग्रेन से ५ ग्रेन तक एकसद्वेकट खिलाहोना ३ ग्रेन के साथ गोली बना कर खिलावें । गैलिक एसिड और कुइनाइन मिला कर दें । रोगी को जिस प्रकार का जल हो उसी के अनुसार औषधि आदि दें । “आइल आफ यूकेलेप्टस” खींचते पानी में

^१ १ केकडा मादा हो ।

हाल कर मुख में भाफ लेने से खासी और दुर्गंधि को बहा प्राप्त होता है ।

स्थानिक चिकित्सा—कासी में दर्द हो तो तारपीन ओपियम लिनीमेंट के साथ या कैस्फर लिनीमेंट आदि मर्से । राई का -प्लास्टर लगावे । क्रियाजूट, कार्बोसिक एनिड, यूफेलेप्टस आइल, आइडिन, क्लोराइन, आदि को खोलते जल में हाल कर “स्त्रे” के द्वारा नाक वा मुख में भाफ पहुँचावे ।

लैप्रसी LEPROSY कुष्ठ = जुआम = कोढ़

यह दो प्रकार का रोग है (१) ट्यूबरकुलर लैप्रसी, (२) एनस्थेटिक लैप्रसी । पहिले में छाल २ चढ्ये त्वचा पर निकलते हैं जिन को छूने या सुई आदि गहाने से रोगी को कुछ भी क्लेश नहीं घान होता अर्थात् ये स्थान घुन पड़ जाते हैं । दुसरे में हाथ पैरों की संगठिया गल कर फूट जाती हैं ।

कारण—यह रोग पैत्रिक है । यदि दूध पिलाने वाली माता वा दाई को यह रोग हो तो, बच्चे को जो दूध पीता है दूध द्वारा इस रोग का असर हो जाता है । सिवाय इस के और कोई कारण इस के छूतदार होने का नहीं है । हर अवस्था में यह हर एक को हो सकता है ।

लक्षण—(१) ट्यूबरकुलर लैप्रसी (घुन कुष्ठ) इस में ज्वर हो कर छाल चढ्ये शरीर पर निकलते हैं । कभी २ सारे शरीर पर बहुत से चढ्ये और कभी पहिले एक ही दो चढ्ये निकलते हैं । प्रायः प्रथम मुख, नाक, और कान के पास चढ्ये प्रगट होता है । कान, नाक और ओठ की लीं मूत्र जाती है । मुख घिगड़ जाता है । मूरत बदल जाती

है । सिर और भौं आदि के बाल गिर जाते हैं । रोगी का चेहरा सड़ा हो जाता है । पीछे घठ्ठे सब शरीर पर निकलते हैं । घठ्ठों की तबचा सुन पड़ जाती है । उस में हुर्र आदि गहाने से रोगी को कुछ नहीं जान पड़ता ।

(२) “एनिसथेटिक”—गलित कुष्ठ—यह रूज की नालियों पर आरम्भ होता है । चेहरा, छाती या पैरों पर दुमकनी से लेकर रुपये तक के बराबर घठ्ठे, कुछ ठाठ भूरे रंग के, चमकदार झुर्रीदार कुछ समझे और खरदरे दिखाई देते हैं । घठ्ठों में सुन विद्यमान होती है । पीछे इन घठ्ठों पर बड़े २ फफोले पड़ जाते हैं जो फूट कर खुरद (दिल्ली) बंध जाते हैं । शारीरिक लक्षण भी चीरे २ बढ़ने लगते हैं । बुद्धि मोटी हो जाती है । शरीर ठंडा हो जाता है । नाड़ी धीमी चलती है । भूख बहुत लगती है । हाथ पैरों की उंगलियों के पोरुवे लाल, चमकदार, और सूजे हुए होते हैं । कुछ दिन पीछे उंगलियां गलने लगती हैं । पोरुवों के जोड़ खुल जाते हैं । शरीर पर जगह २ पाव जिन में दर्द नाम का नहीं होता, पड़ जाते हैं । चीरे २ हाथ, और पैरों की उंगलियां कभी २ पजे तक गल कर गिर पड़ते हैं । नाच और बगलों की गिलटियां सूज जाती हैं । नाक से दुर्गन्धित जल बहता है । रोगी घिनावना हो जाता है ।

निदान—घठ्ठों में हिच न होना इस रोग का पूर्ण निदान है । यह बात और २ चर्म रोगों में (सारा-बसिस और एयुकोडर्मा आदि में) न पाई जावेगी । गलित कुष्ठ सब जानते हैं । इस के समान दूसरा रोग है ही नहीं ।

परिणाम— बहुत घुरा है ।

रोग से बचने का उपाय । ऐसी रोगिणी स्त्री का जिसे कि यह रोग हो बच्चे को दूध न पिलायें । रोगी के शरीर वा उसके स्पर्श किए सामान और अन्य छाद्य पदार्थों से परहेज रखें ।

चिकित्सा । सुंखिया वा सुंखिया मिठी औषधियों का सेवन कराना अच्छा है । नीम के पत्तों का खिलाना और नीम का मद मलना भी अच्छा है । चावल मोगरा का तेल लगाना भी कोई २ लाभदायक बताते हैं । गर्जन भाइल^१ एक हिस्सा, बूने का पानी दो हिस्सा मिठा कर लें । सिंह, हेंदुआ, और रीठ की चूर्णों भी लाभदायक हैं । गवे का मूत्र, और मगर का मूत्र कोई २ लाभदायक बताते हैं । जहाँ दर्द हो वहाँ

सोप लिनीमेन्ट १ हिस्सा

कैजोपुट भाइल १ हिस्सा

क्रोरोकार्म १ हिस्सा

मिलाकर दर्द के स्थान में लें । खाने को—

सुंखिया १ हिस्सा

मदार की लड़ की छाल का चूर्ण १ घेन

कालीमिर्च का चूर्ण १ घेन

एक्मट्रेक्ट जिनशियन १ घेन

मिलाकर गोली बनायें । ऐसी एक गोली एक तरुण रोगी को दिन में दो बार (सुबह शाम) खिलायें । या

रेसारसिन १ घेन

एकयाल १ घेन

मिलाकर दूँ । और लगाने को वैसलीन, या लेनोलीन

लगावे । इस रोग से देखात् किसी का गला छूटता है, क्योंकि कोई जीपचि काम नहीं देती । उपर्युक्त जीपचियां केवल बंध बढ़ाने और रक्त शुद्ध करने को दी गई हैं सही, किन्तु पूर्ण आरोग्य होना कठिन है । मैंने तो भारम्भ में त्वधरव्यूलर प्रकार को आराम होते देखा है, किन्तु रोग पूर्ण होने पर वा गलित कुष्ठ होने पर कोई रोगी मुक्त होते नहीं देखा ।

स्केबीज SCABIES or ITCH इच = खान = खुजली यह एक छूतदार रोग है । इसमें "अकेरस स्केबियाई" नामो एक प्रकार का कीड़ा पाया जाता है । इसी कीड़े के त्वचा में प्रवेश करते ही वहां छोटे २ दाने सरसो के समान निकल आते हैं । उस स्थान पर ऐसी खुजली होती है कि रोगी खेचत हो आता है । खुजलाने से घाव पड़ जाते या दरारें पड़ जाती हैं और पीप निकल कर उस स्थान पर दिखती बच जाती है । बच्चे में चूतड़, पांव और हाथ की हथेली पर और जवानों में अँगुलियों की गाँठियाँ, पंखुचे के सामने पेट और अघाघ्रा पर देखा जाता है । प्रायः पुरुषों के शिङ्ग और स्त्रियों के काख और छाती के नीचे होता है ।

कीड़े का वर्णन । यदि अकेरस स्केबियाई (खुजली को कीड़ा) को किसी निरोगी त्वचा (चमड़े) पर रख दें तो १० से १५ मिनिट के भीतर चमड़े में तिरछा छेद करके $\frac{1}{8}$ से $\frac{1}{4}$ सत लम्बी नाली बनाकर वह चमड़े के भीतर घुस जावेगा और एक घर, जो सरसो के समान होता है, बना कर बैठ जावेगा । तारीफ यह है कि यह रास्ते में झड़ा घरेते हुए भीतर पहुँचता है । यदि उसके घर को सुई से खुरचें तो सुई की

मोक में उक्त कीड़ा लग कर निकल जाता है जो सूक्ष्मदर्शक यन्त्र द्वारा भली भाँति दिखाई देता है । एक कीड़ा तीन चार मास तक जीवित रहता है । इसके पीछे मर जाता है । पुन दूसरे मास कीड़े बाहर निकल कर मर से, जो दिखली, आदि में छिपा होता है, गर्भित हो फिर भीतर पहुँच कर रोग को मया कर देते हैं । कीड़े की सूरत कछुवे के समान होती है किन्तु इसके चपड़े की भाँति लम्बे र बाँल और चार पाँच पैर होते हैं ।

कषार-मैले, दूध मनुष्यों (घरों और लवाने) की यह अधिक होता है । फुंसियों की पीप यदि निरोगी शरीर पर लग आवे तो यह रोग हो जाता है ।

निदान-इस के समान अन्यथा चर्म रोग (छाजन और नात्रकहू=मोरार्दंगो आदि) न तो छूतदार हैं और न ऐसा कीड़ा किसी दूसरे में पाया जाता है ।

चिकित्सा-(१) कीड़ों को नारना । इस काम के लिये गंधक यड़ी उत्तम और लाभदायक औषधि है । इस के लगाने से कीड़े मर जाते और उनके भयंकर बरबाद हो जाते हैं । जैसे—

गंधक (सलफर)

१ हिस्सा

मक्खन

४ हिस्सा

मिलाकर रोगिल स्थान को कार्बोलिक साधुन से धोकर लगावें । या—

सलफर (गंधक)

३ ग्राम

ह्वाइट परसीपिटेट

४ ग्राम

क्रियाकूट

४ ग्राम

४८२ छूतवाले रोग और उनसे बचने का उपाय ।

गुलयाबूना का तेल (कैनीमाइल आइल) ४ बूँद
बर्बो या गन्धक १ औंस

मिलाकर रोगी स्थान को खुब कार्बोलिक या "सलफर"
सोप (साबुन) से धोकर दिन में दो बार लगावें । या—

सलफर (गन्धक) आधा ड्राइ
विनजोएटेड लाई १ औंस

मिलाकर बच्चे की खुजली पर लगावें । लगाने के उप-
रान्त अपना हाथ कार्बोलिक सोप से धो डालें । स्थान रहे
कि रोगिल स्थान जितना साफ रहेगा उतना ही औषधि
का असर होकर शीघ्र आरोग्य होगा । विरुद्ध इसके बड़े
जितना गंदा होगा उतनी ही देर लगेगी । धारों पर ठड़ी
औषधि कपूर आदि लगावें ।

(२) रोग से बचने का उपाय—ऐसे रोगी से बहुत दूर
रहें । यदि घर में एक को यह रोग हो तो उसे दूर रखें ।
उसका कमरा, पलंग, और बिस्तर आदि अपने व्यवहार में
न लावें । यदि औषधि आदि अपने हाथों लगावें तो हाथों
को अच्छी माँति से डालें क्योंकि प्रायः यह रोग ऐसे ही को
अधिक होता है जो ऐसे रोगी को औषधि लगाते वा ऐसे
रोगी का वस्त्र आदि पहिर लेते हैं । घर में एक बेटा होते
ही सब के सब इस रोग में ग्रसित हो जाते हैं ।

रिंगवर्म^१ RINGWORM दाद ।

यह रोग भी छूतदार है । इस में एक प्रकार का कीड़ा
जिसे "ट्राइकोफाइटिन टाय्मुरेंस" कहते हैं पाया जाता है ।

१ "रिंग" के माने कहते के हैं और "वर्म" कहते हैं कीड़े को,
अर्थात् छूतदार कीट वा दाद ।

यह रोग शरीर के विविध भागों पर होता है । अस्तु, स्थानों के अनुसार नाम भी अनेक हैं ।

(१) टिनिया टान्सुरे'स या रिंगवर्म आफ दी स्कैल्प—यह रोग निर्मल तेल तथा दरिद्री बच्चों को और कभी कभी जवानों को एक छिछोरे पर सोने वा रोगी का वस्त्र आदि पहिरने से हो जाता है । प्रायः यह सिर पर होता है । सिर पर प्रथम गोख २ लाल, सूखे, भूसीदार और कुछ सफेद दाने पैदा होते हैं । इन दानों में खुजली अधिक होती है । कीटा के कारण रोग बढ़ता जाता है । सिर के बाल टूट २ कर गिर जाते हैं । घठ्ठे बढ़ने लगते हैं । कभी २ घठ्ठे बहुत और समीप होने के कारण आपस में मिल कर कुछ सिर घेर लेते हैं । यदि घठ्ठों में कोई बाल लगा रह जावे तो वह कड़ा और सूज कर मुड़ा होगा । घठ्ठे विविध प्रकार के देखे जाते हैं । किसी २ के बाल पीप के कारण बिपक कर खुसी से बन जाते हैं । यह रोग लीज है । रोगिल स्थान के बाल गिर कर रोगी को नंगा कर देते हैं ।

(२) टिनिया सरसीनेटा—यह चेहरे, छाती, हाथ और पाव पर निकलता है । इसमें प्रथम गोख २ दाने उठते हैं । दाने सफेद और कुछ बीच में दूधे होते हैं । खुजली अधिक होती है । दाने घठ्ठों के मध्य निकलते और मुरझाते रहते हैं । कभी एक घठ्ठा उठकर हो कर फैलता और बढ़ता जाता है । बच्चों में यह गर्दन, चेहरे, और हाथों में होता है और आप ही आप अच्छा हो जाता है । इसी प्रकार का दाद जवानों के प्रायः कसर और लिंगेन्द्रियों पर होता है । इस में खुजली जलन बहुत होती है । कभी तो घठ्ठे

४८६ छूतवाले रोग और उनसे बचने का उपाय ।

त्वचा पर पड़ जाते हैं । प्रथम छोटी २ गोल कुछ पीछापन लिये फुलियां पोस्ते के दाने के समान या मटर के दाने के समान शरीर के उन स्थानों पर जो दार्ये जायें समान हैं (यथा अगल नाच आदि) निकलती हैं, जो कुछ दिन में आपस में एक दूसरे से मिल कर चेकापदे सुरत की हो जाती हैं । उन के मध्य की त्वचा आरोग्य त्वचा के सदृश होती है । इसी से यह रोग पहिचाना जाता है । इस में न तो जलन पड़ती है, न खुजली । इसी कारण रोगी इस की विशेष परवाह नहीं करता । किसी में कुछ साधारण खुजली जान पड़ती है । जब रोग जीर्ण होता है तो रोगिल त्वचा से सफेद पतली भूसी निकलती है । इस में भी एक प्रकार की काड़े (कीड़ा) साइक्रस पोरन कर कर नाम की पाई जाती है । रोग क्रमशः घट, छाती और पीठ के ऊपरी भागों तक फैल जाता है । यह रोग हाथ और पैरों पर नहीं देखा गया है । नैले और ऊनी कपड़े द्वारा इस की छूत शरीर में लगती है ।

चिकित्सा-

१ टिनिया टान्सुरेंस—शारीरिक चिकित्सा, काँह लिवर आइल या सखिया, सोहा, मिली दवाओं से करें । स्वास्थ्य रक्षण के नियमों पर चलायें । पायक और इसका उपप्य दें ।

स्थानिक चिकित्सा, कीटनाशक औषधियों से करें । यदि रोग आरम्भ हो तो सिर के घाल यदि हो तो काटकर तेज़ "एनीटिग एन्डि" (सिरके का तेजाब) लगायें । या टिक पर आयोडिन लगायें । यदि हो सके तो बिमटी से घाल बहाव

सलफ्यूरस एसिड लगावें या आलीष्ट आफ नरकरी लगावें ।
याकी चिकित्सा टिनिया टासुरेन्स की भांति करें ।

(६) टिनिया यर्सीकोलर की चिकित्सा—एचचा को
कार्बोल्डिक सोव और गर्म जल से धोवें, पीछे खूब रगड़ कर
किसी तौलिये से पोछें । पीछे सलफ्यूरस एसिड और पानी
बराबर लेकर लगावें । या—

सोल्युशन आफ सलफ/इड आफ सोडा	१ ड्राम
रिडसरीन	१ औंस

मिलाकर लगावें । या—

ट्रिक्लर आयोडीन	२ ड्राम
टरपेन्टाइन आइल	३ ड्राम
ट्रि क्लर कैंप्राइडिल	२ ड्राम
रेड आक्साइड आफ नरकरी	२४ ग्रेन
लिनसीड आइल (जलसी का तेल)	२ औंस
लाइन वाटर (चने का पानी)	१२ औंस

मिलाकर लगावें । किन्तु ध्यान रखें कि प्रथम साबुन
और गर्म जल से शरीर (रोगी स्थान) धुबु कर लिया
और पहिरने के कपड़े बदल दिया करें । स्वास्थ्य
रखें ।

मौससकस् कंटेजिओसस ।

पेट, मुँह के चारों ओर इधर उधर, कभी इधेछी
पर, कगनी दाने से छीकर मटर के समान
अधिक दाने निकलते हैं जो कभी
होर जाते रहते हैं । हर एक दाने के
रहता है जिसमें से दूध के सदृश सफेद

४८८ छूतघाले रोग और उनसे बचने का उपाय ।

सकते हैं । बच्चे में कार्बोलिक आइन्टमेंट (१ ड्राम १ औंस वाला) या हलका सिट्रन आइन्टमेंट डायल्यूट करके लगावें । यदि भैंसा दाद (जीर्ण दाद) हो तो निम्न लिखित औषधि लगावें—

क्राइसोफेनिक एसिड

२० ग्रैम

चर्बी या तबकन

१ औंस

मिला कर लगावें । या गचक तारपीन में मिलाकर रुग्ण स्थान पर खूब खुजला कर लें ।

(६) टिनिया साइकोसिस—इस की चिकित्सा (१) टिनिया टांम्बुरेंस के समान करें ।

(४) ओनीको साइकोसिस—नाखून (नख) को चाकू से छील कर तेज सिरके का सेफ़ाब लगावें । और यह नुसखा—

हाइपो-सलफाइड आफ सोडा

२ ड्राम

डिस्टिल्ड वाटर

३ औंस

बना कर इसमें कपड़े का टुकड़ा भिगो कर नख पर बांधें । कोई २ “कास्टिक सोडन” (२० ग्रैम एक औंस वाला) लगाते हैं या आइडिन आइन्टमेंट की मालिश करते हैं ।

(५) टिनिया फेवोसा की चिकित्सा—यदि सिर पर बाल हों और वे खुरद में बिपटे हों तो पहिले आस पास के बालों को, मूढ़ने लायक हों तो मूढ़ कर और काटने लायक हों तो काट कर, गर्म जल और सलफर या कार्बोलिक सायुन द्वारा धोवें । पीछे सिर पर पुलटिस बांधें जिसमें सुती निकल जाये । पश्चात् सेबुरेटेड सोल्यूशन आफ

सलफ्यूरस एसिड लगावें या आलीप्ट आफ मरकरी लगावें ।
घाकी चिकित्सा टिनिया टांझुरेन्स की भांति करें ।

(६) टिनिया वर्सिकोसस की चिकित्सा—त्वचा के
आर्थोडिक चोप और गर्म जल से चोर्वे, पीछे खूब रगड़ कर
किसी तैलिये से पोछें । पीछे सलफ्यूरस एसिड और पानी
बराबर लेकर लगावें । या—

सोल्फ्यूरस आफ सलफाइड आफ सोडा	१ ड्राम
ग्लिसरीन	१ औंस

मिलाकर लगावें । या—

टिकचर आयोडीन	२ ड्राम
टरपनटाइल आइल	६ ड्राम
टि कचर कैंग्राइडिज़	२ ड्राम
रेड आक्साइड आफ मरकरी	२४ ग्रेन
लिनसीड आइल (जलसी का तेल)	२ औंस
लाइन वाटर (चूने का पानी)	१२ औंस

मिलाकर लगावें । किन्तु ध्यान रखें कि प्रथम साबुन
और गर्म जल से शरीर (रोगी स्थान) शुद्ध कर लिया
हो । बिस्तर और पहिरने के कपड़े बदल दिया करें । स्वास्थ्य
और सफाई से रहें ।

मीलसफम् कंटेनिशोसम् ।

चेहरे, पपोटे, मुख के चारों ओर इपर उधर, कभी इधेठी
के पीछे और पपोटे पर, कगमी दाने से लेकर मटर के समान
कभी दो चार कभी अधिक दाने निकलते हैं जो कभी
अच्छे होते निकलते और जाते रहते हैं । हर एक दाने के
केन्द्र पर एक छेद रहता है जिसमें से दूध के सदृश सफेद

४८२ छूतवाले रोग और उनसे बचने का उपाय ।

कभी २ आमाशय तक, पहुँच जाती है । यह रोग छोटे बच्चों को होता है ।

कारण—छूतदार रोग है । छूत लगने के विचार विविध रोगों में, जैसे ज्वरी आदि के अंत में, देखा जाता है । पाचन शक्ति नष्ट होने पर या कोई अन्य रोग के पीछे देखा जाता है ।

लक्षण—मुख में सूजन होती है । राल बहती है । गलकड़े जीभ और गाल के भीतरी भाग पर लाल चमकदार धब्बे निकलते हैं । कभी २ घाव भी देखे जाते हैं । मुख में ज्वाला दर्द और चमक जान पड़ती है । मुख से दुर्गंध आती है । कुछ खाया पीया नहीं जाता । स्वाद बिगड़ जाता है । जब भी यदि दात निकलते हों तो होता है । ऐसी अवस्था में बच्चे को कमजलशन (एक प्रकार की पेंटन) होती है ।

चिकित्सा—क्लोरेट आफ पुटैश लिटार्ज और इसी दवा को लगावें । या ग्लिसरीन ओरिक के लोशन से कुत्ती करावें । इसी को कुरेरी द्वारा मुख में लगावें । जलघी का काप बना कर कुत्ती करावें । काजी के पानी से मुख को धोवें । राल बहुत निकलती हो तो फिटकरी का पूर्ण घब्रों पर छिड़कें । घाव हों तो कार्बिक लोशन (२ ग्रैन या ४ ग्रैन एक औंस वाला) लगावें ^१ । जुबड़ा पिलाने को—

पुटैशी क्लोरास

५ ग्रैन

डिक्केशन सिनकोना

४ ग्राम

१ दातों के निकलने के कारण दस्त आदि लग जावें तो मन्थी को पीर दें ।

मिला कर ४ या ५ वर्ष के लहके को पिंलावें । जोरेट भाफ पुटास ग्लिस्सीन में मिला कर मुख में लगावें । खाने की दूध और घूने का पानी मिला कर दें ।

रोग से बचने का उपाय—स्वास्थ्य रक्षण के नियमों पर ध्यान दें । माता जब दूध पिंलावे तब छाती को ढाला करे । अन्य बच्चे को बचावें । रोगी बच्चे की जूठी कोई वस्तु निरोगी बच्चे को न दें । राख आदि किसी बर्तन में ढाल कर छूत नाशक जर्क मिला कर दूर गांढे । रोगी बच्चे का वस्त्र निरोगी बच्चा मुख में न ढाल ले (जैसा प्रायः बच्चे जो पाते हैं मुख में ढाल लेते हैं) इस का ध्यान रखें । रोगी बच्चे को साफ रखें । समय २ पर गाय का ताजा दूध कुछ घूने का पानी मिला कर पिंलावें ।

प्यूमोनिया Pneumonia आसुरिया = फेफड़े की सूजन

फेफड़े की सूजन ३ प्रकार की है—१ एक्यूट, २ क्रॉनिक, ३ आनिम (जीर्ण) ।

यह रोग दो प्रकार का है (१) ट्रांसेटिक प्यूमोनिया जो चोट आदि से, जैसे छाती में बर्तों आदि लगे या पसलिया टूट कर फेफड़े को छेदें । इसे छूतदार न समझ कर छोड़ दिया ।

२ "इन्डियोपेथिक" भाप ही भाप होने वाला । इसे कोई २ छूतदार मानते हैं । यद्यपि यह रोग बहुत से छूत वाले रोगों के फल से उत्पन्न होता है जैसा कि पीछे कसरा शीतला, टाइफाइड, टाइफस, स्वर, डिफ्थीरिया, प्रपुतिस्वर और सेप्टिसीमिया में लिख आये हैं तो भी यहाँ केवल इस के छूतदार होने का कारण मात्र लिखते हैं ।

कारण—इस के कारण तो बहुत हैं, जैसा कि ऊपर

लिख जाये हैं । इस के छूत दार होने का कारण यह बतलाते हैं कि इस रोग के रोगी के कफ में एक कीड़ा जिसे प्यूमोकोकार्ड कहते हैं पाया जाता है । यह कीड़ा किसी भीति से निरोगी मनुष्य के फेफड़े में यदि चला जाये तो फेफड़े में तुरत सूजन हो जाती है । फेफड़े में कफ पृथ्वी में सूख कर वायु में मिल कर प्रवेश करता है वा स्वास द्वारा भी कीड़ा फेफड़े में पहुँच सकता है ।

लक्षण—विस्तार भय से कुल लक्षण तो नहीं लिख सकते । मुख्य लक्षण ये हैं । छाती के जिस ओर सूजन हो वहा दर्द, उस करघट छेदने में पीड़ा । स्वास कष्ट और स्वास के साथ छाती की पीड़ा असह्य होती है । उमर तेज अर्थात् १०४ से १०८ तक । खासी अधिक, कफ, आदि में निमिषिपा, ईंट के रंग का या मुरचे के रंग का, पीछे, क्रागदार पीले रंग का, निकलता है । मूत्र गदला छाल रंग का कम परिमाण में निकलता है । जिस ओर फेफड़े में सूजन होगी, वहा हाथ से देखने से गर्मी अधिक होगी । गाल भी छाल सरी ओर का होगा जिस ओर का फेफड़ा ग्रसित है । निर्बलता इतनी होती है कि रोगी करघट तक नहीं बढ़ा सकता । तापी ९० से १२० प्रति मिनिट चलती है । स्वास ३० से ६० या ८० बार प्रति मिनिट चलती है । जब दोनो ओर के फेफड़े ग्रसित होँ जिसे डबल प्यूमोनिया कहते हैं तो लोग साफ न होने के कारण चेहरा भीला पड़ जाता है । रोगी श्वासकष्ट से बेचैन या अचेत हो कर मर जाता है । बूदों, निर्बलों, और शराबियों में अशुभ लक्षण उदय होते हैं । ऐसी में जीभ सूखी भूरी या काली, ओंठों और

दातों पर पपड़ी जम जाती है । रोगी बकता झकझा या बिछीने को मारता है । हाथ पैर कांपते हैं । ओठ चर्राते हैं । पीछे वह अचेत हो कर मर जाता है । यदि आरोग्य होने वाला हुआ तो ८ से ११ दिन के भीतर उबर उठता है और अशुभ छवण दूर हो जाती है ।

निदान—साधारण खासी में न तो इतना उबर होता है और न मोरचे और हँट के रग का कफ निकलता है । मूखी (फेफड़े के किस्सी की सूजन) में दर्द तेज झई चुप्ताने के सदृश और उबर १०१ या १०२ वर्ग से अधिक नहीं होता ।

किजीकल साइन्स (देख, सुन, ठोक, और छूकर परीक्षा) हमने यों छोड़ दी कि यह काम सर्वसाधारण नहीं कर सकते । यह अम्पासी वैद्यों का काम है, इससे यह परीक्षा किसी अम्पासी वैद्य से कराकर निदान करवायें । जिसका सर्वसाधारण के समझने योग्य था लिख दिया गया ।*

रोग से बचने का उपाय—फेफड़े पर सरदी न लगने पावे और रोगी के कफ आदि से बचे रहें ।

चिकित्सा—दो प्रकार की करें—शारीरिक और रूपा-
निक ।

(१) शारीरिक चिकित्सा-रोगी की निबंलता से बचायें इस लिये स्टिम्पुलेंट—

कार्बोनेट आफ़ सोडियम

५ ग्रेन

* परिणाम—जब दोनों चार के फेफड़े रोग ग्रस्त हों तब पटि-
याम भयानक होता है । एक घोर के रोगी फेफड़े पासे, यदि दूसरे
रोग न था निसे हों तो, माय* बण्डे हो जाते हैं ।

४८६ छूतवाले रोग और उनसे बचने का उपाय ।

टिकथर सिनकोना कम्पोज्ड २० घूँद

स्विपरिट् क्लोरोफार्म २० घूँद

टिकथर डिजीटेलिस (यदि नाड़ी की गति

प्रति निमिट १०० से १२० हो तो) ५ घूँद

ब्रांकी (यदि कनसोरी अधिक हो तो) १ या २ ड्राम

डिकाफेशन सिनकोना १ औंस

मिलाकर ऐसी एक मात्रा प्रत्येक तीन तीन घण्टे पीले पिछावे जब नाड़ी १०० से नीचे आ जावे तो टिकथर डिजीटेलि बंद कर दें । यदि रात में नींद न आवे तो क्लोरल हैड्रेट की से २० ग्रैन तक खिलावे । आरोग्य होने पर "टानिक विस्वर" देखे ।

(२) स्थानिक चिकित्सा-छाती पर सेक करें । कलाई के टुकड़े पर तारपीन छिड़क कर सेंकें या राई व प्लास्टर लगावे । गर्म २ मलखी की पुलटिस बांधें । लेकि आध २ घण्टे पीछे उसे बदलते जावे ।

सूचना—कठारल न्यूमोनिया में कफ ईंट के रंग का नहीं होता । केफड़े में जो जल रिसता है वह या तो कफ द्वारा निकल जाता है या पीप में बदल कर सघी रोग उत्पन्न करता है । और क्रानिक न्यूमोनिया में दर्द आदि के कम होते हैं । उसमें सघी के से लक्षण प्रायः देखे जाते हैं । खांसी इसमें मुख्य प्रकार की और थारी से सटती है । रोग प्रति दिन निर्बल होता जाता है । श्वेप लक्षण कारण की अन्य द्वायें सब एकपूट न्यूमोनिया के सट्टा ही पाए जाते हैं ।

स्लीपिङ्ग डिजीज ।

निद्रा रोग SLEEPING DISEASE.

इस रोग में अफ़्ता ज़खा जीरोगी मनुष्य सोता का सोता ही रह जाता है । यद्यपि यह रोग अभी इधर नहीं आया है^१ तौसी हंग होने के समय कहीं २ भारतवर्ष में भी इस का होना सुना गया था । इस रोग का मूल कारण अभी खोजा जा रहा है । किन्तु इस में सन्देह नहीं कि यह छूत-दार है । इस की छूत वायु द्वारा आक्रमण कर के रोगी को फिर सोते से नहीं जगाती । मनुष्य रात को भोजन आदि कर के पलंग पर सोए है, प्रातः काल देखा गया है कि वे सुई पड़े हैं । इस का सविस्तर हाल अभी यों नहीं लिख सकते कि इस रोग की अभी परीक्षा हो रही है । जब तक परीक्षा द्वारा इस के कारण और लक्षण न सिद्ध हो जायें तब तक इस पर कुछ लिखना व्यर्थ है । अभी तक यह योरप और अफ़्रिका, उत्तरी एशिया आदि में हुआ है । भगवान न करे कि यह भारतवर्ष में आवे ।

बचने का उपाय—जिस स्थान में इस प्राति लोगों की सन्धु होती देखें तुरत वहा से भाग निकलें क्योंकि यह रोग जनकेक्षण मालुम होता है । सम्भव है कि कटे-जस भी हो ।

स्त्रियो के मुख्य रोग ।

प्योरपरल फीवर PUERPERAL FEVER प्रसूत खर यह रोग स्त्रियों को बच्चा जमने के पीछे होता है ।

^१ अफ़्रिका में अधिक है ।

गर्भाशय^१ के द्वारा विष प्रवेश होकर रुधिर में मिलाता है जिससे यह रोग होता है ।

कारण—छड़का पैदा होने के पीछे भ्रग में कोई वस्तु जैसे क्लिछी या आंवल बेल (खेही) का टुकड़ा, या रूत का लोथहा आदि का रह जाना और सहना । या गर्भाशय की दीवार में पैदा होते समय दवाव या औजार आदि से घोट पहुंचना और घोट द्वारा विष रुधिर में प्रवेश करना । घोट आदि के कारण गर्भाशय का सहना, या गर्भाशय में जनने से प्रथम घाव आदि का होना । प्रायः वध्वा जनने समय दायी आदि की असावधानी से भ्रग बच्चे के सिर के दवाव के कारण तन कर फट जाती है । और इस रोग का विष इसी फटे या छिले हुए मार्ग से रुधिर में प्रवेश कर जाता है ।

ऊपर कहे कारणों के सिवाय “छिपपीरिया” — “छाउ बुखार” — “एरीसिपेलस” (सुखं वादा) “प्रिटोनाइटिस” (पेट पर अक्षर करनेवाली क्लिछी की सूजन) आदि छूत वाले रोगों का विष यदि जच्चा के शरीर में लग जावे तो यह रोग उत्पन्न ही प्रगट होता है । एक रोगिणी जच्चा से दूसरी निरोगी जच्चा भी रोगिणी हो जाती है । अर्थात् रोगिणी प्रसूता का विष अरोगिणी प्रसूता को लग जा कर यह रोग उत्पन्न हो जाता है ।

लक्षण—जबजब जनने के दूसरे या तीसरे दिन सबत विष छिले या फटे हुए मार्ग से रुधिर में पहुँच कर अपना

१ वध्वा जनने के उपरान्त यदि माँ की गति प्रति मिनट १०० से ऊपर हो तो इस रोग का रुद्ध करना पड़ता है ।

असर प्रगट करता है । एक साथ जाड़ा देकर ऊपर, जो १०२ से लेकर १०८ दर्जे तक का देखा गया है, चढ़ता है । माही १०० से लेकर १४० या १५० की गति से प्रति मिनिट चढ़ती है । स्वांस जल्द २ और उस में भीठी २ गध जाती है । जीभ आदि में मैली और तर किम्बु अंत में काली हो जाती है । पेट फूल कर डोल हो जाता है । दधाने से दर्द भी करता है । मुख फीका चुचका हुआ हो जाता है और आँखें बँध जाती हैं । कभी २ रोगिन बकझक करती हैं । किसी २ को अंत तक होश हवास बने रहते हैं किन्तु कोई २ अचेत हो कर खुरांटे की स्वास लेती हैं । दस्त और वमन काफी की भाँति फाले रंग की होती है । बच्चा जन्मे के पीछे एक प्रकार का छोड़ू निश्चित जल पाँच सात दिन तक जग से निकला करता है वह इस रोग में या तो बिलकुल बंद हो जाता या दुर्गन्धित और कम परिमाण में निकलता है । गर्भाशय के ऊपर (पेट पर) दर्द जो दधाने से अधिक होता है जान पड़ता है । स्तनों का दूध बंद हो जाता है या कम हो जाता है । जब अन्तिम दशा पहुँचती है तो माही पारीक सूत सी होती है नानो ठहरने चाहती है । और पेट डोल सा बजने लगता है । स्वास सलटी हो जाती है । एक ही सप्ताह में रोगिन परलोक सिंघारती है । किसी में ऊपर के कुछ लक्षण एक साथ नहीं भी पाए जाते । किसी २ में “सेप्टीसीमिया” के लक्षण पाये जाते हैं ।

सेप्टीसीमिया के लक्षण ।

शरीर के विविध भागों में पीप का पड़ जाना, जाड़ा, ऊपर, और शरीर का पीला पड़ जाना, दधाने पर

घटवे पहना, आख के श्वेत भाग में चाव या सहन होना, फेफड़े और चसकी क्रिस्ती (प्लूरा) में पीप भर जाना, हृदय की क्रिस्ती में पीप पड़ना आदि सेप्टीसीमिक सिन्ड्रोम (सहन के लक्षण) हैं ।

कम्प्लिकेशन (सम्मिलित रोग)—इस रोग से पेट की अस्तर करने वाली क्रिस्ती जिसे "प्रेटोनियम" कहते हैं सूज जाती है । आश्चर्य यह कि पेट की क्रिस्ती की सूजन से प्रसूत ज्वर और प्रसूत ज्वर से पेट की क्रिस्ती की सूजन हो जाती है । इससे जान पड़ता है कि एकही विष दोनो रोगों में होता है । इसके सिवाय न्यूमोनिया (फेफड़े की सूजन) प्लूरसी (फेफड़े के ढंकने वाली क्रिस्ती की सूजन) पैरी कार्डोइटिस (हृदय की क्रिस्ती की सूजन) पीलिया, निगर और गुर्दे की सूजन, आदि भी शामिल हो जाते हैं ।

रोग से बचने का उपाय—जन्मा के पास किसी रोगिणी स्त्री को न आने दें । दाई आदि, किसी ऐसी रोगिणी को देख कर जो एरीसिपेलस, डिफ्थीरिया, लाल बुखार और पेट की क्रिस्ती की सूजन वाली हो, जन्मा के समीप न आवें । जन्मा का कमरा साफ हो । गंदगी आदि वा नोरी पतारा आदि जन्माखाने के समीप न रहें । समाहन और नाइन कपड़े बदल २ फर जन्मा के समीप आवें । जल वायु का उत्तम प्रयत्न करें । यदि कोई स्त्री घर में प्रसूत ज्वर से पीड़ित हो तो अन्य प्रसूता को दूसरे स्थान में रखें । दाई आदि अपने हाथ कांडीज लोशन (छूतनाशक अर्क) द्वारा रूब धोकर तब जन्मा को छूवें । जन्मा को भी साफ कपड़े पहिनावें आचार्य ।

चिकित्सा—बच्चे के पैदा होते समय इस बात का ध्यान रखें कि जग का कोई भाग किसी यन्त्र या बच्चे के दबाव से फटने या छिलने न पावे । उपरान्त सर-करी लोशन—एक हिस्सा एक हजार हिस्से वाला (१/१०००) लेकर दूध (जो एक छोड़े का बना होता है) में सर सर जग और गर्भाशय को दोनो तक चोवें, इस विधि से विष यदि हो तो नष्ट हो जाता है । यह कार्य कम से कम एक सप्ताह तक करें । बच्चे के जन्म पारण करते ही ५ ग्रैन की मात्रा में कुइनाइन Quinine नियत मात्रा काल एक दो सप्ताह तक बराबर दें । इस औषधि से ज्वर आदि तो दूर रहते ही हैं किन्तु गर्भाशय के भीतर के खून आदि विषेले पदार्थ भी बाहर निकल जाते हैं । यदि असह्यधानी आदि से यह रोग (प्रसूत ज्वर) हो जावे तो उसकी ये चिकित्सा करें—कि दोनो तक पिचकारी द्वारा “काडीज फ्लुइड” या सरकरी लोशन (१/१०००) से जग को सुख साफ करें । लम्बी लम्बी पिचकारी में लगा कर गर्भाशय को भी चोवें । पीछे कुइनाइन से चिकित्सा आरम्भ करें अर्थात् कुइनाइन १० ग्रैन की मात्रा में दिन में तीन बार प्रतिदिन खिलावें । यह औषधि कभी २ बड़ी लाभदायक पाई गई है । इससे ज्वर और विष दोनो को बड़ा लाभ होता है । यदि “कुइनाइन” काम न दे तो बारबर्ग साहेब का टिंकचर Barburg's Tincture पिछावें । यह उस समय अधिक लाभदायक होगा जब कि ज्वर की अधिकता हो । यदि पेट की अस्तर उगाने वाली फ़िस्सली सूज जाय तो चिकित्सा तारपीन के तेल से करें । नुसखा भीचे देखा ।

स्विरिट आफ टरपनटाइन (शराब में मिलाया हुआ तारपीन) १ औंस

देा अंहे की सरदी मसलब भर

लुभाव बखूर के गोंद का २ औंस

सिरप आफ लेसन (नीबू का शरबत) १ औंस

टिक्चर बिलाडोना २ ग्राम

सोल्यूशन आफ नारफाइन (अफीम के सस का अर्क) १ ग्राम

एसेस आफ पिपरमेंट ४ ग्राम

क्लोरोफार्म घाटर ५ औंस

मिलाकर इसमें से चार ग्राम की मात्रा में तीन २ घण्टे पीछे पिलावें । यदि कसू हो तो कैलोमल तीन या चार ग्रैन कैलोसिय के साथ रात को सोते वक्त दें । यदि मनन होवी हो तो नारफिया सोल्यूशन (अफीम के सस का अर्क) तबचा में तबचा की पिचकारी (हिपोडर्मिक सिरिज) द्वारा पहुँचावें । घेठ की सूजन में अफीम $\frac{3}{4}$ ग्रैन, बिलाडोना का सस $\frac{1}{4}$ ग्रैन मिला कर गोली बना कर तीन २ घण्टे पीछे दें । रोगिणी को साफ धुले बखर पहिरा कर साफ बिस्तर पर लिटावें । भग में साफ कपड़ा या लिट का टुकड़ा रखें लेकिन जब वह नींग जाय वा शराब हो जाय तो तुरत बदल दें । दूध गरम २, यदि निर्बलता हो तो “ब्रांडी” मिलाकर, तीन २ घण्टे पीछे उचित मात्रा में पिलावें । चागू दाना आदि भी देते रहें । स्वास्थ्य रक्षण के नियमों का परिपूर्ण पालन करना उचित है ।

पोइमिया = सेप्टीसीमिया = गाइक्रीमिया ।

सेप्टीसीमिया एरीसिपेलिस की छूत लगने से होती है । किसी २ के मत से “पिक्टेरिया” (मूहन फीट) के रुधिर में पदुपने से, और किसी २ के मत से किसी कोड़े की पीप रुधिर में मिलने से, होती है । कभी यह रोग अपने आप और कभी घाट आदि लगने के पीछे देखा जाता है । एरीसिपेलिस (मुर्छा बादा) की छूत से सेप्टीसीमिया और सेप्टीसीमिया की छूत से “एरीसिपेलिस” होते देखा गया है । अस्तु तीनों का कारण और विष एक ही बात होता है । पुराने जमाने में जब कि घावों आदि की सफाई पर लोग विशेष ध्यान नहीं देते थे तब यह रोग खुरी भाति मनुष्यों में फैलते थे । किन्तु आज दिन दिन जाता पर विशेष ध्यान रक्खा जाता है । इससे ये रोग भी अब कम हमला करते हैं ।

कारण—प्रसूत स्त्रिय और सेप्टीसीमिया में कुछ विशेष नेद नहीं है अर्थात् “सेप्टीसीमिया” प्रसूत स्त्रिय का अन्तिम लक्षण है जैसा कि प्रसूत स्त्रिय में वर्णन कर आये हैं । प्रसूत स्त्रिय के कारण में वर्णन कर आये हैं कि भग या गर्भाशय द्वारा विपैली वस्तु सोखी जाने से “प्युरपरल फीवर” होता है, अब वही कारण सेप्टीसीमिया के भी हैं । जैसे एरीसिपेलिस लाल घुसारा आदि रोगों की छूत लगने से वह होता है यह भी उसी प्रकार की छूतों से उत्पन्न होता है । घाट आदि या घाव आदि के द्वारा विष रुधिर में प्रवेश करता है । सहन का विष यदि खून में मिल जाये, या कोई कोड़े की पीप खून में मिल जाये या भग द्वारा सहन लोहू में प्रवेश करे तो यह रोग प्रसूत स्त्रिय के मत की दशा की

प्राप्ति उत्पन्न होता है ।

लक्षण—दिन में कई बार जाड़े से उठकर, जिसकी गर्मी १०५ से १०७ १०८ दर्जे की होती है, चढ़ता है । सुबह गर्मी कम और शाम को अधिक हो जाती है । इसी प्रकार जाड़ी आरम्भ में कड़ी और गति में शीघ्र २ किन्तु अन्त में लम्बे सूत सी और अप्रबलित होती है । मुख की रंगत पीली घबराई हुई, त्वचा की रंगत मटीली या पीली होती है । शारीरिक और हार्दिक निबलता के कारण रोगिन सुस्त पड़ी रहती है । जीभ सूखी और भूरे रंग की होती है । खांस में मोठी गंध आती है । प्यास अधिक लगती है । जो मचलाता है और कभी घनम भी होती है । पश्चात् धारे शरीर के कभी ऊपरी और कभी भीतरी विभागों में पीप पड़ जाती है । शरीर पर जगह २ पीप से भरे बुबे कोड़े निकलते हैं (जिनको पायनिक एरसिस कहते हैं) । दस्त लग जाते हैं, दस्तों में खुरी आंति की गंध आती है । मूत्र कम और उसमें "एल्युमिन" (एक लसदार पदार्थ) पाया जाता है । स्वास की गणना बढ़ जाती है । त्वचा, लस, पट्टे और नास आदि से रुधिर निकलता है, इद्रय की दीवार, केफला और तिछी आदि भी जोड़ू लगते हैं । मेला केफला जिगर और तिछी किसी २ के जोड़ों में पीप (जैसा ऊपर लिख आये हैं) पड़ जाती है । अन्त में मूर्छा या कनकलशन हो कर रोगी मर जाता है ।

निदान—परीसिपेल्स और टाइफस, टाइफाइड एयरि और न्यूमोनिया से थोड़ा होता है किन्तु यह ध्यान रखना चाहिए कि यह रोग प्रायः अस्त्रविद्या (अपरेशन)

आदि के पीछे (जैसा बचवा निकालते वक्त या कोई भाग काटते वक्त देखा जाता है) होता है । आरम्भ ही से इस के छवण भयानक होते हैं । फोड़े कुंसियों के निकलने से तो पूर्ण निदान हो जाता है ।

परिणाम—युरा है । सैकड़े पीछे ७५ मनुष्य एक ही सप्ताह में मर जाते हैं ।

बचने का उपाय—एरीसिपेलिस (सुर्ख बाढ़ा) देखो ।

सूचना—यह रोग न केवल जननधारियों ही में होता है किन्तु प्रत्येक स्त्री पुरुषों को प्रत्येक अवस्था में हो सकता है । हा, जननधारियों को यह विशेष होता है । इसी के फल से सन में प्रसूत ऊपर सत्यक होता है ।

चिकित्सा—एरीसिपेलिस और प्रसूत ऊपर की भांति करें । निर्मलता के लिये स्टिम्पुलेंट निकटवर आदि दें । कुइनाइन अधिक मात्रा में खिलायें । सलकाइड या डाइ-पोसलकाइड आफ सोडा कुइनाइन के साथ दें । टानिक (बलकारक) नीयभिया जैसे छोड़ा आदि भी दें । स्वास्थ्य रक्षण के नियमों पर पूरा २ ध्यान रखें क्योंकि इन रोगों में सफाई प्रधान है ।

पशुओं से मनुष्यों में होनेवाले छूतदार रोग ।

— ० —

ग्लैंडर्स । GLANDERS

यह रोग सुनदार जानवरों जैसे घोड़े, गधे, खरबरो में होता है । यदि पशुओं से इस रोग की छूत मनुष्यों को छग जावे तो मनुष्यों को भी यह हो जाता है । इस प्रकार का विष

५७६ छूतवाले रोग और उनसे बचने का उपाय ।

नाक की लुभायी क्रिस्ती (म्यूकस मेम्ब्रेन) पर होता है । और शरीर पर एक प्रकार के दाने निकल आते हैं ।

कारण—जब कोई पशु उक्त रोग में ग्रसित हो और उस के नाक का पानी मनुष्य के शरीर पर लगे तो यह रोग मनुष्य को हो जा सकता है । यह रोग प्रायः सर्पों और घोड़े के सवारों आदि को होता है । जोड़ा जब हिम-हितावा है तो उस के नाक का पानी जिस जगह पर पड़े उसी को यह रोग हो जाता है ।

लक्षण—आरम्भिक—छूत लगने के तीन से आठ दिन के भीतर ज्वर होकर तनम जोड़ों में दर्द उत्पन्न होता है । कमर, पीठ, और नस्तक में भी पीड़ा होती है । नाक की लुभायी क्रिस्ती सूज जाती और उस में सरसों की भाँति दाने निकल आते हैं । दाने फूट २ कर चाब हो जाते हैं चाँधों से पतली दुर्गन्धित पीप निकलती है । कभी २ लोहूँ निखी पीप निकलती है । नाक बंद हो जाती है । स्वास रोगी मुख से लेता है । सारे शरीर पर बुँधी और मोडे निकल आते हैं । कुसिरी का आकार शीतला सा होता है उन के चारों ओर छाल घेरा भी पाया जाता है । किसी २ में पीप और किसी २ में सघन पैदा हो जाती है । कभी २ फफोले पड़ जाते हैं । निर्बलता इतनी होती है कि रोगी करघट तक नहीं बढ़ा सकता है । रात को बकता झकता है । कुल लक्षण सेप्टीसीमिया के उदय होते हैं । प्रायः एक ही सप्ताह में रोगी परलोक सिधारता है ।

१ घोड़े के काट घाने से भी इस विष का ज्वर कोहूँ में पहुंचता है ।

लक्षण जीर्ण—जीर्ण की दशा कम पहुचने पाती है क्योंकि प्रायः आरम्भिक दशाही में रोगी मर जाता है । यदि हो भी तो नाक से छोड़ू निली पीप निकलती है । पसीने में दुर्गंध आती है । गीह सूज जाते हैं या उनमें पीप पड़ जाती है । नाक का खांसा बैठ जाता है या गल कर गिर जाता है । शरीर सूख जाता है । किसी किसी में दस्त लग जाते हैं; किसी २ में दस्त और बमन दोनों होते हैं । नि-
बलता के कारण रोगी धीरे २ कुत्तों की भीत मरता है ।

फार्सी—FARCY.

इसमें और ग्लैंड्स में केवल यही अंतर है कि यदि पशु की छूत मनुष्य की छुमायी किल्ली पर लगे तो ग्लैंड्स और जो शरीर में घुस कर शोषक गिलिटियों (लिम्फेटिक ग्लैंड्स) और अन्य विभागों पर असर करे तो उसे "फार्सी" कहते हैं ।

कारण—चोड़ा काट खाप या किसी छिछकी जगह से चोड़े का एक विष मनुष्य के शरीर में प्रवेश करे । यह प्रायः साइंस और कोषवान आदि को होता है । सवारों को भी होर जाता है ।

आरम्भिक लक्षण—जिस स्थान से विष प्रवेश करता है वहां के आस पास की गिलिटियां सूज जाती हैं । नींवरी विभागों में पीप पड़ जाती है । जहां नांस और चर्बी अधिक होती है वहां सूजन और पीप पड़ जाती है । नाक से दुर्गंधित जल बहता है । ग्लैंड्स की भौंति सारे शरीर में दाने निकलते, या सड़न पैदा हो जाती है ।

जीर्ण लक्षण—यह रोग उतना भयानक नहीं है जितना कि ग्लैंड्स है । यदि इस रोग के साथ ग्लैंड्स भी

५०८ छूतवाले रोग और उनसे बचने का उपाय ।

शरीर हो जावे तो अवश्य परिणाम भयानक समझा जाता है । जीर्ण दशा में जहां से विष प्रवेश हुआ हो - उस स्थान पर एक चूड़ा हुआ घाव हो जाता है । पश्चात् सिर बगल छाती पीठ और सारे शरीर पर घाव हो जाते हैं । और निर्वलता बढ़ते २ रोगी मर जाता है ।

इक्वाइनीया साइटिज़ Equinia Mitis

घोड़े के एक मुख्य रोग से यह रोग मनुष्यों को भी जाता है । घोड़े की एड़ी के पास जो सूजन होती है उसमें एक प्रकार का जल होता है वही जल यदि मनुष्य के शरीर पर लग जाय तो मनुष्य इस रोग में ग्रसित हो जाता है ।

कारण—घोड़े की एड़ी की छूत लगना है ।

लक्षण—गाढ़े से उबर चढ़ता है । पीपदार दाने सारे शरीर पर निकलते हैं । सूखने पर खुत्ती बच जाती है ।

परिणाम—उपर्युक्त तीनों प्रकार के रोगों का परिणाम भयानक है । कहीं कभी २ आराम होते देखा गया है ।

रोग से बचने का उपाय—ग्लैंडर्स कासी और इक्वाइनिया साइटिज़ तीनों घोड़े से अधिक उत्पन्न होते हैं । अस्तु घोड़े के नाक के जल से अपने हाथ और शरीर को बचावे कटहे घोड़े से या रोगी घोड़े से दूर रहें । रोगी घोड़े आदि से अन्य पशुओं को भी दूर रखें । साज आदि साफ रखें सवार लोग इसका ध्यान रखें । घोड़े की नाक भी न पहे ।

चिकित्सा—ग्लैंडर्स में तेज कास्टिक लोशन फुरी से नाक में लगावे । स्टिम्पुलेंट मिक्चर पीने को दें । किन्तु

एक्कट (भारम्भिक) खँडस की कोई चिकित्सा नहीं है ।

फारसी में जहाँ घोड़े ने काटा हो घड़ा लोहा गर्म कर के या तेज कास्टिक की बत्ती से जला दें । घाव हो तो काहीन फलुइह या सरकारी लोशन (१-१०००) से खूब धोयें । सखिया, कुचला मिली औपधिया खाने को दें । या "पुटासियम आयोडाइड" १५ ग्रेन, दिकाकशन सिलिकोना १ औंस में मिलाकर, दिन में तीन बार चार बार पिछावें । कोड़े हो तो धीर कर पीप निकाल दें । घावों को छूतनाशक बर्कों से साफ रखें । नाक में भी छूतनाशक जलोकी पिचकारी लगावें । सफाई का ध्यान रखें । खाने को दूध शोरबा, यखनी, आदि उचित समय पर दें । जलवायु का ध्यान रखें । रोगी निर्बल न हो इस पर विशेष ध्यान रखें ।

मेसिंगेन्ट पश्चुल^१ या शरबन ।

CHARBON

यह बड़ा जघानक छूतदार^२ रोग है । यह मेह बैल, घोड़े आदि जानवरों में अधिक होता है । कभी २ छूत लगने से मनुष्य भी इस से प्रसित हो जाते हैं ।

कारण और लक्षण-छूत का शरीर में प्रवेश करना, या रोगी पशु का नांस खाना । मक्की और मच्छर रोगी पशुओं से विप लेकर प्रायः मनुष्यों के ऊपर बैठ कर उन्हें रोगी बना देते हैं । विप प्रायः जुते स्थानों जैसे मुख वा मोठ द्वारा शरीर में प्रवेश करता है । जहाँ यह विप लगे वहाँ मच्छर के काटने के सदृश ददोड़ा पड़ जाता है । उक्त स्थान लाल चमकदार

१ यह रोग कबाइरों और नांवाहारियों को अधिक होता है ।

२ चरबन नामक रोग की कून है ।

५१० छूतवाले रोग और उन से बचने का उपाय ।

हो जाता है और उस पर दाने निकल आते हैं । खुजली और जलन अधिक होती है और खुजलाने से दाना टूट जाता है । मुख से राल टपकती है । त्वचा काली पड़ जाती है । मुख से दुर्गन्ध निकलती है । पसीना बहुत निकलता है । सूना हुआ स्थान काला पड़ जाता है । पश्चात् "सेप्टीसीमिया" के लक्षण प्रगट होते हैं (देखो सेप्टीसीमिया) । आठ दस दिन में रोगी मर जाता है ।

परिणाम-ज्वरानक है ।

बचने का उपाय-जानवरों के सांस समस्त कर लें अर्थात् रोगी झेड़ बकरी का सांस न लें । मक्खी मक्खर आदि किसी खाने पीने की चीज पर न बैठें ।

चिकित्सा-शीघ्र उस स्थान को जहाँ विष लगा है काट डालें या "पोटाश फ्यूजा" से जला दें । आयोडिन का प्रोठ घेन वाला सोल्यूशन त्वचा में त्वचा की पिचकारी द्वारा पहुंचावें । "क्लोराइड आफ पोटाश सोल्यूशन" पानी के स्थान में पीने को दें ।

सलफाइट्स आफ सोडा

$\frac{3}{4}$ ड्राम

„ „ सेगनेसिया

२० ग्रैन

इनफ्यूजन/क्लासिया

$2\frac{1}{2}$ औंस

मिला कर ऐसी एक मात्रा चार २ घण्टे पीछे पिछावे ।

निर्बलता में स्टिम्युलेंट मिश्रण १ औंस की मात्रा में प्रत्येक चार २ घण्टे पीछे दें । आरोग्य होने पर ग्रास, कुनैन, और लोहा मिली औषधि दें । वायुदार घर में रोगी को रहें, हलकी पाचक पच्य दें ।

हैड्रोफोबिया^१-रेबीज-HYDROPHOBIA OR RABIES हड्डकवाय ।

यह रोग दो प्रकार का होता है, एक फाल्स हैड्रोफो-
बिया जिममें शक के कारण भूठे छतण सदय होते हैं । यह
प्रायः यहनी मनुष्यों में पाया जाता है ।

दूसरा ट्रू हैड्रोफोबिया-यह कुत्ते गीदह और विभिन्न
के काटने से उत्पन्न होता है । इन जानवरों में एक रोग
जिसे "रेबीज" कहते हैं उत्पन्न होता है । कुत्तों में प्रायः
यह रोग गर्मी और वर्षा के आरम्भ में उत्पन्न होता है ।
कुत्ते इस रोग से पागल हो जाते हैं । इस मर्ज के कुत्ते
प्रायः चिल्लाने और काटने दौड़ते हैं । कोई २ सुपचाप पड़े
रहते हैं । कुत्तों की दशा दो दर्जों में वर्णन करेंगे ।

१ दर्जा-इस दर्ज में कुत्ता सुपचाप दुम छपेटे पड़ा
रहता है । देखने से उसका चेहरा पचड़ाया हुआ लजता है ।

२ दर्जा-इस दर्ज में बिना किसी कारण के कुत्ता
काटने को दौड़ता है और उसकी बुद्धि बिगड़ जाती है ।
वह होश में नहीं रहता । घोली खदल जाती है । जिसके
कारण बुद्धिविकार, स्वांसकष्ट, और निगलने में कष्ट होता है ।
देखने सुनने और समझने में भी अन्तर आ जाता है । मस्तिष्क
के आठवें जोड़े रसायु (सेन्साफेजियस ग्रान्ड) पर ऐसा इस
रोग का असर पड़ता है कि रोगी पानी का नाम सुनते ही
कापने लगता है, पिच्छी खप जाती है । स्वांस में कष्ट होने
लगता है । पानी का नाम अथवा दर्शन नहीं सुनना और
करना चाहता ।

^१ हैड्रो का अर्थ पानी, "फोबिया" अर्थात् डरना ।

लक्षण-शारीरिक-आदि में ज्वर और मस्तक में पीड़ा, निजाज़ में चिड़चिड़ापन, रात में जाति २ के स्वप्न होते हैं । पीछे मुख्य लक्षण उदय होते हैं अर्थात् जिस समय रोगी को प्यास लगती है तो पानी पीने को मागता है किन्तु जहाँ पानी का दर्शन किया कि एकाग्रक एक प्रकार की ऐंठन (स्पास्म) हाथ और मुख में उत्पन्न हो जाती है जिसके कारण रोगी एक छूट जल कठ में नहीं छाल सकता । पीछे पानी प्यास रहते भी नहीं मागता । पानी से एक प्रकार घृणा करने लगता है । जिस समय पानी सामने देखता है उस समय कठ के पट्टे सन जाते हैं । स्वांस बाहर की बाहर और भीतर की भीतर ही रह जाती है । सुख, दम घुटने का सा अमानक हो जाता है । हाथ ऐसा कपाने लगता है जैसे मृगी वाला रोगी कपाता है । लुभाव दार बलगम (कफ) मुख में भर जाता है । जिसके निकालने को रोगी "खो "खो" का शब्द मुख से करता है । इसी दशा को अर्थात् "खो" २ को मूर्ख लोग कुत्ते की जाति मोकना समझते हैं । रोगी बेचैनी के कारण मागता और काटने को दीडता है । पश्चात् नीचे के घड़ के फालिम (छकवा) होने से घुटने के बल चलता है । इसी दशा को कुत्ते के समान चलना कहते हैं । नींद शान को नहीं आती । प्यास के नारे (यदि पीछन श्रुतु हो तो) कठ सूख कर कांटा हो जाता है । पेशाब (मूत्र) आदि या तो बार २ या एक बूंद भी नहीं होता । इसके पीछे रोगी बकने झकने भागने और मोकने लगता है । इस दशा में यदि कोई सामने पड़ जाय तो काट भी खाता है । अंत में निर्बल

होकर या प्यास की कठिनता में अचेत होकर मर जाता है ।
तीन रोज से एक सप्ताह के भीतर मृत्यु होती है । *

निदान-इस रोग से और टिटनेस (एक प्रकार की
एँठन वाला रोग) से घोखा हो सकता है । इसलिए निदान
का सफ़ाया लिखा जाता है ।

हैड्रोफोबिया

१ आदि ही से चेहरा भया
घना और परेशान होता है ।

२ आदि ही से खीरा जाता है ।

३ ऐंठन बराबर अंत तक
होती है ।

४ मुँह से आग निकलती है,
कुत्तों की भाँति "हक" २
करता है । पानी के गान
से कापता है ।

टिटनेस ।

१ चेहरा डसने की भाँति कुछ
दुखी और आँखों में कुछ
अन्तर नहीं होता ।

२ खीराता नहीं, बुद्धि ठीक
रहती है ।

३ शरीर अकड़ कर खेहोल
हो जाता है ।

४ इसमें यह दशा नहीं पाई
जाती ।

परिणाम-महा भयानक तथा असाध्य है ।

रोग से बचने का उपाय । कुत्तों की दशा जैसी
ऊपर वर्णन कर आये हैं उस प्रकार के कुत्तों को देखते ही
सरवा देना अच्छा है । गीदड़ आदि से बचाना भगवान के
अधीन है । क्योंकि यह एक टीवी घटना है । कौन जानता

* स्थानिक अलक्ष, जहाँ कुत्ते ने काटा है वहाँ घाव में कमी २
मुलम आदि होती है और साधारण घावों की भाँति घाव अच्छा
हो जाता है ।

की चिकित्सा सक्त विधि से की जाती है । आशा है कि सक्त कार्यालय से लोग लाभ उठावेंगे ।

विनिरियल डिजीज ।

६ छूतयाले जननेन्द्रिय के रोग ।

प्रगट हो कि इस भाग में केवल दो रोग एक गनोरिया Gonorrhoea (सुजाक=प्रमेह) और दूसरा सिफिलिस (मासिशक = सपदग) Syphilis छूतदार पाए जाते हैं ।

(१) सुजाक । जिसे हिन्दुस्थानी प्रमेह^१ और अंगरेज लोग "गोनोरिया" कहते हैं ।

निदान । छूतदार पीप आदि लगने के कारण लिङ्गेन्द्रिय के भीतर सूजन हो जाती है । जिस को बाकूरी में "स्पेसीफिक यूरेथ्राइटिस" या "गोनोरिया" और साधारण अंगरेजी में "रेनिग" या "क्लाप" कहते हैं । और जब इस प्रकार की सूजन स्त्रियों के भग के भीतर हो जावे तो "स्पेसीफिक वलवाइटिस" और "विजेनाइटिस" कहते हैं ।

मूल कारण एक खास ज़हर निळे भाई^२ का नर्व के लिङ्ग और भीरत के भग द्वारा लघिर में प्रवेश होना है । किन्तु पुरुष और स्त्री के सुजाक में भेद है इस लिए प्रत्येक २ वर्णन करेंगे ।

पुरुषों का सुजाक ।

कारण । सुजाकी स्त्री से प्रसंग करने या वह कपड़ा, जिस में सुजाक का विष लगा हुआ है, व्यवहार करने से, यह रोग उत्पन्न होता है । कभी २ जहाँ सुजाकी ने पोशाक

१ २० प्रकार के प्रमेहों में से एक यह भी है ।

२ कूत ।

५१६ छूतवाले रोग और उनसे बचने का उपाय ।

है कि कब और किस समय कौन जानवर काट खायेगा, तो भी सचेत रहना चाहिए । रोगी से दूर रहें । उसकी राख या कफ से भी अपने को बचावें ।

चिकित्सा-रोग होने पर किसी प्रकार की चिकित्सा काम नहीं देती । लाखा उपाय और औषधियाँ इस रोग में की गईं किन्तु सब निष्फल ठहरी । तबचा में तबचा की पिचकारी (हैपोथरमिक सिरिज) द्वारा "पेट्रोपिया", "मारफिया" "क्यूरारा" आदि के अर्कों की पिचकारी देते हैं किन्तु मैंने इस विधि से भी लाभ होते नहीं देखा । चारांश यह कि इस रोग की कोई औषधि अब तक नहीं प्राप्त हुई ।

कुत्ते के काटे हुए चाव की स्यानिक चिकित्सा-यही चिकित्सा मुख्य है । प्रथम जहाँ कुत्ते ने काटा हो उस स्थान को लोहे के गर्म करके जला दें या उसे काट डालें । अथवा "पोटासा फ्यूला" से खूब जला दें । जिससे सूजन हो कर पीप पड़े । पीप पड़ने पर चीरा लगावें जिससे कि विष पीप द्वारा निकल जावे ।

जान कल "विषस्य विषमौषधम्" इस कहावत का सूत्र प्रचार है । प्लेग, शीतला आदि के लिये इसी का अनुकरण प्रचलित किया गया है । अर्थात् रोग का अंश ही रोग से बचाने के लिये रोगी के शरीर में पहुँचाते हैं । अस्तु इस रोग का अंश भी इससे बचाने के लिये शरीर में पहुँचाते हैं । इन कार्य के लिये सरकार ने एक कार्यालय^१ कसीली (पनाब) में खोला है । जहाँ कुत्ते शीतल आदि के काटे हुए रोगियों

की चिकित्सा उक्त विधि से की जाती है । आशा है कि उक्त कार्यालय से लोग लाभ उठावेंगे ।

विनिरियल डिजीज ।

छूतवाले जननेन्द्रिय के रोग ।

प्रगट हो कि इस भाग में केवल दो रोग एक गोनोरिया Gonorrhoea (मुजाक=प्रमेह) और दूसरा सिफिलिस (मातिशक = उपदश) Syphilis छूतदार पाए जाते हैं ।

(१) मुजाक । जिसे हिन्दुस्थानी प्रमेह^१ और अंगरेज लोग "गोनोरिया" कहते हैं ।

निदान । छूतदार पीप आदि लगने के कारण सिद्धेन्द्रिय के भीतर सूजन हो जाती है । जिस को हाकुरी में "स्पेसीफिक यूरेथ्राइटिस" या "गोनोरिया" और साधारण अंगरेजी में "रेनिग" या "क्लाप" कहते हैं । और जब इस प्रकार की सूजन स्त्रियों के मग के भीतर हो जावे तो "स्पेसीफिक वलवाइटिस" और "विलेनाइटिस" कहते हैं ।

मूल कारण एक खास जहर मिले जाहूँ का सर्व के लिङ्ग और औरत के मग द्वारा रुधिर में प्रवेश होना है । किन्तु पुरुष और स्त्री के मुजाक में भेद है इस लिए प्रत्येक २ वर्णन करेंगे ।

पुरुषों का मुजाक ।

कारण । मुजाकी स्त्री से प्रसंग करने या वह कपड़ा, जिस में मुजाक का विष लगा हुआ है, व्यवहार करने से, यह रोग उत्पन्न होता है । कभी २ जहाँ मुजाकी ने पेशाब

१ २० प्रकार के प्रमेहों में से एक यह भी है ।

२ छूत ।

५१६ छूतवाले रोग और उससे बचने का उपाय ।

किया हो, उस पर पेशाब करने से यदि लिङ्ग पर छींटे पड़ जाय तो भी हो जाता है ।

जब इस जहर का प्रभाव होता है तो लिङ्ग के मुँह और किमारे के नीचे सूजन पैदा हो जाती है । और वहाँ की छलगी^१ क्लिप्पी छाल और उस से पीप निकलने लगता है । इस के उपरान्त यह सूजन धीरे २ ऊपर की फैलती है और लिङ्ग के कुछ भागों को घेर कर मसाने (मूत्राशय) तक और कभी यूरेटर माछी (मूत्रमल) से हो कर गुर्दे तक पहुँच कर रोग गुर्दा उत्पन्न कर देती है । और जब कि रोग पुराना पड़ जाता है तो सूजन के माँह के द्वारा^२ भूँठा अस्तर उत्पन्न हो कर लिङ्ग की रिसने वाली क्लिप्पी (म्यूकस मेम्ब्रेन) मोटी हो जाती है । और लिङ्ग का रास्ता तग हो जाता है । जिस को "स्ट्रिक्चर" Stricture अर्थात्-सकीर्णता कहते हैं । कभी घाव भी हो जाते हैं ।

प्रगट हो कि छुजाक नवीनता^३ तथा प्राचीनता^४ के अनुसार दो प्रकार का होता है । जिस का कारण तथा मूल एक ही भाँति का है । केवल लक्षण में फर्क है, अस्तु पृथक् २ वर्णन करेंगे ।

लक्षण सुजाक नवीन । यह दो प्रकार का है १ स्थानिक २ शारीरिक ।

१ स्थानिक । यह तीन दर्जों में प्रगट होते हैं ।

१ दर्जा । छूत लगने के समय से जो गिनती में चार

१ लपटार पानी जिस क्लिप्पी से रिसता हो ।

२ नया ।

३ पुराना ।

दिन से दस दिन है । इस समय लिंग में सुजली, ये आरानी, तथा सूत्र करते समय जलम जान पड़ती है ।

२ दर्जा । इस समय सूजन के लक्षण सतपस होते हैं, अर्थात् लिङ्ग के छेद के किनारे बाहर को लीटे हुए, लिङ्ग के मिर पर सूजन तथा पीप पतली, दूध के रंग की निकलती है, और जलम, तथा येबेनी अधिक हो जाती है । सूत्र की इच्छा बार २ और दुःख के साथ होती है । लिङ्ग का मल कठोर घात होता है ।

३ दर्जा । इस दर्जे में उपरोक्त लक्षणों में कमी होती है, और पीप दुर्गंधित पीले रंग की निकलने लगती है । यदि वह कपड़े पर लग जाये तो पीला दाग पड़ जाता है । यह पीप आरम्भ से अन्त तक छूतदार होती है । और इसमें दो प्रकार के कीड़े "नाइकोकोकार्ड" और "घाई प्रीईस" दृश्यमान से देखे गए हैं । इस दर्जे में विषय की इच्छा बार २ होने से लिङ्ग व उसके चिर में कुछ टेढ़ा पन आजाता है । इस दशा को "काही" कहते हैं । कारण इस Chordeo का यह है कि लिंग में सूजन होने से शोथक भाग (स्पजी हिस्सा) में सोनिशी नाहा रिसता है, अस्तु रुधिर का जमाव सब स्थानों पर एकसा नहीं हो सकता और विषय की इच्छा बार २ हुआ करती है इस कारण रोगी को नींद नहीं आती । कभी केपलरी कट जाने से रुधिरस्राव हो जाता है । दूसरा व तीसरा दर्जा दो हफ्ते से तीन तक रहते हैं, उपरान्त चौथे दर्जे अर्थात् "मुजाक कठिन" में, बदल जाते हैं ।

१ पतली २ सूज की माकियों की कहते हैं ।

५१८ छूतवाले रोग और उनसे बचने का उपाय ।

आन्तरिक । पहिले दर्जे में कोई दुख नहीं जान पड़ता, केवल आलस्य इत्यादि देखा गया है । दूसरे दर्जे में कठिन मूत्रभी उधर होता है जो रोगी की अवस्था-नुसार कम या अधिक दुष्प्रा करता है । दुर्बलता और भी विगाह उत्पन्न हो जाते हैं ।

लक्षण, - मुजाक कठिन । इस को "ग्लीट" भी कहते हैं, यह Gleet भी दो प्रकार का है, "प्रत्यक्ष," व "आन्तरिक" ।

प्रत्यक्ष । मूत्र करते समय एक प्रकार का क्लेश जान पड़ता है । बलगम भी रतूषत रिसने के कारण लिंग का मुख बंद रहता है, जो मूत्र करते समय धार के जोर से खुल जाया करता है । पीप गाढ़ी साफ लसदार निकलती है, कभी पीप के स्थान में छिछके निकलते हैं । यदि सचित चिकित्सा न की जावे, अथवा कुपथ्य तथा विषय आदि होते रहें तो यह अधिक दिन तक बना रहता है पीछे लिङ्ग में स्ट्रिक्चर (सकीर्णता) हो जाती है ।

आन्तरिक । दिन पर दिन दुर्बलता बढ़ती जाती है, अन्यान्य सहायक रोगों के कारण स्वास्थ्य (तन्धुहसी) में भी विघ्न उत्पन्न होता है ।

परिणाम व अन्त । यह रोग बलवान मनुष्यों में प्रथम २ अत्यन्त ही कठिन होता है । किन्तु सचित चिकित्सा से पूर्ण आरोग्य हो जाता है । और कभी सरल से कठिन में बदल कर बहुत दिन तक बना रहता है । किन्तु यह रोग कुपथ्य तथा स्त्रीप्रसङ्गादि से बदल बदल जाता

है, अर्थात् नये से पुराना पुराने से नया हो जाता है। ऐसे समय में लक्षण अधिक जोर नहीं पकड़ते, यदि रोगी बलवान् तथा चिकित्सा चरित्र की जाये तो दूर हो जाता है। नहीं तो अधिक समय तक बना रह कर भांति २ की सहायियां अर्थात् तगी इत्यादि पैदा करता है। (जैसा कि आगे संयोग तथा परिणाम में वर्णन करेंगे)। रोगी को जीवन के लाले पड़ जाते हैं।

निदान। लिंग की सदी सूजन से चेखा हो सकता है, किन्तु सुजाक में पीप कमकदार लसदार तथा छूतदार निकलती है और लक्षण तेज होते हैं। और यह साधारण चिकित्सा से दूर नहीं होता इस के लिए मुख्य चिकित्सा की आवश्यकता होती है।

चिकित्सा। दो प्रकार की चिकित्सा करनी चाहिए।

(१) नियमानुसार (रिजनाल ट्रीटमेंट^१) चिकित्सा (२) आत-ताई (एम्पेरीकेल^२) चिकित्सा।

(१) नियमानुसार चिकित्सा। यह दो विधि से की जाती है एम्पारटिव, व न्यूरेटिव (पूर्ण)।

एम्पारटिव चिकित्सा में, छूत को कम कर के बढ़ने से रोकना पड़ता है, जैसे तेज कास्टिक (जलाने वाली) औषधी पिचकारी द्वारा लिंग में पड़ना। किन्तु इस विधि से कठिन सूजन उत्पन्न होने का भय है। मत यह सर्व साधारण की रुचिके प्रतिकूल है। कोनेन का सास्पूशन (अर्ज) व "नाइजर" साइड का टानिक एसिड लोशन

1 Rational treatment.

2 Empirical treatment.

५२० छूतवाले रोग और उनसे बचने का उपाय ।

झाड़ी में मिला कर पिचकारी के द्वारा लिंग में पहुंचाना लाभकारी है ।

व्यूरेटिव (पूर्ण) यह स्थानिक शारीरिक दो प्रकार से की जाती है ।

स्थानिक । लिंग की स्वच्छता (सफाई) पर विशेष ध्यान रखना उचित है । पहिले व दूसरे दर्ज में लिंग में गरम पानी की पिचकारी दें । और जब पीप निकलने लगे उस समय विषहर औषधियों का व्यवहार लाभदायक है । यथा कार्बोअलिक लोशन, आयोडाफार्म, लुआव गोद में मिला कर, या परमिगनेट आफ पुटाय, और क्लोराइड आफ लिज लोशन, प्रत्येक एक २ सेन दस औंस के हिसाब से तैयार करके पिचकारी लगावे, परन्तु बहाव को रोकने वाली औषधि (एस्ट्रॅलेंट मेडीसिन^१) का व्यवहार न करना चाहिए । हा तीसरा दर्ज में जब पीप अधिक निकलती हो तो बहाव को रोकने वाली औषधिया काम में ला सकते हैं । इस काम के लिए, एलम लिज, शुगर आफ लेड, व टामिक, एसिड लोशन, आदि पिचकारी द्वारा लिंग में पहुंचाना लाभदायक है । पीड़ा की अधिकता में पेडू पर रेंक करना और ठंडा होना प्लास्टर और लोक लगाना लाभकारी है । या ऐसी औषधि जिस से पीड़ा कम हो, अर्थात् लाइकर मारफिया, उपरोक्त औषधियों में मिला कर पिचकारी करें । कभी टिंकचर आफ् आयोडिन भी लाभदायक होता है ।

पिचकारी का व्यवहार । रोगी को पीठी, या चूतरे, अथवा मोटा, कुरसी, वा तख्ते के किनारे पर पैर

लटका कर बैठायें । और घाए हाथ की उगलियों से लिंग की लड़ को पकड़ कर ठीक रखें इस लिए कि औपधि जो भीतर जाय वह मूत्राशय (मसाला) में न चली जाय । और घाए हाथ में शीशा, या जस्ता, की पिचकारी जिस में दो ग्राम तक औपधि भरी हो लेकर पिचकारी के मुंह को लिंग के मुंह में चुसेड़ कर धीरे २ औपधों का प्रवेश करें । और लिंग के चिर को सूखा रखें, जिससे औपधि बाहर न निकल जावे । दो निमिष तक रोक रखें उपरान्त निकाल दें ।

सूचना—पिचकारी लगाने के पहिले रोगी को पेशाब कर लेना चाहिए । यदि मूत्र की इच्छा न हो तो प्रथम गरम पानी से पिचकारी द्वारा लिंग को धो लें, जिससे रोगिल स्थान साफ हो जावे, और औपधि का असर अच्छी तरह हो । बड़ी पिचकारी से अधिक परिमाण में औपधि भर कर न प्रवेश करें । पिचकारी लगाने के उपरान्त अपने हाथों को अच्छी तरह से धो हारें, नहीं तो नेत्र आदि में लग जाने पर “प्रोलेप्ट अफथलमिया” का भय है । यदि कोई दूसरा मनुष्य इस विधि को करे तो वह भी इस सूचना पर ध्यान रखे । आवश्यकतानुसार इस विधि को तीन बार बार करें । एक ही परिमाण अथवा एक ही औपधि का अधिक दिवस उपयोग हानिकारक है । किन्तु औपधि की मात्रा बढ़ाते जायें, और आवश्यकतानुसार औपधि भी बदलते जायें ।

शारीरिक चिकित्सा । रोगी को परिश्रम न करने दें । पथ्य सादी बिना मसाले की देना उचित है । गर्म औपधियों से परहेज करें, और दवाई भी सुभावदार जैसे चिही

दाना, आश जी, व अलसी^२ का खेसादा आदि दें। खारी औषधियां अधिक लाभदायक हैं, सोडावाटर, कार्बोनेट आफ पुटैस आदि देना उचित है। यदि ज्वर हो तो सूजनी ज्वर की चिकित्सा करनी चाहिए। पीडा आदि में अफीम या उस का सत (चारफिया) लाभदायक है। जो रोग इसके सम्बन्ध से उत्पन्न हो उनकी यथोचित चिकित्सा करें। तीसरे दर्जे में खारी औषधियां दें और स्वास्थ्यरक्षण के नियमों का ध्यान रखें।

श्रातताई चिकित्सा। कोपेबा, तेलकुपेबा, और तेल कबाब चीनी, तेल चंदन के साथ पुटैस का सोल्यूशन, और नाइट्रिक ईथर और टिक्चर हाइसाइनस मिला कर पिलावें।

शोरा और कबाबचीनी मिलाकर भी खिलो सकते हैं, किन्तु ये दवाएं जीरे दर्जे में यानी "कठिन" में खिलाना लाभदायक है। प्राचीन इलाज बिना किसी योग्य वैद्य के करना बेरी समझ में अच्छा नहीं होता, तीसरी प्रत्येक बात पर ध्यान रखने से सर्वे साधारण को बिना वैद्य भी कुछ लाभ पहुंच सकता है। एक अंगरेजी नुस्खा जो आजमाया हुआ है यहाँ लिखते हैं।

कार्बोनेट आफ पुटैस	१० ग्रेन
आइल कोपेबा	५ ग्रूद
नाइट्रिक ईथर	१५ ग्रूद
लाइकर पुटैसी	१० ग्रूद

आइल सेंटल (चदन)	१० घूँघ
टिक्चर हाइसाइमस	१० घूँघ
पानी	१ बीस

यह एक सुराक तरुण पुरुष के लिए है, ऐसी दिन में ४ सुराक देने से कुछ दिन में लाभ होसकता है । तीन्नी वैद्य की अनुमति लेनाही अंष्ट होगा ।

प्राचीन सुजाक की शारीरिक चिकित्सा । यही चिकित्सा मुख्य है, क्योंकि इस में रोगी दुर्बल हो जाता है । और अटकलपधू चिकित्सा जिसका ऊपर वर्णन कर आए हैं अत्यन्त लाभदायक होती है । यदि रोगी कुछ बलवान है तो बाइहोराइड आफ सरकरी (दार चिकना) डिक्कगन (काय) सिकोना के साथ दें और निर्वलता में, बलदायक (टानिक^१) रक्तशोधक (आल्ब्रेटिब^२) अर्घात् छोड़े मिश्रित औषधिवा या आइडीन, कोमेन, मछली का तेल, वा घोरा, नमक, गंधक, आदि का सेवास आदि देना उचित है । जब बहुत पुराना पड़ गया हो तो फिटकरी (एलम) टिक्चर काइनो, टिक्चर कैथेरेडिन्, आदि देना लाभदायक है । जब आरोग्य होने को होता है तो पीप कम होती जाती है, और कुछ दिन में आराम होजाता है । जिम्नु पथ्य का प्रबंध मुख्य है, पथ्य सादी बिना मसाले की दें । लाल मिर्च और नदिरादि से दूर रहें । सूत्र छाने वाले पथ्य जैसे चाँवल, बर्फ आदि दें । वियय से बचते रहें ।

प्राचीन सुजाक की स्थानिक चिकित्सा । शिग को

1 Tonic

2 Alterative

साफ रखें । बहाव को रोकनेवाली औषधियाँ जैसे टानिक एसिड, टिक्चर स्टील, परिमिगनेट आक पुट्रेस, आदि लाभदायक हैं । जब किसी विधि से मुजाक के घाव को लाभ न हो तो सूनी^१ के द्वारा कास्टिक (जलाने वाली) औषधी घाव पर लगाने से और तगी (स्ट्रिक्चर^२) की चिकित्सा करने से शीघ्र लाभ होता है ।

बचने का उपाय—इस रोग से बचने का सरल उपाय यही है कि ऐसे रोगों के स्पर्शास्पर्श से जहाँ तक हो सके बचें, रोगी के नपड़े लत्ते अथवा उसके हाथ की छुई हुई वस्तु को से दूर रहने ही में नगल है । ऐसे रोगी के पेशाब पर पेशाब भी न करें । और न ऐसी की दी औषधि का उपयोग करें, क्योंकि इस रोग के फल से बड़े २ भयानक अन्याय्य रोग उत्पन्न होते हैं जिनको आगे लिखेंगे, अतः एव इसकी चिकित्सा भी बड़ी सावधानी से करनी चाहिए ।

Complication of Gonorrhoea

मुजाक के फल से उत्पन्न रोग । इसके फल से दो प्रकार के रोग उत्पन्न होते देखे गए हैं ।

(१) सूजन । जिसमें एपीडिडमाइटिस^३ (Apidedmitis) आरकाइटिस^४ (Architis) प्रासटाइटिस^५ (Prostatis) सिस्टाइटिस^६ (Cistitis) वेलानाइटिस^७ (Bealanitis) पासथाइटिस^८ (Pasthatis) कभी निफ्राइटिस^९ (Nifritis) पाए जाते हैं ।

- | | | |
|----------------|----------------------|------------------|
| १ धासी सलाई | ४ थंडलीय की सूजन | ८ लिंग की सूजन |
| २ Stricture | ५ गांठों की सूजन | ९ गुर्दे की सूजन |
| | ६ मूत्राशय की सूजन | १० रक्त बहना |
| ३ पेड़ की सूजन | ७ लिंगके पील की सूजन | |

(२) पीप पड़ने वाले रोग । इनमें लिङ्ग के किसी भाग पर कोढ़ होता है ।

(३) रक्तमूत्रावी रोग । (हैनरेजिक)-यूरेग्रल हेमरिज (लिंग का रक्तस्राव) ।

(४) फंकशनेल । इर्रिटेबिलिटी आफ क्लोहर,^१ (मूत्राशय का खराब) काहीं,^२ (बिना इच्छा ही के लिंग की कठोरता) रिटेंशन आफ युरीन^३ (मूत्र का खूब २ टपकना) काह मोसिस,^४ (लिंग के निर पर के चमड़े का खुट जाना वा सग हो जाना) पैराकाइमोसिस^५ (लिंग के चमड़े का ऊपर चढ़ जाना) ।

(५) कन्टेमिन्स (छूतदार) अर्थात् छूत लने से आंख में दाने दार फुंसिया पड़ जाती हैं जिस को कन्टे-लिन्स प्रेसेंट अफ फलमिया^६ कहते हैं ।

(६) सिम्पेथेटिक । रामो की गिलटियो का सूजन जिस को सिम्पेथेटिक ब्यूबो^७ (बद) कहते हैं ।

फल ।

स्ट्रिक्चर, (तगी) स्ट्रेलिटी, (घथ्या) इम्पोटेंसी, (नपुन-कता) लिंग पर, मस्से हो जाते हैं । बाये वैद्य गटिया आख के रोग, और चर्म रोग भी होना बतलाते हैं । मुझाक के फल से सत्पल नामा प्रकार के रोगों का वर्णन न करके यहाँ केवल मुख्य २ रोगों का वर्णन सत्तेप में करेंगे ।

१	Irritability of bladder	५	Peraphymosis.
२	Chordee.	६	Prolent ophthalmia.
३	Retention of urine.	७	Sympathetic Bubo
४	Phymosis.		

५२८ छूतवाले रोग और उनसे बचने का उपाय ।

होने लगती है जिस के कारण आंख बंद रहती है । आंख की सफेदी पर घाव हो जाता है । यदि सावधानी न की जाय तो दूसरी भी ग्रसित हो जाती है । कभी यह सूजन बढ़ कर आंख ही को ले खालती है ।

चिकित्सा । सफाई का खूब ध्यान रखें । आंख को गर्म जल से ३ या ४ बार धो दिया करें । लेकिन ध्यान रखें कि पानी बह कर दूसरी आंख की ओर न जावे । जब कीचड़ अधिक निकलती हो तो तेज कास्टिक लोशन (एक ग्राम एक औंस वा दो ग्राम एक औंस) इस विधि से लगावें कि कोखल पपोटे तथा किनारे की लाल झिल्ली (कनकृद्वा^१) पर लगे, डेले की सफेदी पर न लगने पावे । लगाने के उपरान्त पानी से धो डालें । यह विधि दिन में एक वा दो बार करनी चाहिए । फिर हलका कास्टिक लोशन (पाच ग्राम एक औंस वाला) टपका दिया करें । किन्तु ध्यान रहे कि डेले की सफेदी जिस को कार्निवा कहते हैं न बिगड़ी हो । पोस्ते की दोही से सेंक करना वा हलाहोना का सेव लगाना भी उचित है ।

यदि डेले का श्वेत भाग भी रोगग्रसित हो तो एट्रोपिन atropin लोशन का व्यवहार करें । यदि इन विधियों से कुछ आराम जान पड़े तो कास्टिक वा एलम जिक लोशन (दो ग्राम एक औंस वाला) डाला करें । कनपटी पर जोकें लगाना भी अच्छा है ।

सूचना । इस रोग में चकाचौंधी अधिक होती है । अस्तु आंख देखने के लिए जोर से न खोलें क्योंकि श्वेत भाग के फट जाने का खड़ा भय है । इस रोग का कीचड़

भयङ्कर छूतदार है, अस्तु रोगी की दूसरी निरोगी तथा अपनी आस को बचाना आवश्यक है ।

मुलाक़ जनाना (स्त्रियों का)

कारण तथा लक्षणवि सब पुरुषों के समान ही हैं, केवल अंतर है तो बताना ही है कि स्त्रियों में भग वा सस के किनारे रोगप्रसिप्त होते हैं । कभी २ गर्भाशय सस रोग प्रसिप्त हो जाता है । पीप भग से निकलती है । इस रोग के फल से पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों की मेट्राइटिस (metritis) भग की सूजन या ओवेरी (ovaries) वा फिलोपियन व्यूथ की सूजन, कभी प्रिटोनाइटिस और सस-पिलविक सेल्मुलाइटिस (Subpelvic Cellulites) हो जाता है ।

फल-सूजन के भाड़े^१ के उत्पन्न होने से भग तथा गर्भाशय को छेद लग हो जाता है । और प्रायः भग के दोनो किनारे भापस में जुट जाते हैं । जब तक भग अथवा गर्भाशय से पीप निकलती रहती है, संतान नहीं पैदा होती । यह एक मुख्य कारण बध्ना होने का है ।

निदान । अन्याय भग रोगों में भी भग से पीप निकलती है अस्तु सुलोक से चेका हो सकता है ।

यदि विषय के उपरान्त सूजन जलन आदि उत्पन्न हों, और पीप अधिक मात्रा में पीले रंग की निकलती हो अथवा पीप में छूतका असर पाया जावे और साधारण चिकित्सा से लाभ न हो, तो निश्चय मुलाक़ है ।

इलाज । घिसा ही है जैसा पुरुषों के मुलाक़ में वर्णन कर-
आए हैं ।

स्थानिक चिकित्सा । इसमें बड़ी लाभदायक है । जघात दवाओं की पिचकारी भग में लगाना चाहिए । घाव हो तो कास्टिक, या टेनीक एसिड ग्लिसरीन मिलाकर लगावे । शारीरिक चिकित्सा पुरुषों की प्राप्ति करें ।

साफ्ट शैंकर SOFT CHANCER

इस को फाल्ज शंकर या नर्म घाव उपदश भी कहते हैं ।

परिभाषा । यह एक प्रकार का नर्म घाव है जो लिंगेन्द्रिय पर स्त्रीप्रसंग के समय एक छूत के प्रवेश होने से उत्पन्न होता है । यद्यपि घाव के साथ किसी प्रकार की शारीरिक शिकायत इस में नहीं उत्पन्न होती इस लिए इस को “नन इन्फेक्टिङ् सोर” Non infecting sore कहते हैं । इस के घाव के किनारे नरम होते हैं इसी लिए इसे “साफ्ट शैंकर” कहते हैं ।

मूल कारण । एक मुख्य छूत के प्रवेश होने के कारण तीन दिन से दस दिन के भीतर स्थानिक प्रभाव प्रगट होता है । किन्तु किसी प्रकार की शारीरिक शिकायत नहीं होती ।

लक्षण—घाव तीन प्रकार से होता है । या तो प्रसंग के समय घुँघट छिन जाना है या फट जाता है । या छूत का विष छग कर कुंसी निकल आती है । जिस को “विनिरिबल पावस” आर्थात् आस्रशकी चेचक कहते हैं । और यह कुंसी बनने से कुछ ऊँची और स्वच्छ जल से पूर्ण होती है । उपरान्त जल पीप हो जाता है । और कुंसी के चतुर्दिक् एक साल क्षत उत्पन्न हो जाता है । पश्चात् कुंसी फट कर पीप निकलने लगती है । यह पीप शरीर के निम्न

भाग पर लग जाती है वहाँ भी उसी प्रकार खुनी या घाय
रूप हो जाते हैं । यह दशा उपर्वश (मातशक) के
कठोर घाव में नहीं पाई जाती । यही कारण है कि नर्स
प्रकार का घाव कई स्थानों पर पाया जाता है । अधिक
कर के लिंग के घूँघट के भीतर या ऊपर, कभी कभी अह-
कोश पर या लगाम के ऊपर, और औरतो के जग में या गर्भा-
शाय के भीतर, पाया जाता है । कभी २ चोटों या जराहों
की सगली पर पीप लग जाने से भी हो जाता है । रूप
इस घाव का प्रायः गोल या अष्टाकृति होता है । लेकिन
प्रायः कई घाव आपस में मिल जाते हैं । अस्तु ये बराबर
किनारे कटे हुए और मुलायम और टेढ़े, प्रायः पीप,
कभी छिछड़ेदार पीप, से ढके होते हैं । यदि शरीर निर्बल
है और किसी प्रकार की खराब पहुँचाई जावे तो घाव सह
कर शीघ्र बढ़ने लगता है जिस से सम्पूर्ण लिंग गल सहकर
निकल जाता है । और इस के प्रभाव से जाघों की गिलटियाँ
सूख जाती हैं और इन में पीप भी पड़ जाती है, सिंघाव मुखार
के और किसी प्रकार की शारीरिक पीड़ा नहीं होती ।

निदान—कठोर और मुलायम जाघों का निदान
आगे करेंगे । जब सिफलिस का अरुण लिंग के भीतर
होगा तो सुजाक से चेला हो सकता है । जिस का निदान
यों है कि सुजाक में कुछ मुखमार्ग में बाहर टटोलने से
ताँत की भाँति कठोरता पाई जावेगी । और मातशक में
केवल एक ही स्थान पर कठोरता पाई जावेगी । और
सुजाक की पीप कुछ पीली और अधिक परिमाण में होगी,
इस के विपरीत सिफलिस की पीप गाढ़ी, लोहू मिश्रित

५३२ छूतघाले रोग और उनसे बचने का उपाय ।

कम परिमाण में पाई जायेगी ।

चिकित्सा । स्थानिक और शारीरिक दो प्रकार की है ।

१ स्थानिक । मुख्य सफाई है । घाव को साफ रखना चाहिए । आरम्भ में घाव को कास्टिक^१ से जला दें और एन्टीसेप्टिक लोशन^२, वाटर ड्रेसिंग^३ या पुलविस लगावें जिस से छिछड़े दूर हो जावें । जब घाव साफ जान पड़े तो पारे का सरहस या और साधारण सरहस जैसे जिंक आइडमैन्ट आदि लगावें । यदि सड़ने वाला घाव है तो अफीम, गोलार्ड लोशन, वा आयोडोफार्म आदि लगावें । जब अच्छा न हो और घाव सड़ता ही जावे तो तेज़ योरे के तेजाब^४ से जला कर कोयले की पुलविस आधे उपरान्त जैसी दशा हो वैसी चिकित्सा करें । इस घाव का दाग भीरोग चर्म की अपेक्षा कुछ नीचा होता है क्योंकि घाव टेढ़ा होता है ।

२ शारीरिक चिकित्सा । नर्म घाव के उपद्रव में शारीरिक चिकित्सा की प्रायः आवश्यकता नहीं होती, तीनी यदि खुलार हो तो उस की यथोचित चिकित्सा करनी पड़ती है । निर्बलता में शलदायक औषधियों का सेवन उत्तम है । स्वास्थ्य रक्षण के नियमों का ध्यान रखें ।

इस के फल से चार रोग उत्पन्न होते हैं ।

१ फाइमोसिस, (घूँपट का बढ़ हो जाना) Phymosis

१ इस की बन्ती बाजारों में बिकती है ।

२ छूतघावक जल ।

३ पानी बाधना ।

४ नाइट्रिक एसिड ।

२ ठ्यूयो, (जांघ की गिलटियों का मूज जाना) Bubo.

३ निकेट्रियम, (सुकड़ा हुआ दाग) Scatrix

४ चारटस् या कास्टीलोमा, (मस्से) आदि Warts and

Condiloma

(१) की चिकित्सा काट देना ही उचित है जिस से, भीतर का घाव खुल जाये और उन पर औषधी लगाई जा सके ।

(२) की चिकित्सा सुजाक में वर्णन कर आए हैं ।

(३) कोई चिकित्सा सत्तम नहीं है ।

(४) की चिकित्सा यह है कि मस्सों को तेज कास्टिक से जला दें या काट कर निकाल दें ।

कास्टीत्यू शनेल विनिरिएल डिजिजेज ।

शारीरिक उपदंश (स्वातशक जिस्मी)

CONSTITUTIONAL VENEREAL DISEASES

परिभाषा व मूल कारण । एक प्रकार का विष स्त्री-

प्रसव द्वारा या अव्याम्य मार्गों से रक्त में प्रवेश कर अपना प्रभाव प्रगट करता है और प्रायः लिङ्गेन्द्रिय वा दूसरी स्थानों में घाव उत्पन्न करता है । इस विष से जो रोग उत्पन्न होता है, उसे सिफलिस Syphilis आतिथक वा उपदंश—कहते हैं । किन्तु इस को जाना नामों से बँधो ने सम्बोधन किया है । अस्तु जब घाव लिङ्ग पर हो, और कोई शारीरिक क्रोध प्रत्यक्ष में न हो, चाहे गुप्त में अपना असर प्रकाश कर रहा हो तो प्राथमरी Primary Syphilis सिफलिस (प्रारम्भिक उपदंश = आतशक इच्छदाई) और जब इस दर्जे से निकल कर शारीरिक परिणाम प्रगट करे तो उस को कांसीत्यू शनेल सिफलिस (शारीरिक उप-

दश = आतिशयक जिसी) कहते हैं । वास्तव में यह दोनों एक ही विष से उत्पन्न होते हैं, तो भी दोनों को पृथक् वर्णन करेंगे ।

१ प्राइमरी सिफलिस (प्रारम्भिक उपदंश) Primary Syphilis । परिभाषा तथा मूल कारण ऊपर वर्णन कर चुके हैं ।

कारण । इस रोग से ग्रसित स्त्री से प्रसंग करना या अन्यान्य भाति से सिफलिस का विष खून में पहुँचना ही मुख्य कारण है ।

लक्षण । जब विष रक्त में प्रवेश करता है, तो प्रायः लिंग पर अथवा दूसरे स्थान पर (जिस स्थान से विष प्रवेश हुआ हो) दस बीस या ४० दिन के भीतर फुन्सी या खुरीब के मुकाम पर सूजन हो जाती है उपरान्त घाव गोल रूप का उत्पन्न हो जाता है, जिस के किनारे कठोर और आरम्भ में चमड़े से भिले, पश्चात् कुछ ऊँचे हो जाते हैं, जिस से पतली पीव निकलने लगती है, जो सभी रोगी के दूसरे स्थानों में लगने से भरम घाव नहीं उत्पन्न करती, कारण यह कि रोगी छूत से मख सिख पूर्ण होता है इस से रक्त उस को नहीं चाहता । यही कारण है कि आतिशय वाले रोगी में प्रायः एक ही घाव होता है, कभी दो भी हो जाते हैं । इस रोग का निदान डाक्टर हन्टर ने पूर्ण रूप से किया है इसी कारण ऐसे घाव को "हटेरिअन् शीकर" कहते हैं । इस में किनारे घाव के कठोर होते हैं, तथा मध्य में भी कुछ कठोरता पाई जाती है, इस कारण इन्ड्यूरिटिस या हार्ड शैंकर अर्थात् कठोर घाव उपदंश—कहते हैं, और छूतदार होने से इन्फेक्टिड

और, आरम्भिक होने से प्राश्मरी सिफलिस, कहा करते हैं ।

यह चाव प्रायः पुरुषों के लिंग और अङ्कोप पर और स्त्रियों के भग तथा गर्भाशय में होता है, और निरोगी पुरुष के सगली मुख आदि में भी छूत के छग जाने से इसी प्रकार का चाव उत्पन्न हो जाता है । जब कि चाव लिंग पर है तो जाघ की गांठें और यदि हाथ में है तो काख की गांठें सूज जाती हैं और चाव घिपयादि करने या चिकित्सा उचित न होने के कारण द्रिगह कर इन्फ्लेमेट, फेजीडेनिक, वा सलफिंग अलसर में बदल जाता है । यह चाव तीन हफ्ते से छै महीने तक रह सकता है किन्तु इतने समय में रोग शारीरिक होने का पूर्ण भय है, अर्थात् आरम्भिक तथा शारीरिक दोनों एक ही रोगी पर सवार हो जायेंगे । कभी दो ही सप्ताह में रोगी के चाव आदि अच्छे हो जाते हैं, देखने में भला भगा दिखाई देने लगता है लेकिन शारीरिक उपद्रव (आतशक बिस्मी) के घंटे में पड़ जाता है ।

कम्पलीकेशन । रोग का फल केवल बद् (गांठ) है जिस को "सिफिलिटिक^१ ट्यूमो " कहते हैं । यह अच्छे होने पर भी बनी रहती है । इसी से सिफलिस का निदान हो जाता है ।

गांठों (गिष्टियो) का निदान । झुआकी ट्यूमो में लक्षण आरम्भिक होते हैं, कभी गांठ बिल्कुल आराम हो जाती है, और कभी उस में पीघ पड़ जाती है । पीघ सी इस की छूतदार होती है ।

सिफिलिटिक ट्यूमो (उपद्रवी गांठ) में, जो मरम प्रकार के चाव के कारण छूत के प्रवेश से होती है, लक्षण नवीन

५३६ छूतवाले रोग और उनसे बचने का उपाय ।

होते हैं, प्रायः उस में पीछ पड़ जाती है । इस की पीप भी छूतदार होती है । कठोर प्रकार के उपदृशी घाव के कारण जो गांठ निकलती है वह भी छूत के प्रवेश ही से होती है । इस में प्रायः नमीम लक्षण (जैसा गरम घाव में वर्ण कर आए हैं) नहीं होते । इस में पीप प्रायः नहीं पड़ती और यह आरोग्य होने के उपरान्त भी बनी रहती है ।

निदान देनेों प्रकार के घावों का ।

सेफ्टर्शेकर (नरम घाव) हार्ड शेंकर (कठोर घाव)

१ रोगी के कथनानुसार स्त्री १ छूत के प्रवेश करने उप-
प्रसंग के उपरान्त ३ दिन से रान्त १० से ४० दिन का
१० दिन के भीतर या और और अधिक समय के उपरान्त
शीघ्र घाव आदि का होना घाव उत्पन्न होता है ।
सिद्ध होगा ।

२ घाव प्रायः छिल जाने २ प्रायः कुसी प्रगट होती
वा कुसी हो कर फूट जाने है, कभी खरोब (खुरबट)
से होता है । आदि से भी हो जाता है ।

३ घाव प्रायः घुंघट वा ३ प्रायः लिंग के चिर वा
लगास पर पाया जाता है । लह या उस के मुख के भीतर
और स्त्रियों में भ्रग वा गर्भा-
शय में पाया जायगा ।

४ घाव एक से अधिक हुआ ४ प्रायः एक घाव कभी दे।
करते हैं ।

५ घाव साफ, उस के किनारे ५ घाव की सतह कठोर
टेढ़े कटे हुए गरम, होते हैं । सभरी हुई, किनारे कुरी की
भाति होते हैं ।

६ बहाव जैसे पीप और ६ पीप पतली और सिवाय दूसरे के लिए छूतदार होती है। रोगी के सब के लिए छूत-
दार होती है ।

७ गांठ में पीप पड़ जाती ७ इसमें यह सब कुछ नहीं है और छसण नवीन होने से होता, गांठ कठोर हो कर घनी रहती है ।

८ साधारण चिकित्सा से ८ साधारण चिकित्सा से आरोग्य हो जाता है पारा लाभ नहीं होता। इसमें पारा देने की आवश्यकता नहीं मुख्य औषधि है । होती ।

९ घाव आराम हो जाने ९ आराम होने पर कुछ पर किसी प्रकार का शारी- समय उपरान्त शारीरिक क्लेश रिक पड़ नहीं होता । प्रारम्भ होते हैं ।

चिकित्सा । इस की छूत को दूर करना सहज नहीं है । हां यदि छूत को असर के उपरान्त कोई नवीन घाव न हुआ हो और गांठें (बद) न सूजी हों तो उचित चिकित्सा से लाभ हो सकता है और इस का विष भी दूर हो सकता है । किन्तु जब घाव विद्यमान (मौजूद) हों और गांठों तक असर पहुंच गया हो तो इस का दूर करना असम्भव है । यद्यपि चिकित्सा से घाव को लाभ हो सकता है और शारीरिक छसणादि भी अच्छे हो सकते हैं, तथापि यह विष समय पा कर अपना प्रभाव अवश्य दिखावेगा ।

चिकित्सा दो प्रकार की है, स्थानिक और शारीरिक ।

स्थानिक । आरम्भ में घाव को नाइट्रिक एसिड (शोरे का तेलाव) कार्बोलिक एसिड, या कार्सिक की

पेंसिल से दाग देना चाहिए जिस से कि जहर जल जावे । बाकी इफीम कैची से काट देना लाभकारी बताते हैं । लेकिन यह घोर क्षेशदायक युक्ति है । इस लिए प्रायः कास्टिक का लगाना ही अच्छा समझते हैं । यदि घाव बिगड़ा हो अर्थात् (स्लफ = बदगोश्त) हो तो बाटर झेसिंग (पानी से झेस) वा पुलिटिस आदि छिछड़े दूर करने को चाहे । यदि सड़ने की दशा में हो तो उस की घैरी ही सचित चिकित्सा भी करें । जब घाव अच्छा हो तो "ड्रैक" वा "यलो" वाश (काला व पीला घेने का जल) से वा ब्लू आइन्टमेन्ट, डाइल्यूट सिटरन आइन्टमेंट, आदि लगावें । परीक्षा से जाना गया है कि ऐसे समय में पारे से अधिक लाभ होता है । और गाढो पर टिकचर आफ आयोडीन वा ब्लू आइन्टमेंट की मालिश करें । पुलिटिस आदि भी शीघ्रन हेतु लगते हैं ।

नोट—मैं ने अपने रोगियों को केवल घाव को एक बार कार्बोअलिक एसिड से दाग कर कार्बोअलिक आइल (कार्बोअलिक आइल ४० यूद तिझी का तेल ओची छटाक) लगाया और गाढो पर रसौल (धारबरी) अफीम का लेप कर घतूरी के पत्ते से सेक कर बाधा, इस से सैकड़ों को लाभ हुआ है ।

शारीरिक चिकित्सा । यह दो प्रकार से की जाती है, एक तो पारे से दूसरी बिना पारे के, जिस का वर्णन शारीरिक उपदंश (कांस्टीट्यूशनेल सिफलिस) में करेंगे ।

२ कांस्टीट्यूशनेल सिफलिस ।

Constitutional Syphilis.

शारीरिक उपदंश-आतिथक लिस्मी

परिभाषा । ऊपर वर्णन कर आए हैं ।

मूलदशा । जब किसी प्रकार से उपदश का विष रक्त में प्रवेश करे तो धीरे २ कुछ समय उपरान्त शारीरिक उपदश का प्रकाश होता है ।

कारण । रोगित स्त्री के साथ प्रसंगोपरान्त आतिशक का विष रक्त में प्रवेश करना या अन्य रोगी की पीप, शूक, दूध, आदि का प्रवेश करना इस रोग का मुख्य कारण है । यदि आतशकी स्त्री का दूध किसी तन्दुरुस्त बच्चे को पिलाया जावे तो उसे भी शारीरिक उपदश हो आवेगा । इसी प्रकार वह अनुप्य जिस में शारीरिक उपदश विद्यमान हो, चाहे उस के छिन्नेन्द्रिय पर घाव न हो, और वह किसी स्त्री से विषय करे और बालक उत्पन्न हो तो उस पर भी शारीरिक उपदश का प्रभाव ज़रूरी ज़रूरि पाया आवेगा । इसी प्रकार आतिशक वाले से विष लेकर किसी निरोगी के शरीर पर लगावे तो उसे भी आतिशक निस्सी (शारीरिक उपदश) अवश्य हो आवेगी ।

ऊपर के वर्णन से ज्ञात हुआ कि शारीरिक उपदश दो प्रकार का है एक स्वउपार्जित अर्थात् जिसे रोगी ने स्वयं प्राप्त किया हो, दूसरा पैतृक है । इसी से पहिले को “एक्वायर्ड कांस्टिट्यूशनल सिफलिस” Acquired Constitutional Syphilis और दूसरे को हेरीडेटरी कांस्टिट्यूशनल सिफलिस Hereditary Constitutional Syphilis कहते हैं ।

Acquired Constitutional Syphilis.

(१ प्रकार) एक्वायर्ड कांस्टिट्यूशनल सिफलिस ।

स्वउपार्जित शारीरिक उपदंश ।

परिभाषा—सरुणता के समय उपदंश का विवरण में प्रवेश कर नाना प्रकार के बुरे फल प्रगट करता है ।

कारण—जवानी में प्रारम्भिक उपदंश (प्राइमरी सिफिलिस) का होना, स्त्रियों में आतिशकी रोगी के प्रसव से गर्भ रहना या आतिशकी रोगिणी का निरोगी बालक को दूध पिलाना; प्रसवकाल में स्त्री के सग के ऊपर घाव विद्यमान होना, जिसकी पीप लग जाने से या रोगिण दाई का दूध पिलाने अथवा आतिशकी बच्चे के लिम्फ का टीका लगाने से भी यह रोग होजाता है । इसी को 'इन्फेन्टायल सिफिलिस' (Infantile Syphilis) कहते हैं ।

लक्षण—लक्षण को पृथक्तानुसार तीन दर्जों में वर्णन करेंगे । (१दर्जा) वह है जिसको छत का काल कहते हैं, अर्थात् छ सप्ताह से छ मास तक, कभी बर्बा की नीबत पहुच जाती है । इतने समय में प्राइमरी सिफिलिस का हो कर अच्छा हो जाना सम्भव है, किन्तु नाँची की गाँठें, निनमें विष विद्यमान रहता है, सूजी रहती हैं । और जब दूसरा दर्जा समीप आता है तो रोगी की दशा फिर बिगड़ जाती है, अर्थात् खाँसी, जुकाम, और आँति २ की शिकायतें शुरू होजाती है । किन्तु पहिला दर्जा कईएक रोगियों में कम या अधिक मी देखा गया है । यदि रोगी बलवान तथा तन्दुरुस्त है और प्रारम्भिक निमित्ता सबित की गई है तो विष गुप्त हो जाता है, और रोगी को जान पड़ता है कि रोग अच्छा होगया, किन्तु रोग समय पाकर फिर उपस्थित हो जाता है । अब इतना अवश्य है कि यह विष दिन पर दिन

निर्बल अवश्य हो जाता है । अर्थात् प्रारम्भ में जीसा कोर इसका रहता है वैसे अन्त में नहीं । क्योंकि प्राय देखा गया है कि स्त्रियो में आतिशयक का विष विद्यमान था और गर्भ भी रह गया और दो एक महीने के उपरान्त विष के प्रभाव से गर्भ गिर गया है किन्तु कुछ काल या कर फिर ऐसा नहीं हुआ । अर्थात् दिन २ विष निर्बल होते २ कभी अठ्ठा-साँचा कभी सत्तयासा गर्भ गिरने लगा । कभी पूरे दिनों का होकर यच्चा मुर्दा कभी जिंदा पैदा हुआ । अन्त में निरोगी यच्चा भी उत्पन्न हुआ । इस से साबित है कि यह विष दिन २ निर्बल भी अवश्य होता जाता है । हा इस के विष का प्रभाव पीछी दर पीछी तो अवश्य पहुँचता है । यदि उचित उपचार किया जावे तो यह दोष भी दूर हो सकता है ।

(२ दर्जा) इस दर्जे में साधारण निर्बलता जिसको सिफलेटिक केकेबिसया Syphlatic Caecacia कहते हैं और ऊपर जिसे Syphlatic Fever सिफलेटिक फीवर (उपदर्शी ऊपर) और गठिया, जिस को सिफलेटिक रूमाटिज़्म Syphlatic Rheumatism कहते हैं, उत्पन्न होते हैं ।

(अ) केकेब्रिक एक्जेशन (निर्बलता)—रोगी बिना कारण दिन २ निर्बल होता जाता है, रगत मैली तथा कासी हो जाती है, पाचन शक्ति बिगड़ जाती है, पेट में फूलन व दर्द, कब्ज की शिकायत रहती है । स्वाद बिगड़ जाता है, कोई वस्तु अच्छी नहीं लगती, स्वभाव चिड़चिड़ा हो जाता है । नींद अच्छी तरह नहीं आती, गिलटिया मूत्र आती हैं, प्राय शरीर पर इधर उधर थकने मरो के

५४२ सूतघाले रोग और उनसे बचने का उपाय ।

आकार के प्रगट होते हैं, जो कुछ दिन बाद अच्छे भी जाते हैं। बाल सिर के पतले निर्धूल, तथा हलके होकर नि जाते हैं, और कैफियत "गज" की हो जाती है।

(ख) क्विबरायत एफेक्शन (ज्वर प्रकोप)-रोगी भी गर्मी बतलाता है, घाम नहीं सह सकता, आरोग्य अवस्था की अपेक्षा शारीरिक सज्जता (हरारत) आगे या एक ह घड़ी रहती है। सुबह से शाम तक के भीतर चढ़ती उतर रहती है। कभी छात ही नहीं होता कि ज्वर कम हो और कम उतर गया। अन्तक में पीडा, चक्कर और मुख में गलफटों में घाव हो जाता है।

(ग) रुमाटिक एफेक्शन (लक्षण गठियां)-विशेष चूठना और कुहनी के जोड़ों में, और कभी सब छे बड़े जोड़ों में दर्द पैदा हो जाता है और साइनोब्रिय फ्लिक्सी तथा आंते में सूजन हो जाती है। पैर के पंजों बेहोली हो जाती है। रात में पीडा अधिक होती है और कम किन्तु रात को दर्द अधिक, सिफलेटिक गठिया का लक्षण निदान है। कभी दर्द फूले में, जिस को साइटीक कहते हैं, या छाती के नख में जिस को मूटीडीना कहते हैं, होता है। छाती का हड्डी, टांग की हड्डी तथा हड्डी की हड्डी को दबाने से दर्द होता और रोगी चींक पड़ता है। च्यान रहे कि ऊपर कहे हुए लक्षणों में से कभी एक, दो, और कभी कुछ, पाए जाते हैं। एक बार अच्छे हो कर कुछ समय के उपरान्त पुन सताते हैं। इसी प्रकार दो तीन बार छोटने पर तीसरे दर्द की बारी आ जाती है।

१ गांठों और जोड़ों पर अस्तर लगाने वाली मिस्री

(३ दर्जा)—इसमें रोगी के सम्पूर्ण शरीर की बनावटों में रोग भर जाता है । अस्तु वह समय जब कि आतशक के जहर का असर केवल चर्म तथा लुभायी किण्वी तक रहता है, सेकेन्डरी (Secondary) सिफलिस, और जब इसी और शरीर के भीतरी विभाग भी रोगग्रस्त होते हैं तो टर्शरी सिफलिस (Tertiary Syphilis) कहा जाता है । इस दर्जे में खानेदार किण्वी व पद्यों में स्थान स्थान पर गुमटिया-बताही-पैदा हो जाती हैं, जिनको गुमेटस ट्यूमर Gumatus tumour कहते हैं । अतः को रोगी के भीतरी विभाग व इसी में रोग का प्रभाव प्रवेश करते ही मृत्यु की वन आती है ।

निदान—शारीरिक आतशक और अन्यान्य रोगों के लक्षणों में बहुत समता है । इस कारण समसे निदान करना आवश्यक है ।

शारीरिक उपदर्श

अन्यान्य शारीरिक रोग

(१) पूर्व ही से प्राइमरी सिफलिस का प्रमाण मिलेगा । न होंगे ।
(१) इन में यह लक्षण और नाचों की शोथन गिराटिया सूनी और कठोर मिलेंगी, लिङ्गेन्द्रिय देखने से उपपर तबि की रगत के घाव के बिम्ब पाए जायेंगे ।

(२) रंग चमड़े का बदला (२) निर्बलता का कारण हुआ और शरीर बिना किसी प्रत्यक्ष घात होगा, अर्थात् प्रत्यक्ष कारण के दिन दिन कवर, अपच, गठिया, आदि ।

५४४ छूतघाले रोग और उनसे बचने का उपाय ।

निर्बल होता जाता है । चमड़े के रंग में कोई परिवर्तन नहीं होता ।

(३) लक्षण सिलसिले से और नियमित नहीं होते, अंत भी अनियमित होता है । (३) लक्षण सिलसिलेवार नियमित और अंत भी नियमित होता है ।

(४) छाती के सामने की हड्डी आदि पर दधाने से दर्द होगा और मुड़ की आँखों पर घाव मिलेंगे । (४) यह आँखों में नहीं पड़े जाती ।

(५) परिणाम मुख्य प्रकार का विशेषकर हड्डी व भीतरी विभाग में पाया जाता है । (५) प्रत्येक का पृथक्-प्रत्येक से स्वर में तिप्परी का वा नामा, गठिया में हृदय रोग आदि परिणाम में पाया जाता है ।

(६) पारे से चिकित्सा करनी लाभदायक है । (६) पारे से मुक्तान होता है किन्तु मुख्य २ रोगों में मुख्य औषधि दी जाती है ।

चिकित्सा—आगे वैसे पारे से, आगे बिना पारे के, चिकित्सा करते हैं । लेकिन परीक्षा से पारा इस रोग में मुख्य औषधि पाई गयी है । किन्तु यह कुछ दशाओं में बर्जित भी है, जैसा आगे वर्णन करेंगे ।

(१) पारे की चिकित्सा । पारे की चिकित्सा उस समय हानिकारक है जब रोगी निर्बल हो और भीतरी विभागों (जैसे तिप्परी) ज्वर, गुर्दा, में पुरानी सूजन हो, वा आतिशय के विष का असर हड्डी व भीतरी विभाग तक पहुंच गया हो ।

इसके विपरीत इसका देना लाभदायक है । पारे का व्यवहार चार प्रकार से करते हैं । खिलाना, लगाना, भाप द्वारा पहुँचाना, घनहू के भीतर प्रवेश करना ।

खाने के लिये प्रायः कैलामिस, चेपीहर, चीन और रेह, आयोडाइड आफ सरकरी, बाइक्लोराइड आफ सरकरी (दार चिकना) वा ग्लामर्स पिण्ड (ग्लामर साइड की गोली) आदि देते हैं । ध्यान रहे कि पूर्व काल में इस औषधि को ऐसी असावधानी से व्यवहार करते थे कि, मुह आखाने के कारण प्राण जाने का भय हो जाता था । किन्तु अब समय देख कर व्यवहार करते, तथा घल देख कर परिमाण स्थिर करके सावधानी से देते हैं ।

जब रोगी आतंक के कारण दुर्बल हो और पारा खिलाना उचित समझे तो बाइक्लोराइड आफ सरकरी को अत्यन्त कम परिमाण में अनन्त सुप्त के वा सिनकोना के काढ़े के साथ दें । और जब देखते हैं कि रोगी बलवान हो तो ठूँ पिल, कुछ अफीम मिला कर, पारे का न्यून प्रभाव होने की इच्छा से देते हैं । किन्तु जब खिलाना बिनी शांति से उचित न हो, अर्थात् इस के देने से घनन वा दस्त आदि हो जायें, तो खिलाने की अपेक्षा पारे के सरहन की काँख वा आँप में घालिश कराने से भी वही फल प्राप्त मिलता है । कभी भाप वा अन्यान्य विधि से भी इसे शरीर में पहुँचाते हैं । किन्तु सब समय जब शरीर पर कुमियाँ हो इस विधि को यों करते हैं कि रोगी को मोढ़े वा कुरसी पर मगा देठा कर नीचे आग में छाल की हुई एक इट रख दें । और रोगी को चारों ओर कम्बल या शवार्द से ढक दें, केवल मुँह

५४६ छूतवाले रोग और उनसे बचने का उपाय ।

खुला रहे, उपरान्त लाल की हुई ईंट पर कैमिनिट आधा ड्राम या सिगरफ का पूर्ण एक ड्राम छिड़क दें। दूध या पन्ध्रह मिनिट तक भाप पहुंचाए। यदि रोगी को पसीने आदि से सूछा जा जाय तो सुरत डका डकाया कुरसी से पलंग पर कर दें और सूछा की सचित चिकित्सा करें। इस विधि के करने उपरान्त रोगी को वायु से बचाना चाहिए, जिस से कंण अच्छी तरह शरीर में प्रवेश हो जायें। इस के लिये उत्तम समय शाम का है। यह विधि हर दूसरे या तीसरे दिन करते रहें जब तक कि पारे का असर न हो।

बाजे घेद्य ई हिस्सा बाइकोराइड आफ सरकारी का दस बूंद जल में घोळ कर चमड़े के नीचे छोटी पिचकारी द्वारा प्रवेश करते हैं, बाजे पारा देने के उपरान्त आयोडाइन (जैसा किना पारे की चिकित्सा में वर्णन है) दिया करते हैं। क्या न रहे कि गर्म काल में रोगी को शीत आदि से बचायें; अस्तु कलानेल का कुरता पहिना दें। पध्य पांचक जैसे धूय शीरसा अहा आदि दें। सदिरा को देना अत्यन्त हानिकारक है।

(२) बिना पारे की चिकित्सा। इस में पारे का उपयोग बिल्कुल नहीं है, किन्तु रक्तशोधक औषधियाँ उपयोग में लाई जाती हैं। आयोडाइड आफ पुटासियम मुख्य औषधि है। इसे ससवा (सारसा परेला) या अनन्त मूल के काड़े के साथ देते हैं; इस से न केवल रक्त शुद्ध होता है किन्तु यह दर्द आदि विकारों को भी दूर करता है। आइडिन के प्रिपरेशन, ओभाइड आफ पुटास, आयोडाइड आफ आइरन का प्रयोजन, निर्मलता में मछली का तेल, कुचले के

प्रिपरेशन आदि, दें । यदि दस्तों की आवश्यकता हो तो कभी २ समयानुसार दें । आइडीन के प्रिपरेशनों के व्यवहार से सुकान हो जाता है इस से कार्बोनेट आफ एमोनिया तथा साल मिर्च का टिकषर (Tr. capseei) आदि मिलाकर दें, स्वा-स्थ्याप्त्य के नियमों का ध्यान रखें ।

एक उत्तम नुसखा इस रोग का सर्वसाधारणार्थ यहाँ लिखते हैं ।

पुटासी आयोडाइड ५ ग्रैन

लाइकर हैड्रास परक्लोराइड ६ ग्राम

टिकषर केपसकिन

डिकाइसन सारसीपरेला १ औंस

ऐसी चार खुराक दिन में ३ या ४ बार लें ।

किन्तु ध्यान रहे कि इस रोग में गाना प्रकार की आधि-ठपाधि मनुष्य को चेरे रहती हैं, इस से बिना योग्य डाक्टर के परामर्श के चिकित्सा करना ठगर्ष है ।

नोट—यदि कोई स्त्री किसी ऐसे पुरुष से जिसे उपदश हो गर्भिणी हो जावे तो गर्भ के समय भी चिकित्सा पारे या बिना पारे की करनी चाहिए जिससे मा बच्चे दोनों को लाभ हो । ऐसे समय में चिकित्सा न करना चाहिए यह बात साधारण लोगों के जी में लनी है किन्तु यह उनकी भूल है ।

आतिथक के परित्याग से उत्पन्न स्थानिक तथा आन्तरिक गाना रोग हैं, यदि मद्य को यहाँ वर्णन करें तो एक बड़ा पोषा लैम्पार हो इससे उन्हें त्यागना ही उचित जान पड़ता है, तो भी शिशु उपदश—इन्फेन्टाइल सिफलिस जो पैतृक उपदश के नाम से मशहूर है—का उल्लेख आवश्यक है ।

CONTAGIOUS AND INFECTIOUS DISEASES WHICH SPREAD THROUGH FLIES मक्खियों द्वारा फैलने वाले छूतवाले रोग



कई एक छूत वाले रोगों की फैलाने वाली मक्खियाँ हैं। मक्खियाँ कई प्रकार की होती हैं। एक प्रकार की जहरीली मक्खी दक्षिण अफ्रीका के उगंडा आदि देशों में पाई जाती है जो निद्रा रोग (Sleeping Disease) को फैलाती है। निद्रा रोग के विष को इस प्रकार की मक्खियाँ अपने डंक द्वारा मनुष्यों के शरीर में पहुँचाती हैं। शरीर के जिस स्थान पर इस प्रकार की मक्खी काटती है, उस स्थान पर मच्छड़ के काटने के समान दर्दोड़ा पड़ जाता है। काटने के स्थान पर कुछ सूजन और अलन जान पड़ती है। आठ दस दिन के पीछे विष का असर कठ की गिलटियों Lymphatic Glands पर होता है, जिस से कठ की गिलटियाँ सूज जाती हैं। गिलटियों के सूजते ही मस्तक में एक प्रकार का विकार उत्पन्न हो जाता है। जिससे रोगी अचेत होकर सो जाता है। और सोते ही कुछ घन्टों वा दिवसों के पीछे मर जाता है। यह रोग बदरों में मनुष्यों के समान ही होता है। जगली चौपाए ही प्रथम प्रथम इस रोग में ग्रसित होते हैं। मगवान् ऐसी जहरीली मक्खियों और उनसे फैलनेवाले अद्भुत निद्रा रोग को दक्षिण अफ्रीका ही में रखे।

भारतवर्ष में भी कई प्रकार की मक्खियाँ होती हैं। एक प्रकार की मक्खी जो रूपमें साधारण मक्खियों के समान किंतु आकार में इनसे चौगुनी होती है, “कीटोत्पादक” होती

हैं। गिन घाघो पर ऐनी नक्खियां बैठ जाती हैं, उनमें तुरन्त कीड़े उत्पन्न हो जाते हैं। यदि इन नक्खियों के उदर भाग पर दृष्टि डालें तो उनके पेट में सूत की भांति असंख्य कीड़ों के अंडे दिखलाई देंगे। ये नक्खियां प्रायः पशुओं के घावों पर बहुत शीघ्र बैठती हैं। कभी २ अनुप्यो के घावों पर भी बैठ जाती हैं। इन के बैठते ही तुरन्त अंडे, जो देखने में सवेत सूत की भांति और नाप में $\frac{1}{2}$ से $\frac{1}{4}$ इंच के लम्बे होते हैं घावों में दिखलाई पड़ने लगते हैं। ये अंडे कुछ घंटों में फूटकर जीव धारी कीड़े बन जाते हैं। एक ही दो दिन में ये कीड़े $\frac{1}{2}$ से $\frac{3}{4}$ इंच के लगभग लम्बे और मोटाई में मल, वा पमारी के कीड़ों के समान हो जाते हैं।

साधारण (घरेलू) नक्खियां जो रात दिन हम लोगो को प्रत्येक स्थानों में सताती हैं, कम अप्रसन्न नहीं होतीं। सब प्रकार का हैजा, शीछला, मीन आदि कठिन रोगों को ये नक्खियां सहज ही एक से दूसरे में फैला देती हैं। इन नक्खियों को यदि "रोगरसा" कहें तो अनुचित न होगा। किस प्रकार इन से छूत वाले रोग फैलते हैं मुनिष्ट।

छूत वाले रोग प्रायः तीन प्रकार से फैलते हैं। (१) वायु द्वारा (२) स्पर्श द्वारा, (३) जल वा खाने वाली वस्तुओं द्वारा। प्रथम को छेद कर बाकी दोनों प्रकार के छूत वाले रोग इन घरेलू नक्खियों द्वारा सहज ही में फैल सकते हैं। हैजा, जो केवल जल वा भोजन के विकार से ही उत्पन्न होता है, इन नक्खियों द्वारा शीघ्र फैल जाता है। हैजा प्रायः गर्मियों के आदि वा अन्त में होता है, और गर्मियों के आदि और अन्त में नक्खियां भी अधिक उत्पन्न होती

हैं। हेजे के रोगी के मल या वमन पर ये मक्खियां बैठ कर, हलवाईयां, अहीरो, नानवाइयां, सम्बोलिएं, और मेवाफरोशी आदि की दुकानों में पहुंचती हैं, और उनसे खाद्य पदार्थों को विषयुक्त कर देती हैं, जिन्हें कि मनुष्य प्रति दिन बाजारों से खरीद कर खाते पीते हैं। अब जिन मनुष्यों ने उन खाद्य पदार्थों को, जिन पर कि हेजे के वमन तथा दस्तों पर बैठी हुई मक्खियों ने बैठ कर घट्ट किया था, खाया, वे तुरन्त ही हेजे में ग्रसित हुए। मान लिये कि विष का प्रभाव (असर) प्रत्येक पुरुषों में एकसा नहीं पाया जाना, तो भी सैकड़े पीछे साठ तो अवश्य रोगी हो सकते हैं। यह भी स्मरण रखना चाहिए कि हेजे का विष रोगी के मल तथा वमन में ही रहता है। और ऐसी प्रजित मक्खियों पर मक्खियां प्रायः भिनभिनायाही करती हैं। इससे सिद्ध हुआ कि हेजे का विष जितना शीघ्र मक्खियों द्वारा फैल सकता है उतना और किसी प्रकार से नहीं।

इसी प्रकार शीतला रोग की भी व्यवस्था जानिए। यह रोग तीनों प्रकार से उत्पन्न होता है। जहां रोगी के शरीर पर बैठकर मक्खियां दूसरे निरोगी मनुष्य के शरीर पर बैठें कि वह तुरन्त रोगग्रसित हुआ। जल भोजन तथा दूध आदि में विषयुक्त मक्खियों के गिरने और उन पदार्थों से निरोगी मनुष्यों के उपग्रहण में जाने से भी शीतला रोग फैल जाता है। शीतला के दानों या दिउलियों का विष मक्खियों द्वारा दूसरे मनुष्यों के शरीरों पर लगाने से शीतला निकल आती है। प्रायः बच्चों को मक्खियां अधिक घेरे रहती हैं, शायद इसी से बच्चों को शीतला अधिक निकलती है।

कल्पना कीजिए कि एक मनुष्य को उपदंश (गर्मी-जाति-शक) का घाव है और दूसरे को साधारण घाव है। यदि कोई मक्खी, जो कि उपदंश के घाव पर प्रथम बैठ चुकी है साधारण घाव पर भी आ बैठे, तो क्या गर्मी का विष उस साधारण घाव द्वारा शरीर में प्रवेश करने से बाज़ आएगा? कदापि नहीं। इसी प्रकार प्रसूत ऊवर की रोगिणी के उस भीने वस्तु पर, जो कि गर्भाशय के जठर वा जोड़ आदि में सने हों, मक्खियाँ बैठ कर किसी निरोगी प्रसूता (ज्या) के शरीर पर आ बैठें, तो क्या वह निरोगी प्रसूता प्रसूत ऊवर के विष से बच सकती है? मेरी समझ में भी नहीं बच सकती। इसी प्रकार सन्निपातिक ऊवर, (टाइफाइड कीवर) मकाल ऊवर, (फोनीन कीवर) लाल ऊवर, (स्कारलेट कीवर) काजा ऊवर, (टाइफस कीवर) पीत ऊवर, (यक्षी कीवर) आदि की छूत भी इन मक्खियों के फैलाने से फैल सकती है। मुँह खादा (एरीसिपलेस्) की छूत तो बहुत शीघ्र इन मक्खियों द्वारा फैल सकती है। ज्वरी (तपेदिक) के कफ का विष भी मनुष्यों के खाने पीने वाली वस्तुओं में यदि मक्खियाँ मिला देती हों तो क्या आश्चर्य है? रोग की छूत को फैलाने में मूँसे तो बदनाम हैं ही, किन्तु मक्खियाँ भी इस इस्तेमाल से नहीं बच सकती। इसी प्रकार कुछ आदि छूत वाले रोगों के विषय में भी समझ लीजिए।

सारांश यह कि ये रोग जो कून के कारण उत्पन्न होते हैं, उन के विष को मनुष्यों में फैलाने वाली यही घरेलू मक्खियाँ जान पहचानती हैं। रोग की छूत मक्खियों के मुख, पंख, तथा हाथ पाख में लग जाती है। जिसे वह घेठ फाट वा गिर

हैं। हेजे के रोगी के मल या घमन पर ये मक्खियाँ बैठ कर, डलवाइयों, अहीरो, नामवाइयों, तम्बोछियों, और सेवाकरोशों आदिकी दुकानों में पहुँचती हैं, और उनर बाद पदार्थों को विषयुक्त कर देती हैं, जिन्हें कि मनुष्य प्रति दिन बाजारों से खरीद कर खाते पीते हैं। इसलिये कि मनुष्यों ने उन खाद्य पदार्थों को, जिन पर कि हेजे के बीज तथा दस्तों पर बैठी हुई मक्खियों ने बैठ कर घट किया था, खाया, वे तुरन्त ही हेजे में ग्रसित हुए। ज्ञान सिद्ध कि विष का प्रभाव (असर) प्रत्येक पुरुषों में एकसा न हो पाया जाना, तो भी सँभले पीछे साठ तो अवश्य रोगी हो सकते हैं। यह भी स्मरण रखना चाहिए कि हेजे का बीज रोगी के मल तथा घमन में ही रहता है। और ऐसी घृणि अस्तुओं पर मक्खियाँ प्रायः भिनभिनाया ही करती हैं। इससे सिद्ध हुआ कि हेजे का विष जितना शीघ्र मक्खियों द्वारा फैल सकता है उतना और किसी प्रकार से नहीं।

इसी प्रकार शीतला रोग की भी व्यवस्था जानिए। यह रोग तीनों प्रकार से उत्पन्न होता है। जहाँ रोगी के शरीर पर बैठकर मक्खियाँ दूसरे निरोगी-मनुष्य के शरीर पर बैठें कि वह तुरन्त रोगग्रसित हुआ। जल भोजन तथा दूध आदि में विषयुक्त मक्खियों के गिरने और उन पदार्थों ने निरोगी मनुष्यों के उपग्रहण में जाने से भी शीतला रोग फैल जाता है। शीतला के दानों या दिउलियों का विष मक्खियों द्वारा दूसरे मनुष्यों के शरीरों पर लगाने से शीतला निकल आती है। प्रायः मक्खियों को मक्खियाँ अधिक घेरे रहती हैं। चायद इसी से बर्तों की शीतला अधिक निकलती है।

कहपना कीजिए कि एक मनुष्य को उपदंश (गर्मी-आति-शक) का घाव है और हमारे को साधारण घाव है। यदि कोई मक्खी, जो कि उपदंश के घाव पर प्रथम बैठ चुकी है साधारण घाव पर भी आ बैठे, तो क्या गर्मी का विष उस साधारण घाव द्वारा शरीर में प्रवेश करने से बाज़ आएगा? कदापि नहीं। इसी प्रकार प्रसूत छ्वर की रोगिणी के कम भीगे वस्त्रों पर, जो कि गर्भाशय के जल या लोहू आदि में सने हों, मक्खियाँ बैठ कर किसी निरोगी प्रसूता (जन्मा) के शरीर पर आ बैठें, तो क्या वह निरोगी प्रसूता प्रसूत छ्वर के विष से ग्रस सकती हैं? मेरी समझ में तो नहीं ग्रस सकती। इसी प्रकार मक्खिवातिक छ्वर, (टाइफाइड फीवर) अकाल छ्वर, (फेनीन फीवर) लाल छ्वर, (स्कारलेट फीवर) काला छ्वर, (टाइफस फीवर) पीत छ्वर, (प्लो फीवर) आदि की छूत भी इन मक्खियों के फैलाने से फैल सकती है। कुछ खादा (एरीतिपलेस्) की छूत तो बहुत शीघ्र इन मक्खियों द्वारा फैल सकती है। तपी (तपेदिक) के कफ का विष भी मनुष्यों के जाने भीने वाली वस्तुओं में यदि मक्खियाँ मिला देती हों तो क्या आश्चर्य है? मृग की छूत को फैलाने में नुस्ते तो बदनाम हैं ही, किन्तु मक्खियाँ भी इस इच्छान से नहीं ग्रस सकती। इसी प्रकार कुछ खादि छूत वाले रोगों के विषय में भी समझ लीजिए।

सारांश यह कि ये रोग जो छूत के कारण उत्पन्न होते हैं, उन के विष को मनुष्यों में फैलाने वाली यही घरेलू मक्खियाँ जान पहचानती हैं। रोग की छूत मक्खियों के मुख, पंख, तथा हाथ पादों में लग जाती है। जिसे वह बैठ काट या गिर

५५२ छूतवाले रोग और उनसे बचने का उपाय ।

सर कर फैला देती हैं ।

कहिए पाठक ! इन घरेलू नक़्खियों का ठगाना कैसा प्रयत्न है ? कैसे २ विषम तथा साधारण रोग इन के द्वारा सहन ही में फैल सकते हैं ।

आप कहेंगे कि, वर्तमान समय में पश्चिमीय वैद्यों का यह एक आधुनिक सिद्धान्त ही गया है कि नमस्त रोग जीवों द्वारा उत्पन्न होते हैं । जैसे, मूसे प्लेग फैलाते हैं, मच्छर जाड़ा बुखार, (मेलेरिया) काटने वाली नक़्खियाँ निद्रा रोग (स्लीपिङ्ग डिजीज़) और नाना प्रकार के बीट (बेमी-ली) जो जल और वायु में सूक्ष्म रूप से विद्यमान हैं, नाना प्रकार के रोग उत्पन्न करते हैं, तो अब जीवज्जिवा ही रोगों से बचने का एकमात्र उपाय ठहरा, न कि औषधि ! ऐसी शका प्रत्येक मनुष्य के हृदय में सहज ही उठ सकती है । किन्तु इस बात पर ध्यान देने से, कि यद्यपि विविध जीवों द्वारा नाना प्रकार के रोग मनुष्यों में फैलते हैं, तथापि उनसे बचने के उपाय जीवों की हिंसा नहीं किन्तु और बहुत से सहज, सग्रा सहिष्णु उपाय और औषधियाँ हैं, शका दूर हो सकती है । क्योंकि ईश्वर की सृष्टि में उत्पन्न किसी प्रकार के जीव को, चाहे वह अल्प हो वा अधिक, समूल नष्ट करना मनुष्य की शक्ति के बाहर है । सृष्टि की आदि से अब लो अथात्रादि जिसका पशुओं को सभी मारते आये हैं, किन्तु क्या अथात्रादि का उच्छेदन हो गया ? इसे भी जाने दीजिये, कुत्तों के मरवाने की प्रथा किसने दिना से निकाली गई है, किन्तु उनका व्यवहार नहीं हुआ । कुछ काल से भूतों पर भी इसी प्रकार की आपत्त आई है,

किन्तु ये भी समूह नष्ट न हुए और न होने । आज कल मच्छरों के भी मारने की सलाह हो रही है, किन्तु मेरी समझ में इस में भी शायद ही सफलता हो ।

मैं ऊपर कहे जीवों की हिसा द्वारा उन से उत्पन्न रोगों से बचने के उपाय को समझाता हूँ, परन्तु मेरा यह सिद्धान्त तो है—और यह सिद्धान्त किसी श्रम में “हाफूरी महासभा, बम्बई” ने भी माना है—कि मच्छियों द्वारा छूत वाले रोग अवश्य फैलते हैं किन्तु यह नहीं है कि उन का मारना ही छूत से बचने का उत्तम उपाय है ।

यहाँ यह प्रश्न हो सकता है कि क्या इससे पहिले इस प्रकार मक्खी और मच्छर भारतवर्ष में नहीं थे ? यदि थे तो उस समय इस प्रकार के रोग इन मच्छियों द्वारा क्यों नहीं फैलते थे ? इस का उत्तर यही है कि पहिले भी मक्खी मच्छर ऐसे ही थे जैसे कि अब हैं, परन्तु उस समय के वे सफाई, आचार, विचार, जाहार, विहार, तथा स्वा-स्थ्यबल सम्पन्न पुरुष अब नहीं रहे और न उस समय का सा धन धान्य ही रहा । यही कारण है कि उस समय में पृथ्वी आकाश का सा अंतर आ गया है ।

सब पछो तो हमने वही सारी भूल की जो अपने स्वास्थ्यप्रद “आचार” को तिलाञ्जलि देकर पश्चिमीय रीति का अनुकरण कर लिया, यह सही भूल का फल हम अब भोग रहे हैं । सब तो यह है कि भारतवर्ष का सदाचार एक ऐसा उत्तम तथा सरल उपाय छूतछीं, अथवा रोगों से बचने का था, जैसा दूसरा नहीं । के बल पर पुरुष दीर्घजीवी, बली, स्वस्थ और

५५२ छूतवाले रोग और उनसे बचने का उपाय ।

सर कर कैला देती हैं ।

कहिए पाठक ! इन घरेलू नखिलों का ठपानर कैसा जयद्वार है ? कैसे २ विषम तथा साधारण रोग इन के द्वारा सहज ही में फैल सकते हैं ।

आप कहेंगे कि, वर्तमान समय में पश्चिमीय वैद्यों का यह एक आपुनिक सिद्धान्त हो गया है कि ममस्त रोग जीवों द्वारा उत्पन्न होते हैं । जैसे, मूसे प्लेग फैलाते हैं, मकड़ह जाड़ा बुखार, (मेलेरिया) काटने वाली नखिलियाँ निद्रा रोग (स्लीपिङ्ग डिज़ीज़) और नाना प्रकार के बीट (बेनी-ली) जो जल और वायु में सूक्ष्म रूप से विद्यमान हैं, नाना प्रकार के रोग उत्पन्न करते हैं, तो अब जीवजिमा ही रोगों से बचने का एकमात्र उपाय ठहरा, न कि औषधि । ऐसी शका प्रत्येक घुड़प के हृदय में सहज ही उठ सकती है । किन्तु इस बात पर ध्यान देने से, कि यद्यपि विविध जीवों द्वारा नाना प्रकार के रोग मनुष्यों में फैलते हैं, तथापि उनसे बचने के उपाय जीवों की दृष्टि नहीं किन्तु और बहुत से सहज, तथा अद्विष्टक उपाय और औषधियाँ हैं, शका दूर हो सकती है । क्योंकि ईश्वर की सृष्टि में उत्पन्न किसी प्रकार के जोष को, चाहे वह अस्य हो वा अश्वि, समूह नष्ट करना मनुष्य की शक्ति के बाहर है । सृष्टि की आदि से अब लों ठ्याग्रादि जिसक पशुओं को सभी मारते आये हैं, किन्तु क्या ठ्याग्रवश का उच्छेदन हो गया ? इसे मी जाने दीजिये, कुत्तों के नरवाने की प्रथा कितने दिनों से निकासी गई है, किन्तु उन का वशलोप नहीं हुआ । कुछ काल से मूसे पर भी इसी प्रकार की आफत आई है,

किन्तु ये भी समूल नष्ट न हुए और न होंगे ।-आज कल मच्छुओं के भी मारने की सलाह हो रही है, किन्तु मेरी समझ में इस में भी शायद ही सफलता हो ।

मैं ऊपर कहे जीवों की हिसा द्वारा उन से सत्यक रोगों से बचने के उपाय को समझाना हूँ, परन्तु मेरा यह सिद्धान्त तो है-और यह सिद्धान्त किसीर अर्थ में “हाकृती महासत्ता, धम्बई” ने भी माना है-कि मक्खियों द्वारा छूत वाले रोग अवश्य फैलते हैं किन्तु यह नहीं है कि उन का मारना ही छूत से बचने का उत्तम उपाय है ।

यहाँ यह प्रश्न हो सकता है कि क्या इससे पहिले इस प्रकार मक्खी और मच्छुह मारसर्व में नहीं थे ? यदि थे तो उस समय इस प्रकार के रोग इन मक्खियों द्वारा क्यों नहीं फैलते थे ? इन का उत्तर यही है कि पहिले भी मक्खी मच्छुह ऐसे ही थे जैसे कि अब हैं, परन्तु उस समय के वे सफाई, आचार, विचार, आहार, विहार, तथा स्वास्थ्यबल सम्पन्न पुरुष अब नहीं रहे और न उस समय का सा धन धान्य ही रहा । यही कारण है कि उस समय में पृथ्वी आकाश का सा अन्तर आ गया है ।

सब पूछो तो हमने बड़ी भारी मूल की जो अपने स्वास्थ्यप्रद “आचार” को तिलाङ्गुलि देकर पश्चिमीय रीति का अनुकरण कर लिया, यह उसी मूल का फल हम अब भोग रहे हैं । सब तो यह है कि भारतवर्ष का सदाचार एक ऐसा उत्तम तथा सरल उपाय छूतवाले भयङ्कर रोगों से बचने का था, जैसा दूसरा नहीं । इसी आचार के बल पूर्व पुरुष दीर्घजीवी, बली, तथा भयङ्कर छूतवाले रोगों से रक्षित

५५४' खूनवाले रोग और उनसे बचने का उपाय ।

रहा करते थे । हाय ! ऐसी अनुपम तथा असूक्ष्म आहार खापी औषधि खाकर आज दिन हम लोग कैसे निर्बल तथा रोगी हो बैठे हैं ।

सदाचार से न केवल शरीर की शुद्धि ही होती है किन्तु उससे बल भी बढ़ता है । बल अनुपम के जीवन का एक अलौकिक रत्न है, जगसा यों कह लीजिये कि एक बल ही है जो हजार शारीरिक उत्पातों को सहज ही नष्ट करता है । शारीरिक बल से खून का विष शरीर में प्रवेश करके भी हानि नहीं पहुँचा सकता इस का यथेष्ट प्रमाण मिल चुका है । तब भारतवर्ष की वर्तमान स्थिति तथा अनुपमों का आहार विहार देख कर साधारण से साधारण अनुपम भी अनुमान कर सकता है कि खून वा विषवाले रोग इन भारतवासियों को न घसें तो घसें किन्हीं ? क्योंकि जिन भारतवासियों को कठोर परिश्रम करने पर भी एक बल संचित अल नहीं मिलता, जिनका खाद्य पदार्थ, गो, घनी, बलही, आलस आदि पशुओं के खाने के अन्न हैं, जो एक मुट्ठी चना तथा चुटकी भर मत्तू पर दिवस व्यतीत करते हैं, जिन्हें समय पड़ने पर कौड़ी २ को तरसना पड़ता है, और जिन्हें रोगी होने पर औषधि तथा पथ्य का निर्वाह करना कठिन होता है, ऐसे सब प्रकार से असहाय भारतवासी यदि सदैव रोगी बने रहें तो क्या आश्चर्य है ? एक दिन वह था कि प्रत्येक भारतवासी के गृह भण्डार में इतनी उत्तमोत्तम अन्नराशि संचित रहती थी, कि प्रति दिन अतिथि मत्कारादि में प्रचुर उपय करने पर भी नहीं पड़ती थी । दूध और घी का ये इतना उपयोग

करते थे कि जितना आज इन्हें स्वप्न में भी नहीं प्राप्त है । उस समय इन्हें आचार निर्वाह का यथेष्ट समय था, बल मज्जित करने की सम्पूर्ण सामग्री थी । रोगों से बचने की इन में विमल बुद्धि थी, और रोग की ऐसे पुरुषों से कापा करते थे ।

स्वास्थ्यरक्षण के नियमों का वर्णन ।

स्वास्थ्यरक्षण के सन नियमों का यहां वर्णन करना हम उचित समझते हैं, जिन के कि पालन करने से समुद्र्य भयङ्कर रूतवाले रोगों से बच सकते हैं ।

जल—समुद्र्य के जीवन में जल एक मुख्य तथा उप योगी तरल है । जल का भारतवासियों ने इतना आदर किया कि साक्षात् नारायणरूप मान कर उस की पूजा करने से भी नहीं चूके । दिन में कई बार स्नान, तथा शरीर के प्रधान २ अवयवों के शुद्ध रखने का एक इसी जाति में प्रशसनीय नियम है । पृथ्वी की अन्य किन्हीं जातियों में इतना जल का श्रुति नहीं है जितना कि भारतवासियों के घरे में अब भी विद्यमान है । इनके प्रत्येक धार्मिक कायिक, तथा गार्हस्थ्य, विषयों में जल ही जल दिखलाई पड़ता है । इसी से इनके प्रत्येक प्राचीन नगर प्रायः नदियों के किनारे बसे हैं ।

पीने वाले जल को भारतवासी बड़ी सफाई से रखते थे । शुद्ध मजे हुए चमचमाते पानों में ताज़ा जल छँकर शुद्ध स्थान में रखते थे । अपने पीने खाने के पान, दूसरों की कौन कहे, अपने आत्मजों को भी देना अनुचित समझते थे । अशुद्ध तथा रुच्छिष्ट वस्तु दूसरों को देना वा दूसरों से लेकर पीना खाना बड़ा पाप समझते थे । जिन पानों में

जितनी बार जल पीते थे, उसनी ही बार उन्हें भली भाँति शुद्ध कर लेते थे । जलपात्र बिना हाथ धोये छूते नहीं थे, और न किसी दूसरे को छूने ही देते थे । कोई रोगी जब भी अपने ही हाथों जल भर अपने ही हाथों उसे व्यवहार करते हैं दूसरे को छूने नहीं देते । क्या मजाल जो पनघट के समीप जूठ, शूक, या मल मूत्र कोई करने पावे । नीच जातियों को अपने पीने वाले कुँदों से जल नहीं भरने देते थे, उन के लिये गाँवों या नगरों में पृथक् ही कुँप खुदवा देते थे । पनघट पर एक पीतल ताँबे या लोहे का पात्र जल भरने को सदैव रक्खा रहता था । बीदुओं और जैनों का तो सिद्धांत था कि बिना छाने जल पीना ही नहीं चाहिये । अंगरेजों का भी जल के विषय में उत्तम मत है ।

जल को शुद्ध रखने तथा शुद्ध व्यवहार करने में पूर्व भारतवासी बड़े चतुर थे । इसी से वे निरोगी, बली, तथा मज्झुर खूतवाले रोगों से बचे रहते थे । जल विकार से उत्पन्न होने वाले रोग यथा—डिन्ना, अतिसार, सप्पहजी, और साक्षिपातिक ज्वर (टाइफायड फीवर), आदि, उन्हें बहुत ही कम बताते थे । किन्तु वर्तमान भारतवासियों ने अपने पूर्वजों की रीति नीति अनुचित समझ कर उसे त्याग दिया, और पश्चिमी रीति का पूरा रूप से अनुकरण करने लग गये । जल का उपयोग स्नानादि में कौन कहे ग्रीवादि में भी करना भक्तक जान पड़ने लगा । यहाँ तो कि दूसरे की जूँटी, छूई हुई तथा अस्वाद्य वस्तु खाने पीने ही में एकता का स्वप्न देखने लग गये । स्वर्णोद्वर्णों का विचार उन्हें भूलता जान पड़ने लगा । सोहा बाटर, लेमनेह आदि

गगानल से भी अधिक उपयोगी ठहरे । कुबो वा नदियों के जल का व्यवहार त्याग कर टोंटी का जल—जो कई घातों में उत्तम तथा कई घातों में हानिकर है—बर्तने लग गये । गर्मी, सूझाक, आदि रोगों से ग्रसित कटारों, अहीरों वा घीमरों से जल भरवाने तथा उन के हाथों से पीने खाने लग गये । आलस्य के फदे में पड़ कर स्नान आदि उपयोगी नियम, जिन से कि शरीर की शुद्धि होती थी, त्याग कर “टर्किश थाप” आदि की ओर झुके । जल के विषय में स्वच्छास्वच्छ के विचार का उन्हें समय नहीं रहा । स्त्रियाँ मर्दों की देखादेखी उन से भी अधिक आलसी हो गईं । स्वच्छता किसे कहते हैं और उस से क्या लाभ है, ये अविद्याग्रस्त अवस्था भला क्या जानें । क्योंकि जब पुरुषों ही में इस घात का कुछ विचार नहीं तब स्त्रियों में न रहना कोई आश्चर्य की बात नहीं ।

दिन में दो बार स्नान करने की हिन्दुओं में पुरानी रीति है । शुद्ध निर्मल जल के स्नान से शरीर की शुद्धि के अतिरिक्त बड़ा लाभ यह है कि मक्खियों वा अन्य प्रकार के स्पृश्या द्वारा लगी हुई शरीर की बूझ स्नान से दूर हो जाती है । लोहू से प्राण लेने वाली वायु (कार्बोनिक एसिड गैस) दूर हो कर जीवन देने वाली वायु (आक्सीजन गैस) बढ़ जाती है । स्नान के लिये नदी का जल बहुत ही उत्तम तथा जल बहाने वाला है । किन्तु अरसात में नदियों का जल भी स्नान के योग्य नहीं रहता । कुबो का जल स्नान के लिये सर्वां अतु में लाभदायक है । गहरी वा

टूटे, घिगहे, तथा गदे तालाबों में भूल कर भी स्नान नहीं करना चाहिये । स्नान, श्रुत के अनुकूल तथा अपने शरीर के बल को देख कर करना चाहिये, अर्थात् गर्मी में ठंडे तथा जाड़े में गर्म जल का उपयोग करना चाहिये । यदि बली तथा नीरोगी पुरुष जाड़े में भी ठंडे जल से स्नान करें तो कोई हानि नहीं ।

पीने के लिये, शुद्ध तथा विकाररहित जल शुद्ध किये हुए पात्रों में शुद्ध हाथों द्वारा पीने से शरीर में किसी प्रकार की बाधा या हूष प्रवेश नहीं करने पाती । पीने वाले जल के रखने के स्थान को खूब साफ रखना चाहिये, पात्र जस्ते या तांबे का हो तो बहुत ही उत्तम है । पीतल के पात्र भी जल रखने के बर्तें जाते हैं । मिट्टी के घड़े प्रतिदिन चोये जायें तथा ढक कर रखे जायें तो अच्छा है । पुराने मैले घड़े का जल वा बहुत दिनों का भरा जल विकारयुक्त हो जाता है । जलपात्र पृथ्वी से ऊपर किसी ऐसे शुद्ध स्थान में रखे जायें जहाँ कूड़ा, घूल, वा मच्छड़, मक्खी आदि के गिरने का भय न हो । जल को स्थान पर नीठा, जठा वा अन्य कोई घृणित वस्तु न रहनी चाहिये, क्योंकि घृणित स्थानों ही में मक्खियाँ अधिक इकट्ठी होती हैं । जल जहाँ तक हो सके ताजा पीना चाहिये । पीने के लिए नदी का विशेष कर चारा का जल पीने के लिये सब से उत्तम है । किन्तु मुर्दा आदि बहाने, वा घृणित जल जल आदि के खुलने से नदी का जल भी पीने योग्य नहीं समझा जाता है । बरसात में नदियों का जल न पीना चाहिए । नदी से उतर कर पीने के लिये कुएँ का जल है । कुएँ को चारों ओर से शुद्ध

रखना चाहिये मल भूत्र आदि उस के समीप न बहने पावे इस का पूरा प्रबन्ध रखना चाहिये । कुर्वे की जगल कभी तथा उस में जल बहने के लिये ढाल और नाली होनी चाहिये । कुर्वों के समीप वृक्ष लगाना उस समय महा हानि-कारक है जिस समय कि वन के ऊपर किसी प्रकार की छाया न हो ।

तालाब का पानी पीने के लिये महानिकट है । यदि कहीं तालाब ही है पीने का जल लिया जाता हो तो इस बात का ध्यान रखें कि बर्तन आदि जूटे पात्र उस में न सांछे घोसे जावें और न वस्त्र साफ किये जावें । पीने वाले तालाबों में घस कर स्नान करना भी हानिकारक है । गौ, बैल आदि चौपायों को न्हिलाना, वा मूक, चम आदि का भिनोना भी अनुचित है । घरवासी पानी घुलित स्थानों से बह कर तालाब में न गिरे, इस का पूरा २ प्रबन्ध रखना चाहिये । जल शुद्ध रखने को तालाबों में मछलियां छोड़े और हरि २ पौदे लगावें । क्रीला के पानी का भी ऐसा ही प्रबन्ध करना चाहिये । क्रूरने का पानी स्थिर करके छान लें । यदि हो सके तो बीटा कर उपवहार में लावें ।

उत्तम जल की पहिचान ।

उत्तम निर्विकार जल वही है जिस में कि किसी प्रकार की दुर्गन्धि न हो, जो निर्मल, हलका और पीने में मधुर तथा ठहा हो । यदि छोटे बक्षर किसी कागज पर लिख कर जल में छोड़ें और वह तीन कीट की दूरी वा गहराई में साफ पड़े जावें तो जल के निर्मल होने में किसी प्रकार का सन्देह नहीं होया ।

बिगड़े जल को शुद्ध करने की रीति ।

जल को शुद्ध करने की विविध रीतियाँ हैं । सब से सहाज रीति यह है कि सन्देहयुक्त जल को इतना झोटा दें कि वह खोल सटे, पीछे उसे ठहा करके काम में लाने से किसी प्रकार की हानि नहीं होती । इस रीति से सम्पूर्ण जलविकार दूर हो जाते हैं । इसी से हमारे वैद्यक शास्त्रों में रोगियों को झोटाया हुआ, या छींका हुआ जल देने का नियम है । जहाजों पर भी यही रीति बर्ती जाती है । यह रीति सब स्थानों में सब के करने योग्य है ।

दूसरी रीति जल को शुद्ध करने की यह है कि, बिगड़े हुए जल में “कांडील फलुहू”^१ की कुछ बूंदें डाल दें । इससे जल का विकार नष्ट हो कर जल साफ हो जाता है । कूबों के जल को शुद्ध करने के लिये “परमिगनेट आल्फुटासियम”^२ का व्यवहार करें । इस औषधि को दो चार पाउंड कूबे में छोड़ कर दो दिन तक उस कूबे का जल न पीवें । इस औषधि से जल के सारे विकार दूर हो जाते हैं । इस औषधि को छोटे बालावों में भी छोड़ सकते हैं । जून^३ भी बड़ा लाभदायक पदार्थ है, इस से भी जल शुद्ध हो जाता है ।

तीसरी रीति जल को शुद्ध करने की यह है कि, कोयला,^४ जूना, बालू आदि या फिटकिरी,^५ निर्मली आदि जल में छोड़ दें इन से भी जलविकार दूर हो जाते हैं ।

१ कांडील साहेब के धर्म के नाम से बाजारों में मिलता है ।

२ साल बुकनी भी कह सकते हैं ।

३ जूने द्वारा जल स्वच्छ करने की रीति पुरानी है ।

४ कोयला छूत नाशक भी है ।

५ दोनों केवल मीठे जल को स्वच्छ कर सकते हैं ।

भोजन—भोजन के नियम में जैसी निपुणता, प्रवीणता, तथा अनुभवशीलता भारतीयों ने दिखलाई, वही सृष्टि की किसी जाति ने नहीं । चाहे नवीन रीशनी के लोग हमारे पूर्वजों की चीका, चूल्हा तथा खाद्या- खाद्य वाली रीति की कितनी ही निन्दा करें, और भले ही उन्हें वह उत्तम स्वास्थ्यप्रद तथा बलप्रद प्राचीन नियम एकता का वाचक जघता हो, किन्तु इस में जरा भी सन्देह नहीं कि खाद्याखाद्य विषय में पूर्वजों की पुरानी रीति बड़ी ही उत्तम तथा स्वास्थ्यप्रद थी, जिसकी प्रशंसा विदेशी तथा विरोधी भी मुक्कठ से करने लग गए हैं । हमारे पूर्वजों की खान पान वाली रीति भले ही किसी को दुरी जंचती हो परन्तु हमें तो उससे महान् लाभ जान पड़ता है । सब से बड़ा लाभ तो यही है कि झुमाझुव तथा खान पान से उत्पन्न होनेवाले भयङ्कर शारीरिक उत्पात इस पुरानी रीति के बर्ताव से कोसा दूर रहते हैं ।

स्वास्थ्य से बढ कर ससार में दूसरा सुख नहीं । तब हम सुख के सप्रद करने का सहज उपाय “सदाचार” है यह हम ऊपर कह आए हैं । हम यह भी ऊपर वर्णन कर आए हैं कि खाने पीने वाली वस्तुओं की पर शरीर का स्वास्थ्य निर्भर है, और यह भी बतला आए हैं कि इन्हीं के द्वारा बड़े रूख्त वाले रोग प्राणियों में फैल जाते हैं । अस्तु इनका सुदृ उपयोग ही समुध्य भाव के लिए हितकर है ।

उत्तम, पाचक, बलदायक, तथा स्वादिष्ट अन्न ही हमारे पूर्वजों का खाद्य अन्न था । वे अन्न को कर्षे वार सुदृ जल से चोकर सुदृ जल में बड़ी सुदृता से पकाते थे ।

५६२ छूतघाटे रोग और उनसे बचने का उपाय ।

रसोईघर को जितना शुद्ध भारतवासी रखना जानते हैं उतना पूष्पी की कोई जाति नहीं जानती । पूष्पालय से कहीं बढ़कर इनका पाकालय शुद्ध होता है । चौके को प्रति दिन गोबर मिट्टी द्वारा घिना लीये पोते ये भारत-वासी कभी भोजन नहीं बनाते थे । चौके में शुद्ध रेशमी^१ वस्त्र पहिर कर तब पाक बनाते थे । चौके में अन्य किसी पुरुष की, चाहे वह आत्मज ही क्यों न हो, परछाही भी नहीं पड़ने देते थे । यदि किसी कार्यवश उन्हें चौके से बाहर जाना पड़ता था तो फिर बिना हाथ पाव धोए और वस्त्र बदले चौके में नहीं जाते थे । यदि अकस्मात् कौआ वा नकली उनके पाक को श्रुत कर देते तो वे उस पाक को स्पर्श तक नहीं करते थे । भारत वासी प्रायः स्वयं पाकी^२ थे । कुछ लोगों का तो यह विचार था कि स्त्रियों से भोजन न बनवाना ही उत्तम है । स्त्रियाँ भी उस समय की सही आचारिणी होती थीं । पुरुषों से भी बड़ाबड़ा आचार उन में था जिसका उदाहरण भारतवर्ष के किमीर जाति^३ की स्त्रियों में अब भी विद्यमान है । नीचों, मली-नो, आशीचियों, अनाचारियों और रोगियों के हाथ का अन्न, लज्जप्रदा और कोई अस्य पदार्थ भूल कर भी नहीं ग्रहण करते थे । प्रत्येक बातों में “पाप २” चिन्ताकर अपना स्वास्थ्यप्रद आचार बनाए रखते थे । इनके शुद्ध चौको में

१ महाराष्ट्र, तैलङ्ग आदि देशों में यह प्रथा अभी भी विदित है ।

२ मुक्त प्रदेश तथा बिहार में अधिक मिलेगे ।

३ महाराष्ट्र आदि देशों की स्त्रियाँ प्रायः उदाचारिणी दुर्भी जाती हैं ।

मक्खियां झूलकर भी नहीं जाती थीं। इसका कारण यह जान पड़ता है कि मक्खियां प्रायः उन्हीं स्थानों में अधिक जमा होती हैं जो स्थान कि नाम आदि मछीन वस्तुओं से भ्रष्ट रहता है। पुरुषों के भोजन करते समय स्त्रियों का पखा झूलना मक्खियों से बचने की ही रीति जान पड़ती है। बाजार, की घुरी, मिठाई आदि भक्ष्य पदार्थों का न खाना पीना छूतवाले लोगों से बचने का क्या ही प्रयत्न प्रमाण है।

फलों को छील तथा चोकर खाना भारतवासी ही जानते थे। आजकल की भांति चष्ट फूँजड़े उस समय नहीं थे और न ऐसे रोगी, मछीन, गंदे इलवाई आदि खाद्य पदार्थ विक्रेता थे। क्रेता विक्रेता दोनों ही तन मन से शुद्ध रहते थे। और वे अपने २ भक्ष्य पदार्थों को भी शुद्ध रखते थे। इस समय का सा दूध जिस में करोड़ों मक्खियां गिरती नरती रहती हैं, उस समय नहीं था। पड़िले धाना रों से दूध को खरीदने की किसी की आवश्यकता नहीं पड़ती थी। प्रत्येक गृहस्थ के घर में एक दो गी बधी रहती थीं। गोपाल भी इस समय के से स्वार्थी उस समय नहीं थे। गौर्खे भी हरी २ दूध तथा जल खाकर उत्तम अमृत के समान दूध देती थीं। आजकल की भांति मल, तथा सूखा चरकड़ा खाकर सूखा चारहीन दूध नहीं देती थीं। उस समय दूध “रस” माना जाता था और रस के समान उसकी रक्षा तथा अमृत के समान ही पान होता था। आजकल का बाजार का दूध रोग का घर है। गोपालों की असावधानी से लाये

१ उत्तर भारत और कुछ बिहार प्रान्त में अब भी बाजारों की वस्तु नहीं बूते हैं।

जहरीली मक्खियां दूध में गिर सर कर दूध को रस के स्थान में घिब बना देती हैं । जिसके कारण किसी २ को अतिमार, किसी २ को सप्रवृणी और किसी किसी को हैजा आदि भयङ्कर छूत वाले रोग हो जाते हैं । घी भी इस समय का सा अमल्यनिश्चित उस समय नहीं था । उस समय घी तत्वों का गुरु माना जाता था, घी के बिना पाक की शुद्धि नहीं समझते थे । आज दिन घी सेंकड़े पीछे दूध को भी निलना कठिन है ।

ऊपर कहे हुए आचार को कुछ तो समय ने बिगाड़ा है और कुछ भारतवासियों की भूल ने । समय के अनुसार कहना पड़ेगा कि उत्तम अन्न, दूध, घी, यदि पदार्थों के सप्रवृत्त करने में इस समय सेंकड़े पीछे ८० भारतवासी लाचार हैं । यह ऊपर वर्णन हो चुका है कि भारतवासी इस समय एक २ कौड़ी को मोहताऊ हैं । अतः उन पर उत्तमोत्तम पदार्थ के न भक्षण करने का दोष कोई भी नहीं लगा सकता । रहा स्पर्शस्पर्श तथा साद्यसाद्य का ऋण, सो साद्यासाद्य में भी नीकरी पेशा वाले सम्भव हैं कि लाचारी प्रगट करें । किन्तु उनकी लाचारी मानी नहीं जा सकती । क्योंकि नीकरी कर के भी वे अप आचार का निर्वाह माली मांति कर सकते हैं । क्या वे अपना पाकालय स्वयं साफ नहीं रख सकते ? क्या वे अपने पाक को अपने हाथों तैयार करने में असमर्थ हैं ? क्या वे अपनी स्त्री को पूर्ववत् आचारिणी नहीं बना सकते ? क्या वे अहा, विचकुट और बाजार की पूरी, मिठाई, दूध, आदि नहीं छोड़ सकते ? क्या वे रोगियों, नौचों, अशुद्धों के स्पर्शस्पर्श से नहीं बच सकते ? अवश्य बच सकते हैं ।

अन्यान्य ग्रहस्थियों को (भिक्षुकों को छोड़ कर) तो उपरोक्त आचार का निर्वाह करना कुछ भी कठिन नहीं है ।

पुराने लोगों की चौका चूल्हा तथा छूमाछूत वाली रीति बहुत दिनों से अनुभव से बड़े २ अनुभवी सहर्षियों द्वारा निकाली गई थी । जिसका मूल सद्देश्य यही था कि स्वास्थ्य में किसी प्रकार की बाधा न उपस्थित हो और वे मयङ्कर रोग को छूमाछूत, मोलन, तथा जल, आदि से उत्पन्न होते हैं निकट न आने पावें । इन्हीं मयङ्कर छूत रोगों के बचाव के लिए ही वे अन्य पुरुषों के स्पर्श तथा दूसरे के हाथ का जल, मोलन आदि छाद्य पदार्थ नहीं ग्रहण करते थे । इन्हीं साध्यात्मिक रोगों से बचने ही के लिए वे अपना मोलन अपने हाथों बनाते थे, अपने पीने का जल अपने हाथों भरते थे । न किसी का भस्त्र छूते थे और न दूसरे के पात्र का जल ही ग्रहण करते थे । हुक्का चिलम वाले न अपना हुक्का वा चिलम दूसरों को देते और न दूसरों का लेते थे । वे न अपना वस्त्र आदि दूसरों को देते न दूसरों का कमी मूल कर पहिरते थे । बाजार के पृथिव तथा नक्षत्रियों आदि द्वारा खट्ट खाद्यान्नाद्य पदार्थ न यह में लाते और न दूसरों का लाने देते थे । यह को भी बहुत साफ रखते थे । कच्चे नकान प्रतिदिन लीपे पोते जाते थे, और पक्के जल से धोए जाते थे । इन्हीं बातों से वे सदा नीरींगी और बली बने रहते थे, मयङ्कर बवाइ छूत वाले रोग उन के ऐसे अतर्क से भय खाया करते थे । उनका ऐसा उत्तम तथा अकटक मार्ग छोड़ कर ही आज कल हम लोग मयावनी मूलके बलमें फस कर निर्बल रोगी तथा दीन हो कर जीवन बिता रहे हैं ।

वायु—वायु शुद्ध तथा समयानुकूल सेवन करना चाहिए। बिगड़ी हुई वायु में रहना हानिकारक है। शुद्ध वायु से रक्त दोष दूर होता है। जहाँ की वायु बिगड़ी हो और वायु दोष से मनुष्य रोगी हो वह स्थान तुरत स्थान कर शुद्ध वायु वाले स्थान में चले जाना चाहिए। अग्नित पदार्थों के जलाने से वायु शुद्ध रहती है यथा, चदन, कपूर, लोधान, धूप आदि की घूनी वायु शुद्धि के लिए उत्तम हैं।

किन किन बातों से वायु दूषित होती है।

किसी कमरे में बहुत से मनुष्यों के जमा होने से उस स्थान की वायु दूषित हो जाती है और वायुद्वारा आक्रमण करने वाले छूतवाले रोग भी ऐसे ही स्थानों में उत्पन्न होते हैं। इसके अतिरिक्त पुष्पा आदि पीने और धूँआ आदि के होने से भी वायु दूषित हो जाती है। भले तनाशों वा पियेटरों में भी बहुत से मनुष्य इकट्ठा होते हैं अतः वहाँ की भी वायु बिगड़ जाती है। कलों कारखानों तथा खानों की वायु भी दूषित रहती है। कूड़ा, मैला, वा पनारों आदि की दुर्गंधों से भी वायु बिगड़ जाती है।

दूषित वायु की परीक्षा।

वायु में एक प्रकार का विष जिसे कार्बोनिक् एसिड गैस (प्राण हर्ता वा प्राणनाशक वायु) कहते हैं, जो १००० हिस्से में एक हिस्से का भाग होता है, पाया जाता है। दूसरा पदार्थ जिसे आक्सीजन गैस (प्राणप्रद जीवन दाता वायु) कहते हैं पाया जाता है। पहिला मनुष्यों को विष किन्तु यत्ती को असह्य है। और दूसरा यत्ती को विष और मनुष्यों को असह्य है। यही कारण है कि मनुष्यों के स्वास द्वारा

निकला हुआ “कार्बोनिक एसिड गैस” और वृक्षों से निकला हुआ “आक्सीजन” प्रति दिन लेते देते रहने से मनुष्यों और वृक्षों के स्वास्थ्य में किन्नी प्रकार का गड़बड़ नहीं होता । यदि किसी कारण से दोनों के इस लेन देन में कमी या अधिकता हो जाये तो दोनों के लिए परिणाम मयङ्कर होता है । यही कारण है कि भारतवासी पृथ्वी के समीप वृक्षों का लगाना उत्तम समझते हैं ।

जहाँ “कार्बोनिक एसिड” का भाग हवा में अधिक हुआ कि मनुष्यों के जीवन में विविध बाधाएँ उपस्थित हुईं । जिस स्थान में “कार्बोनिक एसिड गैस” अधिक होगी वहाँ दीपक जलनी नहीं जलेगा । इसकी परीक्षा सानों कुओं या किसी २ तग तथा छेदरी कोठरी में भली भाँति हो सकती है ।

रसायनिक रीति से वायु की शुद्धि ।

बिगड़ी वायु को तीन प्रकार से शुद्ध करते हैं । (१) सूखी चीकों द्वारा (२) द्रव पदार्थों की सहायता से (३) कोयल-पिरो की भाँति से ।

(१) चूना, कोयला, “कोलटार” (जलकचरा) आदि के व्यवहार से वायु शुद्ध करते हैं । पशुओं की अस्थि (हड्डी) का कोयला इस काम के लिए विशेष उपयोगी बतलाते हैं । इसे किसी टोकरी में भरकर या पृथ्वी में फैलाकर वायु शुद्ध करते हैं । किन्तु मेरी समझ में लकड़ी का कोयला खूब थोड़ा पीसकर फैला देने से भी यही लाभ होता है जो पशुओं की हड्डी के कोयले में है । हिन्दुओं में दुर्गोपित वस्तुओं पर राख मिट्टी आदि डालने का प्राचीन नियम है ।

(२) द्रव पदार्थों में कांशीज़ फ्लुइड Condyl fluid तथा क्लोराइड आफ़ ज़िंक Chloride of zinc बहुत ही उत्तम है । इन औषधियों के जल में चादर आदि धरने सिंगा कर फैला देते हैं या घर और दीवारों पर छिड़क देते हैं । मिट्टी गोबर आदि में मिला कर सीपने पोतने से भी बड़ी लाभ होता है जो घोंने और छिड़कने से होता है ।

(३) दवाओं की भाँफ़ से वायु की शुद्धि । दवाओं में सब से अच्छा “क्लोराइन” Chlorine है ।

ओजोन Ozone भी वायुशुद्धि के लिए बड़ी लाभकारी रीति है । ओजोन उत्पन्न करने के लिए तीन भाग तेज गंधक का तेजाब और दो भाग “परमिगनेट आफ़ पुटाश” को मिलाकर उस स्थान में धर-दें, जहाँ की वायु को शुद्ध करना चाहते हैं ।

पहली विधि दुर्गंध आदि दूर करने की, दूसरी विधि रोगियों के कमरों के लिए, और तीसरी विधि छूत वाले रोगों के विष को नष्ट करने के लिए, उत्तम है ।

गृह—गृह जहाँ तक हो खूब हवादार हो, चाहे मझा हो वा पक्का, किन्तु साफ़ हो । पृथ्वी सीधी तथा कोठरिया अंधेरी गुफा के सदृश न हो । घरों के पनाले पड़े और बहाक होने चाहिए । दुर्गंधित जल-पनालों वा हैजा में जमा न होने दें । कूड़ा, करकट, मल आदि घर से दूर, बस्ती से दूर फेंकवाने का प्रयत्न करें । गृह ऊँचा कोठेदार हो, और प्रत्येक कोठरियों में खिड़की ऊरोखा अवश्य होना चाहिये । कच्चे भकाम की पृथ्वी को सप्ताह में दो बार

और दिवारों को प्रति तीसरे मास गोबर तथा मिट्टी से, लीपे और पोते । रेशेई घर खूब साफ हो तथा उसे प्रति दिन छीपना पोतना चाहिए । गी बेल आदि रहनेवाले घर में नहीं रखना चाहिए, उनके लिए घर से अलग स्थान बनावें । पक्के मकानों की गच गर्मियों में प्रतिदिन तथा जाड़े में मास २ में धोना उचित है । दीवारों में चूना तथा कड़ी कियाहों में अलकनरा वर्ण में एक दो बार लगाना बहुत ही उत्तम है । भारतवर्ष में पहिले पाखाने घरों में नहीं होते थे । शीघादि के लिए स्त्री पुरुष दोनों ही छेतों में दूर जाते थे । मुसलमानों के समय में घरों में सहास बनवाने की प्रथा निकली जो बड़ी प्रयावनी तथा हानिकारक है । आज कल अंगरेजों की कृपा से सहास बहुत कम हैं । अधिक कर के ठठाऊ पाखाने ही पाए जाते हैं, अस्तु पाखानों को खूब साफ रहने ही में मगल है । बहाऊ पाखाने प्रति दिन अधिक जल डाल कर और कुछ दुर्गंध नाशक औषधियों को छिड़क कर बहाए जाये । ठठाऊ का ऐसा प्रवच करें कि जल पड़ा न रहने पाये । इस में सूखे दुर्गंधनाशक पदार्थ जैसे राख चूना, कोयला आदि का उपयोग बहुत ही लाभकारी है । रोगियों के लिए घरों में वे कमरे, जो शुद्ध तथा वायुपूर्ण हो किन्तु अन्याय कमरों से पृथक् और पृथक्स्थ में हो, देने चाहियें, जघाओं के लिए भी ऐसा ही कमरा उचित है । छूतवाले रोगियों को अकेले घर में, जहाँ केवल रोगी और कुछ नौकर आदि के सिवाय दूसरे न रहते हो, रखना चाहिए ।

निद्रा—कम से कम ६ घण्टे और अधिक से अधिक

८ घण्टे सोना चाहिए । अधिक जाने या अधिक सोने से मनुष्य रोगी हो जाता है । छूत वाले रोग प्रायः अधिक जागने से ही होते जुने गए हैं । कच्ची नींद में जागना भी हानिकारक है । नींद खुलते ही जल न पीना चाहिए और सूर्योदय से पहिले उठना चाहिए ।

वस्त्र—वस्त्र ऋतुमनुकूल पहिरना चाहिए । बर्षा के फुरते आदि दिन में दो तीन बार बदलना सचित है । पुरुष अपने ये वस्त्र जो वे बाहर निकलने में पहिरते हैं बैठक में या अन्य ऐसे स्थानों में सतारि जहा बालबच्चे आदि न जाते हों । सप्ताह में दो बार पहिरने के कपड़े धुलवाने चाहिये । बच्चों के पहिरने के कपड़े प्रतिदिन धोकर पहिराने चाहिये । पसीने से भीगे या किसी रोगी के स्पर्श किए हुए कपड़ों का धिना धोए व्यवहार में न लावे । यदि कोई छूतवाले रोग फैले हों तो बाहर के कुल कपड़े, जूते, छाते आदि को बाहर ही रक्खें, घर में न ले जावे । स्वयं भी उन्हें फिर धिना शुद्ध किए न व्यवहार करें तो बहुत अच्छा है । भोजन के लिए एक वस्त्र जितने ही साफ तथा शुद्ध व्यवहार किए जावेंगे सतना ही अच्छा है ।

वस्त्रों की छूत दूर करने की विधि ।

वस्त्रों की छूत दो प्रकार से दूर होती है । (१) वस्त्रों को, जो सूती हों, एक ऐसे पात्र में, जो चौड़े मुँह का हो, हाल फर जल के साथ खूब उबाल डालें, पीछे शुद्ध जल से धोकर सुखावें तो छूत आदि का विष वस्त्रों से दूर हो जावेगा । (२) ऊनी वस्त्रों या रम वस्त्रों को जो जल से धोए नहीं जा सकते पास में सुखाने या गंधक आदि की धूनी देने से वे शुद्ध हो जाते हैं ।

परिश्रम-घल मश्विन करने के लिए परिश्रम करना उचित है । शक्ति के अनुसार परिश्रम उत्तम होता है प्रातः-काल यथाशक्ति भ्रमण स्वास्थ्य के लिए विशेष उपकारी है । परिश्रम बनना करना चाहिए जिससे शक्ती न उतपन्न हो, और शोथन पच जाये । मानसिक परिश्रम बहुत न करना चाहिए । शारीरिक परिश्रम ५६ घण्टे स्त्री पुरुष दोनों को करना उचित है । बच्चों का परिश्रम खेल कूद है; अतः छोटे २ बच्चों को अधिक गोद में न रखना चाहिए । बुढ़ापे में अधिक परिश्रम करना आयु नष्ट करता है ।

रीत रस्म तथा प्रकृति-यह विषय बड़ा कठिन है । भारतवर्ष में नाना जातियाँ हैं और उन में नाना प्रकार के नियम भी प्रचलित हैं । किसी की जाति में नास मदिरा वर्जित है तथा किसी जाति में प्रचलित है । किसी सम्प्रदाय में एक चीज पाप्य है तो दूसरे में अपाप्य है । अस्तु यहां कुछ संक्षेप से ये ही बातें लिखी जाती हैं जो स्वास्थ्य के लिए उत्तम हैं ।

१ मांस-इससे लाभ कम तथा हानि अधिक है । प्रथम तो यह कई एक उदर रोगों का उत्पादक है, दूसरे यह मक्खियों का प्रिय आद्य है, अतः छूतवाले रोगों का भी उत्पादक है । घरमें जीवहिसा करके शुद्धता के साथ मक्खियों से बचा कर मांस खाने में दीय नहीं । मांस की अपेक्षा हृहृदियों का रस (यखनी) बहुत पुष्टिकारक है । इसे रोगियों को भी दे सकते हैं ।

२ मदिरा-मदिरा बड़ी हानिकारक है, इससे हृदय मस्तिष्क आदि शरीर के प्रधान अवयव निर्धूल हो जाते हैं,

आमाशय का कार्य शिथिल होता तथा बिगड़ जाता है । आंतों के कार्य में भी शिथिलता आ जाती है । यकृत (जिगर) और गुर्दा के कार्य में भी बाधा उपस्थित होती है । छूत वाले रोगों के बल की बढ़ाने में मदिरा एकही है, रक्त सम्बन्धी दोष भी इससे उत्पन्न होते हैं । अतः इसका सेवन करना अनुप्य साध के लिए अन्यायक है । औषधियों के लिए ब्राह्मी उत्तम है । इससे दुर्बल तथा शक्तिहीन रोगी शीघ्र शक्ति लाभ करते हैं, एक या दो औंस से अधिक एक समय में नहीं देना चाहिए । कठिन रोगियों को चार द्राम से अधिक एक समय में न देनी चाहिए ।

३ अन्य मादक पदार्थ—मादक वस्तुओं का सेवन स्वास्थ्य को नष्ट करता है, इस लिए इन से बचके ही रहना अनुप्य का कर्तव्य है ।

रीति रस्म वाली बात यहां लिखना उपयोगी न जान कर छोड़ दिया गया ।

भविष्यों से बचने का उपाय ।

भविष्यवा सफाई से आप ही दूर रहनी हैं । अस्तु घा, शरीर, तथा उपवहार में आने वाली वस्तुओं की सफाई ही इनसे बचने का उत्तम उपाय है । रसोई घरों में कोई ऐसी चीज़ जो इन्हें अधिक प्रिय है न रखें । दरवाजों पर निलक लागानी चाहिए । पायखाने, पनाले, आदि खूब साफ रखें । बर्तनों को नहलाया करें और उनके कपड़े आदि में सीठा या घुणित वस्तु न लगा रहने दें । घूँप से भविष्यवां बड़ी घबड़ाती हैं । योरप वालों का मत है कि एक कठोरे में कुछ

